वैदिक लोक एवं नक्षत्र

१. सृष्टि क्रम-

अव्यक्त ब्रह्म--हिरण्यगर्भ --आकाश --वायु-- अग्नि -- अप् --- पृथिवी --- ओषधि – अन्न -- पुरुष।

सन्दर्भ-हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम्॥
(ऋक्, १०/१२१/२, अथर्व, ४/२/७, वाज. यजु, १३/४, २३/१, २५/१०, वाज. काण्व सं, २९/३३, तैत्तिरीय सं, ४/१/८/३, ५/५/१/२, मैत्रायणी सं, २/७/१५, ९६/१३, काठक सं, १६/१५, २०/५, शतपथ ब्राह्मण, ७/४/१/१९)

हिरण्यगर्भ (आधुनिक भाषा में प्रथम तेज पुञ्ज जिसके विस्फोट से सृष्टि हुई) पहले हुआ। वह सभी भूतों (५ महाभूत, उसके बाद जीव) का एक पति (निर्माण, पालन करने वाला) था। उसने पृथ्वी तथा आकाश का धारण किया। उस 'क' (कर्त्ता ब्रह्म) देव के लिए हवि देते हैं।

तेज पुञ्ज से सृष्टि क्रम-

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधीभ्यो अन्नः। अन्नात् पुरुषः। (तैत्तिरीय उपनिषद्, २/१/२)

तस्मात् = 'क' या कर्त्ता ब्रह्म से। आत्मनः = भूतों का पति, चेतन पुरुष तत्त्व। पूर्ण विश्व प्रायः खाली है। सबसे कम घनत्व होने के कारण उसे परम व्योम कहा है-ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम (३५), ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् (३९), सहस्राक्षरा परमे व्योमन् (४१)-ऋक् (१/१६४)

गति का आरम्भ ब्रह्माण्ड (गैलेक्सी) निर्माण से हुआ, पूर्ण विश्व सदा स्थिर (अथर्व) है। अतः ब्रह्माण्ड वायु तत्त्व हुआ।

ब्रह्माण्ड के भीतर विरल पदार्थ का प्रसार समुद्र जैसा है। यह 'अप्' (जल तत्त्व) है। इसमें प्रायः मद्य (अलकोहल) भरा हुआ है। सूर्य रूपी विष्णु का यह परम पद है-सूर्यसिद्धान्त की भाषा में इसी सीमा तक सूर्य विन्दु रूप में दीखता है।

यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्त।
य उ त्रिधातु पृथिवीमुत द्यामेको दाधार भुवनानि विश्वा॥४॥
तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति।
उरुक्रम्स्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः॥५॥ (ऋक्, १/१५४/४-५)

आकाश कक्षा सा ज्ञेया कर-व्याप्तिस्तथा रवेः (सूर्य सिद्धान्त, १२/८१)
ख-व्योम-खत्रय-ख-सागर षट्क-नाग व्योमाष्ट-शून्य यम-रूप नगाष्ट चन्द्राः।
(१८, ७१, २०, ८०, ८६, ४०, ००, ०००)
ब्रह्माण्ड सम्पुट परिभ्रमणं समन्तादभ्यन्तरा दिनकरस्य कर-पसाराः॥
(सूर्य सिद्धान्त, १२/९०)

अप् के घनीभूत होने से सूर्य तथा अन्य तारा बने। इनसे ताप, तेज निकलता है, अतः यह अग्नि तत्त्व हुआ।

सूर्य अपने क्षेत्र में ब्रह्माण्ड या आकाशगंगा का पदार्थ संग्रह करता है। ब्रह्माण्ड की तुलना में यह घना पदार्थ सोम या जल तत्त्व है।

एष वै सूर्यो य एष तपति (शतपथ ब्राह्मण, २/६/३/८)
सोमेनादित्या बलिनः, सोमेन पृथिवी महीः।
अप्यो नक्षत्राणामेषां उपस्थे सोम आहितः॥ (ऋक्, १०/८५/२, अथर्व, १४/१/२)

सौर मण्डल में सबसे घना ठोस पदार्थ पृथ्वी ग्रह है। यह भूमि तत्त्व हुआ।

पृथ्वी पर पहले वृक्ष हुए, उनके अन्न से मनुष्य तथा अन्य जीव बने। जिन वनस्पतियों का जीवन फल पकने पर समाप्त हो जाता है, उनको ओषधि कहते हैं।

ओषधयः फलपाकान्ताः (अमरकोष, २/४/६)
यदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमास्ये॥५॥
तमोषधीर्दधिरे गर्बमृत्वियं तमापो अग्निं जनयन्त मातरः।॥६॥
(ऋक्, १०/९१/५-६)

अभी से तीसरे मन्वन्तर (युग) पूर्व में ओषधियों की उत्पत्ति के विषय में वेद में निर्देश है-

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥
(ऋक्, १०/९७/१, वाज. सं, १२/७५, काण्व सं, १३/१६)

२. लोकों का क्रमिक आकार

मनुष्य से पृथ्वी ग्रह, सौरमण्डल, ब्रह्माण्ड, पूर्ण जगत् क्रमशः १-१ कोटि गुणा बड़े हैं।

सन्दर्भ-(१) सौर मण्डल के ग्रहों की उत्पत्ति सूर्य (यः सूयति स सूर्यः) से हुयी है। अतः सूर्य तथा उसका आकाश पिता है। मनुष्य तथा अन्य जीवों के जन्म का स्थान पृथ्वी माता है, जैसे माता के गर्भ में जन्म होता है।

द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता जरामृत्युं कृणुतां संविदानौ। (अथर्व, २/२८/२)
या ते धामानि परमाणि यावमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा। (ऋग्वेद, १०/८१/४)
तिस्रो मातॄस्त्रीन् पितॄन् बिभ्रदेक ऊर्ध्वतस्थौ नेमवग्लापयन्ति।
मन्त्रयन्ते दिवो अमुष्य पृष्ठे विश्वमिदं वाचमविश्वमिन्वाम्॥ (ऋग्वेद, १/१६४/१०)
तिस्रो भूमीर्धारयन् त्रीरुत द्यून्त्रीणि व्रता विदथे अन्तरेषाम्।
ऋतेनादित्या महि वो महित्वं तदर्यमन् वरुण मित्र चारु॥ (ऋग्वेद, २/२७/८)

= आकाश के ३ धाम में जितने सीमाबद्ध (पृथु) पिण्ड हैं वे पृथ्वी (भू) हैं, उनके चारों तरफ फैला आकाश द्यौ (स्वः) हैं। बीच का अन्तरिक्ष भुवः लोक है। भू-स्वः के ३ जोड़े ३ माता-पिता हैं।

रवि चन्द्रमसोर्यावन्मयूखैरवभास्यते। स समुद्र सरिच्छैला पृथिवी तावती स्मृता॥
यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तार परिमण्डलात्।
नभस्तावत्प्रमाणं वै व्यास मण्डलतो द्विज॥ (विष्णु पुराण, २/७/३-४)

= सूर्य चन्द्र से प्रकाशित भाग को पृथ्वी कहा है। दोनों से प्रकाशित पृथ्वी ग्रह प्रथम पृथ्वी है। सूर्य प्रकाश का क्षेत्र सौरमण्डल दूसरी पृथ्वी है जिसमें ग्रह कक्षाओं से बने क्षेत्रों को भी पृथ्वी के द्वीपों जैसा नाम दिया गया है। सूर्य प्रकाश की अन्तिम सीमा ब्रह्माण्ड सूर्यों का समूह है, वह तीसरी पृथ्वी है जिसके केन्द्रीय घूमते चक्र को पृथ्वी जैसा (आकाश) गङ्गा कहते हैं। इन सभी पृथ्वी की तुलना में उनका आकाश उतना ही बड़ा है जितना मनुष्य की तुलना में पृथ्वी ग्रह। भागवत पुराण में इसका आलङ्कारिक संकेत है-एतेन हि दिवो मण्डलमानं तद्विद उपदिशन्ति यथा द्विदलयोर्निष्पावादीनां ते अन्तरेणान्तरिक्षं तदुभयसन्धितम्॥ (भागवत, ५/२१/२)

अर्थात् पृथ्वी और आकाश चना के दो दलों के समान एक जैसे हैं। पृथ्वी में जैसे मनुष्य का स्थान है, वैसे ही आकाश में पृथ्वी। यह तीनों पृथ्वी के लिए ठीक है। इसका अर्थ विष्णु पुराण (२/७/३-४), ब्रह्म पुराण (२१/३-४), कूर्म पुराण (१/२१/३-४) आदि समझने से स्पष्ट होता है।

अर्थात्, मनुष्य, पृथ्वी, सौर मण्डल, ब्रह्माण्ड, पूर्ण विश्व क्रमशः १-१ कोटि गुणा बड़े हैं। पृथ्वी के बाहर १०-१० गुणे बड़े ७ प्रकार की वायु के आवरण हैं-नारद पुराण (१/६०), ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/२२/३४), लिङ्ग पुराण (१/५३/३८), वायु पुराण (५१/३२, ६७/११०)। इनके आधार पर ज्योतिष में भी इनका उल्लेख है-

आवहः प्रवाह उद्वहस्तथा संवहः सुपरिपूर्वकौ वहौ।
सप्तमस्तु पवनः परावहः कीर्तितः कुमरुदावहोऽपरैः॥
(लल्ल, शिष्यधीवृद्धिद तन्त्र, १८/१)

भूवायुरावह इह प्रवहस्तदूर्ध्वः स्यादुद्वहस्तदनु संवह संज्ञकश्च।
अन्यस्ततोऽपि सुवहः परिपूर्वकोऽस्याद् बाह्यः परावह इमे पवनाः प्रसिद्धाः॥
(सिद्धान्त शिरोमणि, गोलाध्याय, मध्यगति वासना, १)

अतः पृथ्वी का आकाश ७ आवरणों के बाद उसका १०^{७} गुणा होगा। यहां सभी पृथ्वी के लिये उनका आकाश १०^{७} गुणा होगा। विष्णु पुराण के ऊपर के उद्धरण (२/७/२२-२४) में ब्रह्माण्ड की सीमा अण्ड-कटाह कही है, उसके ७ आवरण क्रमशः-पय, जल, अग्नि, वायु, आकाश, भूत (अहंकार) महत्तत्व-हैं। कोटि = सीमा, सभी के लिये विश्व की

सीमा १०० लाख गुणा है अतः १०० लाख = कोटि। १ कोटि = २ घात २४, अतः गायत्री छन्द को लोकों की माप कहते हैं।

गायत्रो वै पुरुषः (ऐतरेय ब्राह्मण, ४/३)

या वै सा गायत्र्यासीदियं वै सा पृथिवी (शतपथ ब्राह्मण, १/४/१/३४)

गायत्र्या वै देवा इमान् लोकान् व्याप्नुवन्। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १६/१४/४)

मनुष्य के गात्र का निर्माण गायत्री (२४) वर्ष में होता है। उससे २ घात २४ गुणा पृथ्वी गायत्री है। इसी क्रम से कोटि गुणा सौर मण्डल सावित्री, तथा ब्रह्माण्ड सरस्वती है, जो गायत्री के अगले रूप हैं।

अतः मनुष्य के लिये पृथ्वी माता, सूर्य पिता, ब्रह्माण्ड पितामह तथा स्वयम्भू मण्डल प्रपितामह हुआ।

३. धाम
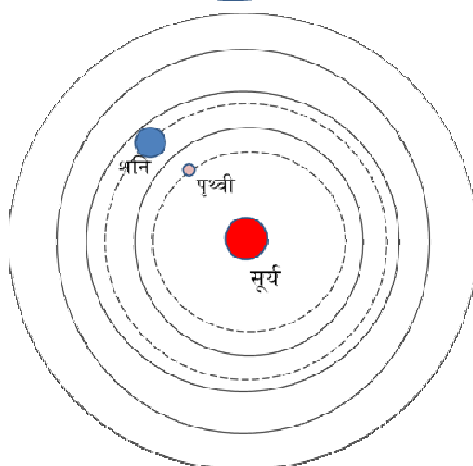
४. सौर मण्डल के क्षेत्र-

(१) विष्णु के ३ पद और परम पद

सूर्य के प्रकाश से जीवन तथा सृष्टि का पालन होता है, अतः इसे विष्णु का भौतिक या प्रत्यक्ष रूप कहा गया है। सूर्य का जो अपना क्षेत्र है, उसमें विष्णु के ३ पद हैं।

(१) ताप क्षेत्र -१०० सूर्य व्यास तक। इसमें तीव्र तेज के कारण अणु खण्डित हो जाते हैं, अतः यह रुद्र है।
घोरो वै रुद्रः। (कौषीतकि ब्राह्मण १६/७)
तद्यदेतं शतशीर्षाणं रुद्रमेतेनाशमयंस्तस्माच्छतशीर्षरुद्र शमनीयं शत शीर्षरुद्र शमनीयं ह वै तच्छतरुद्रियमित्याचक्षते परोऽक्षम्। (शतपथ ब्राह्मण ९/१/१/७) शतयोजने ह वा एष (आदित्यः) इतस्तपति। (कौषीतकि ब्राह्मण, ८/३)
स एष (आदित्यः) एकशतविधस्तस्य रश्मयः शतं विधा एष एवैकशततमो य एष तपति। (शतपथ ब्राह्मण, १०/२/४/३)
(२) तेज क्षेत्र-सूर्य से १००० योजन व्यास तक तेज प्रकाश रहता है। इसे वेद में सहस्राक्ष कहा गया है। विश्व का अक्ष या चक्षु सूर्य है, उसकी १००० गुणा दूरी तक का क्षेत्र सहस्राक्ष होगा। यहां तक का क्षेत्र सूर्य की दृष्टि में है या यहां तक के ग्रह (शनि तक) हमारे ऊपर प्रभाव डालते हैं। अतः फलित ज्योतिष में हम शनि तक ही गणना करते हैं यद्यपि भागवत आदि पुराणों में नेपचून तक के ग्रहों का ही वर्णन है तथा प्लूटो जैसे ६०,०० बालखिल्य कहे गये हैं। गणित में भी शनि तक के ग्रहों के आकर्षण से पृथ्वी कक्षा में विचलन होता है। यहां तक के ग्रहों का चक्र हमको प्रभावित करता है, अतः इसे सूर्य रथ का चक्र कहते हैं (१००० योजन त्रिज्या या ६००० योजन परिधि), इसी ग्रह चक्र से ४३,२०,००० वर्ष का महायुग है।
सहस्रं हैत आदित्यस्य रश्मयः। (जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण, १/४४/५)
सहस्र योजन की दूरी पर शनि का तेज ताम्र अरुण रंग का है-
असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः।
ये चैनं रुद्रा अभितो दिक्षुश्रिताः सहस्रोऽवैषां हेड ईमहे।
(वाजसनेयि संहिता, १६/६)
योजनानां सहस्राणि भास्करस्य रथो नव। (विष्णु पुराण, २/८/२)
= यहां रथ चक्र की त्रिज्या प्रायः १५०० योजन (सूर्य व्यास) है।
(३) प्रकाश क्षेत्र-पृथ्वी के बाहर ३० धाम तक सूर्य का प्रकाश अधिक (ब्रह्माण्ड तुलना में) रहता है, यह सौरमण्डल का द्यु (आकाश) है। १ लाख योजन तक मैत्रेय-मण्डल कहा गया है जो सौरमण्डल की पृथ्वी है तथा पृथ्वी ग्रह से कोटि गुणा बड़ा है। पुराणों में इसे १५७ लाख योजन का सूर्य-रथ (सौर मण्डल का शरीर, रथ = शरीर) कहा है-
सार्धकोटिस्तथा सप्त नियुतान्यधिकानि वै।
योजनानां तु तस्याक्षस्तत्र चक्र प्रतिष्ठितम्॥३॥ (विष्णु पुराण २/८/३)
भूमेर्योजन लक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम्। (विष्णु पुराण, २/७/५)
पृथ्वी व्यास का $२^{३०}$ गुणा = १२,७५६.२८ x $२^{३०}$ कि.मी. = २.८९६ प्रकाश वर्ष।
सूर्य व्यास का १.५७ कोटि गुणा = १३,९२,००० x १.५७ x $१०^{७}$ कि.मी.
= २.१८५ x $१०^{१३}$ कि.मी. = २.३१० प्रकाश वर्ष।
(४) परम पद-सौर मण्डल में सूर्य का प्रभाव अन्य तारों की तुलना में अधिक है, यह उसका अपना घर है, जिसमें विष्णु के ३ पद या साम हैं, अतः विष्णु-सहस्रनाम में उनको त्रिसामा कहा गया है। किन्तु विष्णु का परम-पद तारों का समूह है जहां तक वह विन्दु मात्र दीख सकता है। सूर्य सिद्धान्त में कहा है-यावत् दिनकरस्य करप्रसाराः।
इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूळ्हमस्य पांसुरे॥ (ऋक्, १/२२/१७)
तद् विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥ (ऋक्, १/२२/२०)
कल्पोक्त चन्द्रभगणा गुणिताः शशिकक्षया।
आकाशकक्षा सा ज्ञेया करव्याप्तिस्तथा रवेः॥८१॥
ख व्योम ख-त्रय क-सागर षट्क नाग व्योमाष्ट शून्य यम-रूप नगाष्ट चन्द्राः।
ब्रह्माण्ड सम्पुटपरिभ्रमणं समन्तादभ्यन्तरा दिनकरस्य कर प्रसाराः॥९०॥
(सूर्य सिद्धान्त १२/८१, ९०)
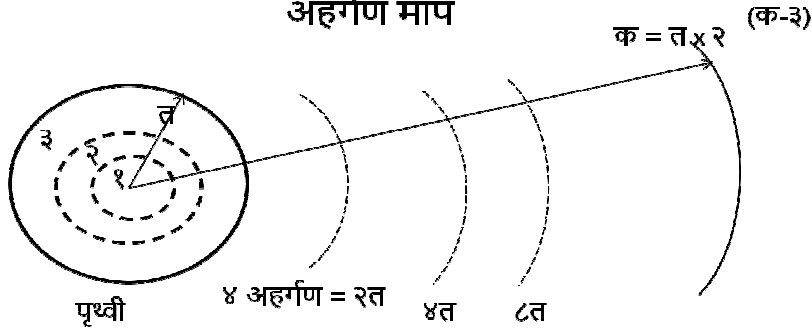
सौर मण्डल - विष्णु के पद
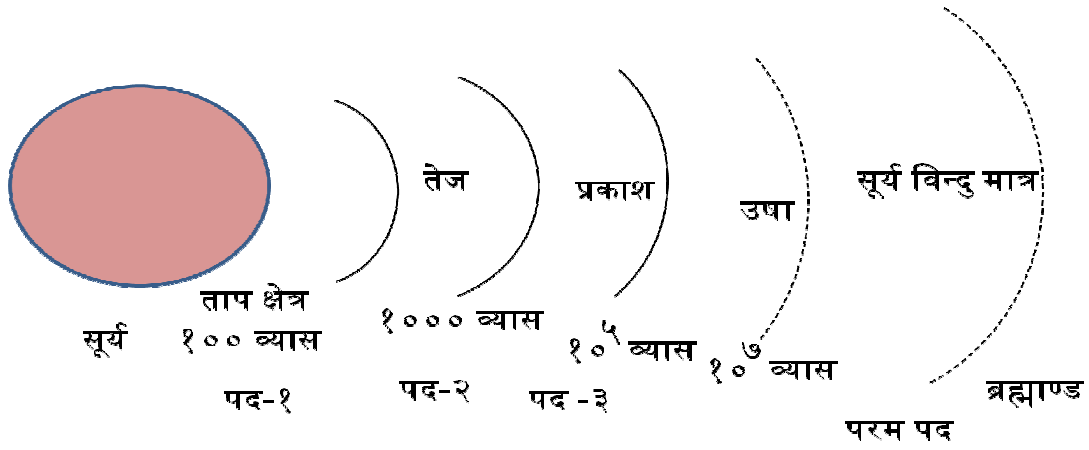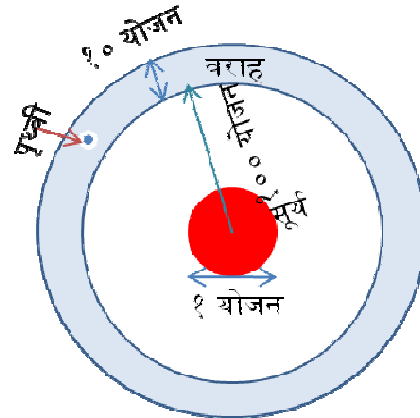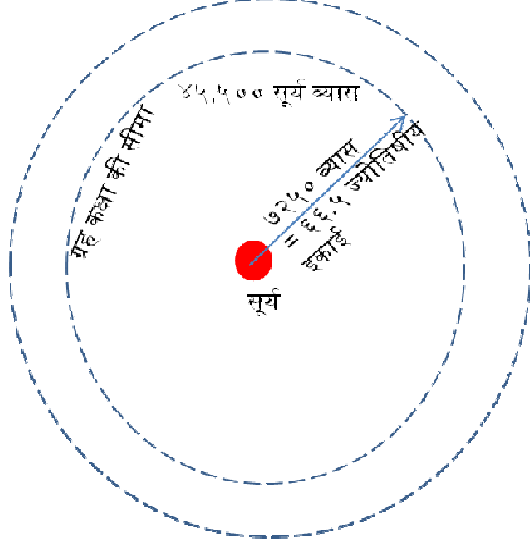
वराह = १०० से ११० योजन
पृथ्वी -सूर्य से १०८-१०९ सूर्य व्यास
यहां, योजन = सूर्य व्यास
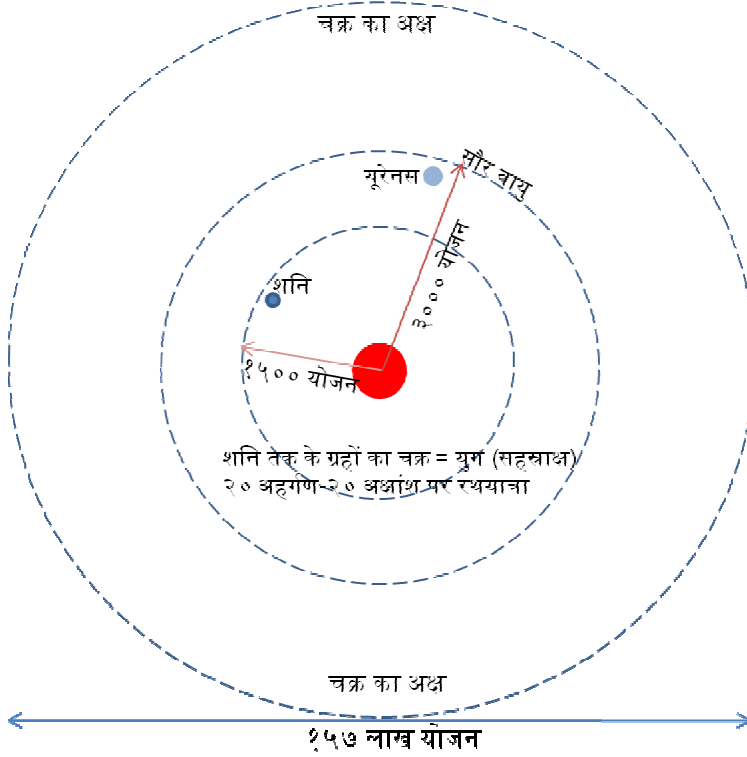
५. सोम क्षेत्र

सोम क्षेत्र ३ हैं-(१) चान्द्र मण्डल का देवसोम या राजसोम, (२) जहां तक सौर वायु जाती है वह पवमान सोम है। इसका केन्द्र बृहस्पति होने से यह बृहस्पति सोम है। (३) ब्रह्माण्ड सीमा तक ब्रह्मणस्पति सोम है।
निकट का सोम क्षेत्र चन्द्र कक्षा का गोल है जिसमें सूर्य का रौद्र तेज कुछ शान्त होने से यहां सृष्टि होती है।

एतद्वै देवसोमं यत् चन्द्रमाः (ऐतरेय ब्राह्मण, ७/११)

सोमो राजा चन्द्रमाः (शतपथ ब्राह्मण, १०/४/२/१)

असौ वै सोमो राजा वोचक्षणश्चन्द्रमाः (कौषीतकि ब्राह्मण, ४/४, ७/१०)

ग्रहों में सबसे बड़ा बृहस्पति है, ग्रह कक्षाओं के बाद प्रायः खाली स्थान है जिसमें केवल इन्द्र या प्रकाश है। शून्य स्थान में भी इन्द्र है, वहां का पदार्थ पवमान सोम कहते हैं बृहस्पति (ग्रह) क्षेत्र में बृहस्पति सोम तथा ब्रह्माण्ड में ब्रह्मणस्पति सोम है। अतः २ भागों में विभाजन इन्द्र बृहस्पति है जिसका शान्ति पाठ में उल्लेख होता है-

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्यर्यमा।

शं नो इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः॥ (ऋग् वेद, १/९०/१)

यहां उरुक्रमः का अर्थ है बड़ा क्रम जिनका अर्थ आकाश में विष्णु के ३ पद (त्रि-विक्रम) या परम-पद भी हो सकते हैं। पृथ्वी पर उरु-क्रमः = सबसे बड़ी चिति (प्रारूप) । सबसे बड़ा निर्माण नगरों का होता है अतः नगर को दक्षिण भारत में उरु या उर कहते हैं-बंगलूर या बंगलूरु, मंगलूर, नेल्लोर, चित्तूर।

अग्निर्वाव पवित्रम्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/३/७/१०)

अयं वायुः पवमानः (शतपथ ब्राह्मण, २/५/१/५)

(वायुः) यः पश्चाद् वाति। पवमान एव भूत्वा पश्चाद् वाति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, २/३/९/६)

तस्मादुत्तरत्: पश्चादयं (वायुः) भूयिष्ठं पवते सवितृप्रसूतो ह्येष एतत् पवते। (ऐतरेय ब्राह्मण, १/७)

सोमो वै पवमानः। (शतपथ ब्राह्मण, २/२/३/२२)

बृहस्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मपतिः। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, २/५/७/४)

वाग् वै बृहती तस्या एष पतिस्तस्माद् बृहस्पतिः।(शतपथ ब्राह्मण, १४/४/१/२२)

(यजु ३८/८) अयं वै बृहस्पतिर्योऽ्यं (वायुः) पवते। (शतपथ ब्राह्मण, १४२/२/१०)

बृहस्पतिर्वै देवानां ब्रह्मा (कौषीतकि ब्राह्मण, ६/१३, शतपथ ब्राह्मण, १/७/४/२१, ४/६/६/७)

६. वषट्कार क्षेत्र

६ ऋतुओं के समान सूर्य की वाक् (क्षेत्र) भी ६ भागों में विभाजित है, जिसे वषट्कार कहते हैं। ३३ अहर्गण (३ पृथ्वी के भीतर + ३० बाहर) के क्षेत्र ३३ स्तोम हैं, इनके प्राण ३३ देवता हैं। पृथ्वी से आरम्भ कर ८ अग्नि, ११ रुद्र (वायु) १२ आदित्य (रवि, तेज) हैं। अग्नि क्षेत्र पृथ्वी का आकर्षण क्षेत्र है, जिसे जम्बूद्वीप भी कहा गया है। रुद्र क्षेत्र वायु है जहां तक सौर वायु (सूर्य से कणों का प्रवाह) पहुंचती है। अग्नि-रुद्र तथा रुद्र-आदित्य के बीच २ अश्विन, नासिक्य, दस्र, या द्यावा-पृथिवी हैं। विष्णु के ३ पद अहर्गण माप में ११, २२, ३३ हैं-जो त्रिष्टुप् छन्द के १, २ ३ पाद हैं-

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।

दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुः साम लक्षणम्॥ (मनुस्मृति, १/२३)

वसन्तेनर्त्तुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुतम्। रथन्तरेण तेजसा। हविरिन्द्रेण वयो दधुः। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, २/६/१९/१)

= अग्नि या वसु क्षेत्र $३^२$ = ९ अहर्गण तक, रथन्तर तेज क्षेत्र है।

त्रिवृच्च त्रिणवश्च राथन्तरौ तावजश्चाश्वश्चान्वसृज्येतां तस्मात्तौ राथन्तरं प्राचीनं प्रधूनुतः। (ताण्ड्य महाबाह्मण १०/२/५)

= $३^२$ =९, ३ x ९ = २७ अहर्गण क्षेत्र २ रथन्तर हैं, पूर्व का अग्नि है, बाद का (२७) अश्व (तेज) है।

त्रैष्टुभ इन्द्रः। (कौषीतकि ब्राह्मण ३/२, २२/७) त्रिष्टुबिन्द्रस्य वज्रः। (ऐतरेय ब्राह्मण २/२)

११, २२, ३३ अहर्गण तक इन्द्र (विकिरण) या उसका वज्र (किरण का दबाव) है। ११ x ४ अक्षरों के इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा छन्द होते हैं। मनुष्य के मेरुदण्ड में ३३ जोड़ होते हैं अतः उसके समरूप कम्पन के लिये प्रार्थना के श्लोक प्रायः इन छन्दों में होते हैं।

वाग्वै वषट्कारो वाग्रेतो रेत एवैतत् सिञ्चति षडित्यृतवो वै षट् तदृतुष्वेवैतद्रेतः सिच्यते तदृतवो रेतः सिक्तमिमाः प्रजनयन्ति तस्मादेवं वषट् करोति। (शतपथ ब्राह्मण, १/७/२/२१)

त्रयस्त्रिंशो वै स्तोमानामधिपति॥ (ताण्ड्य महाब्राह्मण, ६/२/७)

ज्योतिस्त्र्यस्त्रिंशः स्तोमानाम्। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १३/७/२)

अन्तो वै त्रयस्त्रिंशः परमो वै त्रयस्त्रिंश स्तोमानाम्। (ताण्ड्य महाब्राह्मण ३/३/२)

संवत्सरो वाव प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिंशः (वाजसनेयी, १४/२३, शतपथ ब्राह्मण, ८/४/१/२२)

वज्रस्त्रिणवः। (शतपथ ब्राह्मण, ८/४/१/२०, १३/४/४/१, षड्विंश ब्राह्मण, ३/४, ताण्ड्य महाब्राह्मण, ३/१/२)

इमे वै लोकास्त्रिणवः। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, ६/२/३, १९/१०/९)

त्रिवृद्वा अग्निरङ्गारा अर्चिर्धूम इति। (कौषीतकि ब्राह्मण उपनिषद्, २८/५)

तस्मात् त्रिवृत् स्तोमानां मुखम्। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १७/३/२)

त्रिवृत् पञ्चदशः सप्तदश एकविंश एते वै स्तोमानां वीर्यवत्तमाः। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, ६/३/१५)

प्रजापतिर्वै सप्तदशः। (गोपथ उत्तर, २/१३, ५/८, तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१०/६, ताण्ड्य महाब्राह्मण, २/१०/५, १७/९/४, ऐतरेय ब्राह्मण, १/१६, ४/२६)

त्रयस्त्रिंशद्वै देवाः अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्याः प्रजापतिश्च वषट्कारश्चैते देवाः। (ऐतरेय ब्राह्मण, २/१८)

एष एव वषट्कारो य एषः (सूर्यः) तपति। (शतपथ ब्राह्मण, १/७/२/११, ११२/२/५)

प्रभाव क्षेत्र को साम कहते हैं। पृथ्वी के ३ साम हैं-रथन्तर, वैरूप, शक्वर। सूर्य के बृहत्, वैराज, रैवत हैं।

यद्वै रथन्तरं तद् वैरूपं, यद् बृहत् तद् वैराजम्। यद्रथन्तरं तच्छाक्वरम्। यद् बृहत् तद् रैवतम्। (ऐतरेय ब्राह्मण १७/७/१३)। इसके अतिरिक्त ऐतरेय ब्राह्मण (१९/६/१८), तैत्तिरीय ब्राह्मण (१/४/६) भी देखें।

रथन्तर साम के स्तोम (क्षेत्र) हैं-९, १५, १७, २१ (अहर्गण) ।

प्राणो वै त्रिवृत् (३^{३} = ९), अर्धमासः पञ्चदशः (१५ तिथि), संवत्सरः सप्तदश, आदित्य एकविंशं एते वै स्तोमाः। (ताण्ड्य महाब्राह्मण ६/२/२)

१७वां स्तोम सूर्य पिण्ड (संवत्सर-कारक, प्रजापति = पालनकर्त्ता) है-

सप्तदश एव स्तोमो भवति प्रतिष्ठायै प्रजापत्यै। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १२/६/१३)

३३ अहर्गण स्वर्ग (नाक) की सीमा है-तं (त्रयस्त्रिंशं स्तोमं) उ नाक इत्याहुः। (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १०/१/१८)

सौर मण्डल के ३३ अहर्गण क्षेत्रों के प्राण ३३ देवता हैं, संस्कृत में क से ह तक व्यञ्जन वर्ण इनके चिह्न हैं। संस्कृत लिपि चिह्न रूप में देव-नगर है, अतः इसे देव-नागरी कहते हैं। पृथ्वी की सतह (३ अहर्गण) से सौरमण्डल की सीमा तक ३३ अहर्गण के क्षेत्र को ६-६ अहर्गण के अन्तर से ६ क्षेत्रों में बांटा गया है, जो संवत्सर के ६ ऋतु विभाजन जैसे हैं। पृथ्वी पर सूर्य की सापेक्ष परिक्रमा का काल संवत्सर (वर्ष) है, जिसमें २-२ मास की ६ ऋतु हैं। आकाश में सूर्य का क्षेत्र भी संवत्सर है, उसे भी ६ क्षेत्रों में बांटा गया है , जो वषट्-कार है। १-३३ के मध्य में १७ अहर्गण आता है, पृथ्वी केन्द्र से १७ वें अहर्गण (१७-१८ के बीच) सूर्य है, अतः १७ अहर्गण या सूर्य को प्रजापति कहते हैं। सौर क्षेत्र के बाहर ३४ वां अहर्गण भी प्रजापति है, जिससे सौर-मण्डल ही बना है। इन अहर्गण क्षेत्रों की माप (त्रिज्या) इस प्रकार है-

(१) ३ अहर्गण = पृथ्वी की सतह = ६४०० कि.मी.

(२) ९ अहर्गण = पार्थिव गुरुत्व आकर्षण का क्षेत्र-अग्नि मण्डल (८ वसु + १ अश्विन) = २^{६} त्रिज्या = ६४ त्रिज्या। आधुनिक मान से चन्द्र की मध्यम दूरी = ६०.२७ त्रिज्या (५५.५-६३.२५) ।

(३) १५ अहर्गण वराह क्षेत्र या वायु भाग = २^{१२} त्रिज्या = २.६१२५ x १०^{७} कि.मी.

पृत्वी शुक्र कक्षाओं का अन्तर = (१५०-१०८) १०^{६} कि.मी.

अतः वराह भाग = २६.१२५/४२ x १०० = ६२.२%।

इसके मध्य की सूर्य से दूरी = (१५०-१३) १०^{६} कि.मी. = १३७ x १०^{६} कि.मी.।

यह सूर्य व्यास १.३९२ x १०^{६} कि.मी का प्रायः १०० गुणा है। अतः वराह क्षेत्र का मध्य भाग सूर्य से प्रायः १०० सूर्य व्यास की दूरी पर है। १०९ सूर्य व्यास पर पृथ्वी कक्षा है, जो ११० व्यास तक जाती है। अतः वायु पुराण (६/१२) के अनुसार वराह १०० योजन ऊंचा तथा १० योजन विस्तार का है। १५ अहर्गण वराह क्षेत्र होने के कारण १५° उत्तर अक्षांश पर तिरुपति में भू वराह क्षेत्र है।

दश-योजन विस्तीर्णं शतयोजनमुच्छ्रितम्।
नीलमेघप्रतीकाशं मेघस्तनित निःस्वनम्॥ (वायु पुराण, ६/११)

(४) १७ अहर्गण = १०५.५ x १०^{६} कि.मी.। १८ वां अहर्गण इसका २ गुणा २११ x १०^{६} कि.मी है। इनके बीच में १५० x १०^{६} कि.मी पर सूर्य है।

(५) २१ अहर्गण-आदित्य या सूर्य क्षेत्र = २^{१८} x ६,३७८.१४ कि.मी. = १६७२ x १०^{६} कि.मी.

यह पृथ्वी कक्षा से बड़ा है अतः यह माप सूर्य केन्द्रित मानी जायेगी। शनि कक्षा = १४३० x १०^{६} कि.मी. तक सूर्य के रथ का चक्र माना गया है, या सहस्राक्ष (१००० सूर्य व्यास) १.३९२ x १०^{६} कि.मी. तक होगा। इनको यह साम पार करता है, अतः यह रथन्तर साम है। रथ का स्थान २०° उत्तर अक्षांश पर पुरी में रथ यात्रा होती है। इन ३ क्षेत्रों-अग्नि, वायु, रवि-में यज्ञ अर्थात् सृष्टि होती है। अतः मनुस्मृति (१/२३) में इन ३ से यज्ञ रूप वेद की उत्पत्ति कही गयी है।

(६) २७ अहर्गण-मैत्रेय मण्डल = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{२४}$ = १.०७ x $१०^{११}$ कि.मी. = सौर व्यास का ०.७६८ x $१०^{५}$ गुणा। प्रायः २७.५ अहर्गण की सीमा १ लाख सूर्य व्यास होगी। यह पृथ्वी से २४ अहर्गण अधिक होने के कारण माप के अनुसार गायत्री या सृष्टि क्रिया के अनुसार सावित्री है। अतः २४ अक्षर के छन्द गायत्री से लोकों की माप होती है।

(७) ३३ अहर्गण-सौर मण्डल की सीमा। त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{३०}$ = ६.८४८ x $१०^{१२}$ कि.मी. = मध्यम सौर दूरी का ४५,७७८.५८ गुणा। आधुनिक मान के अनुसार ५० से १०० हजार सूर्य दूरी पर ऊर्ट मेघ हैं जो सौरमण्डल का आवरण है। यह छोटे गैस पिण्ड हैं जो अति शीत के कारण ठोस गोले हैं। कुछ धूमकेतु यहां से निकलते हैं जब किसी निकट के तारा द्वारा इनका सन्तुलन बिगड़ जाता है।

(८) ३४ अहर्गण प्रजापति है। यह सौर मण्डल का बाहरी आवरण है जिसे समुद्र कहा गया है। यहां सूर्य का तेज मरे अण्डे के समान है अतः ३३° उत्तर अक्षांश पर काश्मीर में मार्तण्ड (मृत अण्ड) मन्दिर है।

७. त्रिष्टुप् क्षेत्र

इनकी गिनती सौर केन्द्र से है-

(१) ११ अहर्गण = ६,३७८.१४ x $२^{९}$ = १६, ३१, ८०३.४ कि.मी. = सूर्य त्रिज्या x २.३४६ = सूर्य का आभा-मण्डल।

(२) २२ अहर्गण = ६,३७८.१४ x $२^{१९}$ = ६,३४४ x $१०^{६}$ कि.मी. = प्रायः ५२.४ कोटि योजन व्यास (यहां पृथ्वी व्यास का १००० भाग १२.८ कि.मी. का योजन है) । यह पुराण वर्णित चक्राकार पृथ्वी का लोक (प्रकाशित) भाग ५० कोटि योजन का है। इसके भीतर यूरेनस कक्षा है जिसकी त्रिज्या २८७० x $१०^{६}$ कि.मी. है।

(३) ३३ अहर्गण-सौर मण्डल की सीमा। त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{३०}$ = ६.८४८ x $१०^{१२}$ कि.मी.

(४) ४४ अहर्गण के बदले ४३ अहर्गण लेते हैं, क्योंकि माहेश्वर सूत्र में ३३ अक्षर हैं या श्री-यन्त्र में ३३ त्रिभुज हैं। अतः महर्लोक की त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या x ६,३७८.१४ x $२^{४०}$ = ७.०१३ x $१०^{१५}$ कि.मी. = ७४१.२८ प्रकाश वर्ष। यह आकाशगंगा की सर्पाकार भुजा (शेषनाग) की मोटाई है, जिसमें सूर्य स्थित है। इस त्रिज्या के गोले में प्रायः १००० तारा हैं, जो शेषनाग के १००० सिर हैं। इनमें १ सूर्य है जिसमें पृथ्वी बहुत छोटे कण के समान है।

८. आकाशगंगा की माप

आकाशगंगा की माप छन्दोमा स्तोम या गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती से है। पृथ्वी को मापदण्ड लेने पर गायत्री मैत्रेय-मण्डल, त्रिष्टुप् (४४-१ अहर्गण) महर्लोक, जगती (४८+१ अहर्गण) ब्रह्माण्ड है। ४९ मरुत् होने के कारण जगती के ४८ अक्षरों के बदले ४९ अहर्गण लेते हैं।

सप्त सप्त हि मारुता गणाः (७ x ७ = ४९, यजु. १७/८०-८५, ३९/७, शतपथ ब्राह्मण ९/३/१/२५)

ब्रह्माण्ड या आकाशगंगा की त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{४६}$ = ४.४८८ x $१०^{१७}$ कि.मी. = ४७,४४१.६५ प्रकाश वर्ष। आधुनिक अनुमान ४५-५०,००० प्रकाश वर्ष है।

गायत्रमयनं (२४) भवति ब्रह्मवर्चसकामस्य, त्रैष्टुभमयनं (४४) भवति ओजस्कामस्य, जागतमयनं भवति पशुकामस्य (ताण्ड्य महाब्राह्मण, १४/४/१०)

तद्यच्छन्दोभिर्निर्मिताः तस्मात् छन्दोमाः। (कौषीतकि ब्राह्मण, २६/७)

यद् गायत्रे अधि गायत्रमाहितं त्रैष्टुभाद् वा त्रैष्टुभं निरतक्षत।
यद् वा जगत् जगत्याहितं पदं य इत् तद् विदुस्ते अमृतत्वमानशुः॥२३॥
गायत्रेण प्रतिमिमीते अर्कम्, अर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम्।
वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदाऽक्षरेण मिमते सप्तवाणीः॥२४॥
(ऋक्, १/१६४/२३-२४, अथर्व, ९/१०/१-२)

कूर्म चक्र का आकार $१०^{१८}$ योजन, शङ्कु = $१०^{१३}$

मानेन तस्य कूर्मस्य कथयामि प्रयत्नतः।
शङ्कोः शतसहस्राणि योजनानि वपुः स्थितम्॥
(नरपति जयचर्या, स्वरोदय में कूर्म चक्र)

कूर्म चक्र या गोलोक का आकार $१०^{१८}$ योजन भू-योजन के वर्णन में कहा जा चुका है। यह आज ब्रह्माण्ड का आभामण्डल कहते हैं जो प्रायः न्यूट्रिनो कणों से भरा है। इसकी माप अतिजगती छन्द (१३ x ४ = ५२ अक्षर) में है-

इसकी त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या x ६,३७८.१४ x $२^{४९}$ = ३.५९ x $१०^{१८}$ कि.मी. = ३,७९,५३३ प्रकाश वर्ष।

आधुनिक अनुमान ४-५ लाख प्रकाश वर्ष है जो प्रायः ५२.५ अहर्गण होगा। ब्रह्माण्ड के ४९ अहर्गण के अनुसार देवनागरी लिपि में ४९ अक्षर हैं तथा कूर्म = कर्त्ता या क्षेत्रज्ञ के लिये ३ अतिरिक्त अक्षर-क्ष, त्र, ज्ञ हैं।

इसके बाद अन्धकार क्षेत्र आता है, जिसकी माप शक्करी छन्द (१४ x ४ = ५६ अक्षर) में है, शक्करी = रात्रि।

इसकी त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या x ६,३७८.१४ x $२^{५३}$ = ५.७४५ x $१०^{१९}$ कि.मी.

= ५.९६ x $१०^{६}$ प्रकाश वर्ष = १.८२ मेगा-परसेक।

आधुनिक मान के अनुसार स्थानीय समूह (Local Clusture) की त्रिज्या = २.५ मेगा-परसेक है, जो ५६.४ अहर्गण होगा।

अतिशक्करी = ६० अहर्गण = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{५७}$ = प्रायः ९.७० x $१०^{७}$ प्रकाश वर्ष = २९.७८ मेगा-परसेक

स्थानीय बृहत् समूह (Local Super Clusture) की त्रिज्या प्रायः २५ मेगा-परसेक अनुमानित है।

अष्टि (६४ अहर्गण) इससे १६ गुणा ($२^{४}$) बड़ा प्रायः ४७६ मेगा-परसेक होगा। ५०-१०० मेगा-परसेक त्रिज्या के शून्य स्थान (Vacant space) तथा बृहत् आकर्षक (Great Attractor) का आकार है। क्वासर की दूरी प्रायः १००० मेगा-परसेक है।

अत्यष्टि = ६८ अहर्गण = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{६५}$ = २.३५३ x $१०^{२३}$ कि.मी. = २.४८७ $१०^{१०}$ प्रकाश वर्ष।

इसका आधा भाग पृथ्वी सतह से ६४ अहर्गण पर अर्थात् १२.४४ अरब प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। ब्रह्मा का अहो-रात्र ८.६४ अरब वर्ष है, इतने समय में प्रकाश ८.६४ अरब प्रकाशवर्ष पार करेगा जो तपः लोक या आज की भाषा में दृश्य जगत् (Visible Universe) है, जहां से सिद्धान्ततः प्रकाश हम तक पहुंच सकता है। यह प्रायः ६३.५ अहर्गण होगा, अतः ब्राह्मी लिपि में ६३ या ५४ वर्ण हैं। दृश्य जगत् का आधुनिक अनुमान ८-१८ अरब प्रकाशवर्ष है।

ब्रह्मा तपसि (प्रतिष्ठितम्) । (ऐतरेय ब्राह्मण, ३/६, गोपथ ब्राह्मण, उत्तर, ३/२)

तेजोऽसि तपसि श्रितम्। समुद्रस्य प्रतिष्ठा। .... तपोऽसि लोके श्रितम्। तेजसः प्रतिष्ठा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण ३/११/१/२-३)

त्रिषष्टिः चतुः षष्टिर्वा वर्णाः शम्भुमते मताः। (पाणिनीय शिक्षा, ३)

धृति = ७२ अहर्गण = पृथ्वी त्रिज्या ६,३७८.१४ x $२^{६९}$ = ३.७६५ x $१०^{२४}$ कि.मी. = ३.९७९ x $१०^{११}$ प्रकाश वर्ष।

यह सत्य लोक या स्वयम्भू मण्डल का काल्पनिक मान है।

आकाशगंगा की सर्पाकार भुजायें
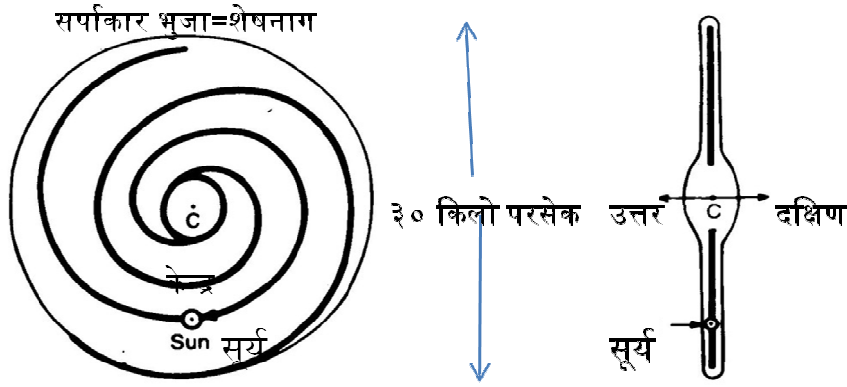
ब्रह्माण्ड = परमेष्ठी मण्डल
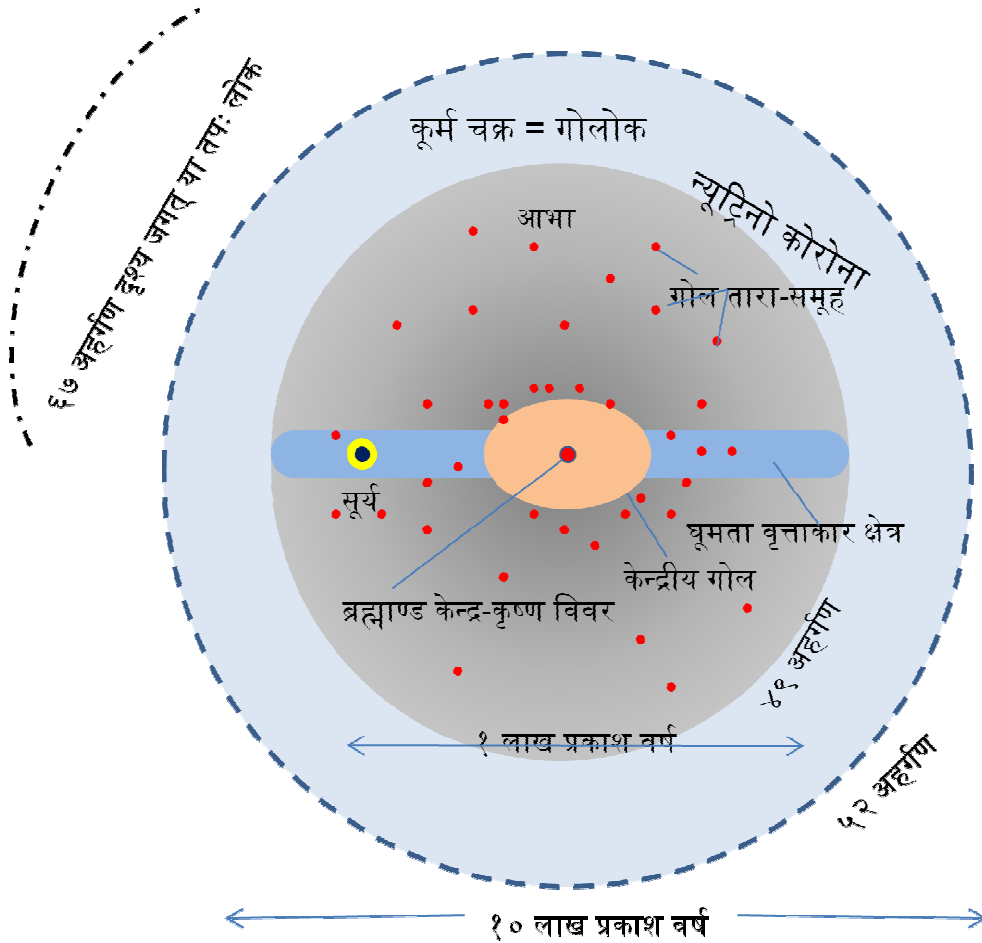
९. पृथ्वी के लोक

(१) भू पद्म-उत्तरी गोलार्ध में ९०-९० अंश देशान्तर खण्डों के मानचित्र बनते थे। इससे पृथ्वी की माप होती है, अतः यह मैप (map) है। इसे बनाने में नक्षत्र देखना पड़ता है (अक्षांश, देशान्तर, दिशा के लिये), अतः इसे नक्शा कहते हैं। एक साथ ४ क्षेत्रों का नक्शा बनाने में ४ रंगों का प्रयोग होता है, अतः मेरु को चतुष्कोण कहा गया है तथा ४ दिशाओं में ४ रंग हैं। इसी प्रकार दक्षिणी गोलार्ध में भी पृथ्वी के ४ मानचित्र बनते थे। मानचित्रों के अनुसार पृथ्वी अष्ट-दल कमल है।

भद्राश्वं पूर्वतो मेरोः केतुमालं च पश्चिमे।

वर्षे द्वे तु मुनिश्रेष्ठ तयोर्मध्यमिलावृतः॥२४॥
भारताः केतुमालाश्च भद्राश्वाः कुरवस्तथा।
पत्राणि लोकपद्मस्य मर्यादाशैलबाह्यतः॥४०॥ (विष्णु पुराण, २/२)
चातुर्वर्ण्यस्तु सौवर्णो मेरुश्चोल्बमयः स्मृतः॥१२॥
नाभीबन्धनसम्भूतो ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः।
पूर्वतः श्वेतवर्णस्तु ब्राह्मण्यं तस्य तेन वै॥१४॥
पीतश्च दक्षिणेनासौ तेन वैश्यत्वमिष्यते।
भृङ्गिपत्रनिभश्चैव पश्चिमेन समन्वितः॥१५॥
पार्श्वमुत्तरतस्तस्य रक्तवर्णं स्वभावतः।
तेनास्य क्षत्रभावः स्यादिति वर्णाः प्रकीर्तिताः॥१६॥ (मत्स्य पुराण, ११३)

(२). सात तल

सात तलों के नाम पुराणों में थोड़ा अलग हैं-

विष्णु-अतल, वितल, नितल, गभस्तिमत्, महातल, सुतल, पाताल।

ब्रह्माण्ड-तत्वल, सुतल, तलातल, अतल, तल. रसातल, पाताल।

भागवत-अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, पाताल।

विष्णु पुराण (२/५)-दशसाहस्रमेकैकं पातालं मुनिसत्तम।
अतलं वितलं चैव नितलं च गभस्तिमत्।
महाख्यं सुतलं चाग्र्यं पातालं चापि सप्तमम्॥२॥
शुक्लकृष्णाख्याः पीताः सर्कराः शैल काञ्चनाः।
भूमयो यत्र मैत्रेय वरप्रासादमण्डिताः॥३॥
ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/२०)-परस्परैः सोपचिता भूमिश्चैव निबोधत॥९॥
स्थितिरेषा तु विख्याता सप्तमेऽस्मिन् रसातले।
दशयोजन साहस्रमेकं भौमं रसातलम्॥१०॥
प्रथमः तत्वलं नाम सुतलं तु ततः परम्॥११॥
ततस्तलातलं विद्यादतलं बहुविस्तृतम्।
ततोऽर्वाक् च तलं नाम परतश्च रसातलम्॥१२॥
एतेषमप्यधो भागे पातालं सप्तमं स्मृतम्।
भागवत पुराण (५/२४/७)- उपवर्णितं भूमेर्यथासंनिवेशावस्थानमवनेरत्यधस्तात् सप्त भूविवरा एकैकशो योजनायुतान्तरेणायामं विस्तारेणोपक्लृप्ता अतलं वितलं सुतलं तलातलं महातलं रसातलं पातालमिति॥७॥

ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/२०) के अनुसार ७ तल-

(१) तल = कृष्ण भूमि, इन्द्र तथा नमुचि का निवास, इसे गभस्तिमान् या कुमारिका समुद्र भी कहते हैं। दक्षिणी गोलार्ध में ३०°४३' पूर्व (प्रायः ३१° पूर्व) से १२०°४३' पूर्व तक। मधुसूदन ओझा ने इसे मलुकु द्वीप कहा है जो बोर्निओ तथा पपुआ-नयी गिनी के बीच प्रायः १२७.५° पूर्व है।, भारत सागर (कुमारिका समुद्र) में यह मगाडास्कर (मलगासी) हो सकता है।

(२) सुतल = पाण्डु भूमि-महाजम्भ, विप्र, दैत्य, शंख, कद्रु, तक्षक आदि का निवास। उत्तर गोलार्ध में १२०°४३' पूर्व से १४९°१७' पश्चिम तक। (सु = उत्तर जैसे सुमेरु, शंख जापान = पञ्चजन से, पाञ्चजन्य।

(३) तलातल = नीलभूमि-प्रह्लाद (मिस्र में तिल्-अत्-तल अमर्ना, नील नदी का मुख), तारक असुर तथा उसका त्रिपुर (लिबिया का त्रिपोली)। दक्षिणी गोलार्ध में ५९°१७' पश्चिम से ३०°४३' पूर्व तक।

(४) अतल = पीत भूमि-गरुड, कालनेमि (डैन्यूब के निकट के दानव, डच या ड्यूट्श के दैत्य)। अतल = इटली। उसके परे (पश्चिम में) अतलान्तक (एटलाण्टिक) समुद्र जहां प्राचीन एटलाण्टिस था। उत्तर गोल में ५९°१७' पश्चिम से ३०°४३' पूर्व तक।

(५) तल या महातल = शर्करा भूमि-विरोचन, हिरण्याक्ष, माली, विद्युत् जिह्व, का निवास। जेन्द अवेस्ता के अनुसार हिरण्याक्ष आमेजन नदी क्षेत्र में था। पश्चिम अफ्रीका के माली की योद्धा स्त्रियों को भी आमेजन कहते थे। दक्षिण एटलाण्टिक-दक्षिण गोल में ५९°१७' पश्चिम से १४९°१७' पश्चिम तक।

(६) रसातल = शिला भूमि-वासुकि, दैत्य केसरी, पुलोमा, १०० सिर का सुरमा-पुत्र निवास करते हैं। दक्षिण गोल में १२०°४३' पूर्व से ५९°१७' पश्चिम तक।

(७) पाताल-यह रसातल के विपरीत उत्तर गोल में १२०°४३' पूर्व से ५९°१७' पश्चिम तक है।

(३) भारत पद्म के ७ लोक- ये सभी लोक आकाश जैसे हैं-ब्रह्माण्ड पुराण उपसंहार पाद, अध्याय २ (३/४/२)-
लोकाख्यानि तु यानि स्युर्येषां तिष्ठन्ति मानवाः॥८॥
भूरादयस्तु सत्यान्ताः सप्तलोकाः कृतास्त्विह॥९॥
पृथिवीचान्तरिक्षं च दिव्यं यच्च महत् स्मृतम्।
स्थानान्येतानि चत्वारि स्मृतान्यावर्णकानि च॥११॥
जनस्तपश्च सत्यं च स्थान्यान्येतानि त्रीणि तु।
एकान्तिकानि तानि स्युस्तिष्ठंतीहाप्रसंयमात्॥१३॥
भूर्लोकः प्रथमस्तेषां द्वितीयस्तु भुवः स्मृतः।१४॥
स्वस्तृतीयस्तु विज्ञेयश्चतुर्थो वै महः स्मृतः।
जनस्तु पञ्चमो लोकस्तपः षष्ठो विभाव्यते॥१५॥
सत्यस्तु सप्तमो लोको निरालोकस्ततः परम्।१६।
महेति व्याहृतेनैव महर्लोकस्ततोऽभवत्॥२१॥
यामादयो गणाः सर्वे महर्लोक निवासिनः।५१॥
(वायु पुराण, अध्याय, १०१)-महेति व्याहृतेनैवं महर्लोकस्ततोऽभवत्।
विनिवृत्ताधिकाराणां देवानां तत्र वै क्षयः॥२३॥
यामादयो गणाः सर्वे महर्लोकनिवासिनः॥५२॥

(१) भू लोक-यह २१° अक्षांश पर विन्ध्य से दक्षिण भाग है। भू-वराह १५ अहर्गण है, अतः इस क्षेत्र में भू-वराह क्षेत्र तिरुपति १५° अक्षांश पर है।

(२) भुवर् लोक-यह विन्ध्य तथा हिमालय के बीच में है अतः मध्यम-लोक (रघुवंश २/४२ आदि) या मध्यदेश कहा गया है। इसे बाइबिल में मेडेस या आजकल नेपाल में मधेस कहते हैं। एक मेडेस ईरान के पश्चिम उत्तर कैस्पियन सागर तक था।

(३) स्वर् लोक-यह हिमालय क्षेत्र है जिसमें ३ विटप या जल ग्रहण क्षेत्र थे, अतः इसे त्रिविष्टप (तिब्बत) कहते थे। पश्चिमी भाग का जल सिन्धु नदी से निकलता था, यह विष्णु विटप है। उनकी पत्नी लक्ष्मी भी सिन्धु-तनया या इस क्षेत्र की थीं। विष्णु विटप होने के कारण कश्मीर को स्वर्ग कहा गया है तथा इस अर्थ में ईसा मसीह शूली के बाद स्वस्थ होने पर सशरीर स्वर्ग (कश्मीर) आये थे। मध्य में शिव-विटप है, जिसका जल गंगा नदी द्वारा समुद्र में मिलता है। अतः यह शिव की जटा (कैलास-मानसरोवर क्षेत्र) है जिससे गंगा का जन्म हुआ है। पूर्वी भाग ब्रह्म-विटप है, अतः इस भाग का जल निकालने वाला नद ब्रह्मपुत्र है तथा उसके पूर्व ब्रह्म देश (आजकल म्याम्मार = महा + अमर) है। ब्रह्मा की उत्पत्ति विष्णु के नाभि कमल से हुई, अतः भारत (अजनाभ वर्ष) तथा ब्रह्म देश के बीच मणिपुर (नाभि-कमल) है। पूर्व दिशा का महावाक्य अहम् ब्रह्मास्मि है अतः पूर्व के ३ मुख्य क्षेत्र हैं -अहम् (असम), ब्रह्मा, स्याम (अस्मि का बहुवचन, थाइलैण्ड)।

(४) महर्लोक-हिमालय के उत्तर के निवासियों को ब्रह्मा ने महान् (आजकल हान जाति) कहा था अतः इसे महर्लोक कहा गया। यह ७ लोकों या इन्द्र की त्रिलोकी के बीच में है, अतः इसे मध्य राज्य भी कहते हैं।

(५) जनः लोक-यह मंगोलिया है। मरने के बाद प्रेत अन्ततः जनःलोक (कुरान का जन्नत) जाता है (विष्णु पुराण, २/७/१२)। अरबी में प्रेत को मुकुल कहते हैं, अतः इसे मंगोलिया कहा गया। यह प्रेत स्थान नहीं, आकाश के जनः लोक का प्रतिरूप है।

(६) तपः लोक-यह साइबेरिया (शिविर देश) है। तपस् लोक के कारण यह क्षेत्र स्टेपी (Steppees) कहा जाता है।

(७) सत्य लोक-ध्रुव वृत्त के उत्तर का भाग है।

(४) पृथ्वी पर विष्णु के पद-विष्णु रूपी सूर्य की किरण पृथ्वी सतह के जिस अक्ष वृत्त पर लम्ब होती हैं, वह सूर्य का स्थान कहते हैं। जब सायन सूर्य मकर राशि में होता है तब वह सबसे दक्षिण मकर रेखा पर होता है। वहां से ६ मास तक उत्तर गति होती है जब सायन सूर्य कर्क राशि में पहुंच कर कर्क रेखा पर लम्ब होता है।

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्॥२४॥

धूमोरात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्॥२५॥ (गीता, अध्याय ८)

अयनस्योत्तरस्यादौ मकरं याति भास्करः॥३०॥

ततः कुम्भं च मीनं च राशे राश्यन्तरं द्विज।

त्रिष्वेतेष्वथ भुक्तेषु ततो वैषुवती गतिम्॥३१॥

प्रयाति सविता कुर्वन्नहोरात्रंततः समम्।

ततो रात्रिः क्षयं याति वर्द्धतेऽनुदिनं दिनम्॥।३२॥

ततश्च मिथुनस्यान्ते परां काष्ठामुपागतः।

राशिं कर्कटकं प्राप्य कुरुते दक्षिणायनम्॥३३॥

(विष्णु पुराण, २/८/३०-३३)

इस चक्र को दिव्य दिन कहा गया है जो सौर वर्ष के बराबर है। उत्तरायण देवों का दिन तथा असुरों की रात्रि है।

मासैर्द्वादशभिर्वर्षं दिव्यं तदह उच्यते॥१३॥

सुरासुराणामन्योन्यमहोरात्रं विपर्ययात्।

(सूर्य सिद्धान्त, अध्याय १)

उत्तरायण तथा दक्षिणायन देवों के दिन-रात या सूर्य रूपी विष्णु के २ पार्श्व हैं।

अहोरात्रिश्च ते पार्श्वे (वाज, यजु, ३१/२२)

उत्तर गोल में विषुव से २४ अंश उत्तर कर्क रेखा तक विष्णु का १ पद हुआ। तृतीय पद ७२ अंश तक जायेगा जो उत्तर ध्रुव वृत्त (६६-९० अंश) के भीतर या पृथ्वी के सिर पर है।

वामन पद और इन्द्र के लोक-भारत पद्म ही देव भूमि थी जिनमें इन्द्र के ३ लोक थे। भारत वर्ष में हिमालय तक भू-भुवः स्वः लोक हैं। महः लोक चीन है। उसके उत्तर शिविर, ऋषीक देश (रूस) में जनः, तपः, सत्यः तृतीय लोक है। वामन ने इसकी पश्चिम सीमा से पूर्व सीमा तक प्रथम पद रखा था, जो यम की संयमनी से इन्द्र की अमरावती तक था। यह विषुव वृत्त का चतुर्थ अंश या १ पद हुआ। द्वितीय पाद उत्तर दिशा में मेरु या उत्तर ध्रुव तक हुआ। तृतीय पद पुनः संयमनी तक जाकर सीमा पूरी करता है।

तत्र पूर्वपदं कृत्वा पुरा विष्णुस्त्रिविक्रमे। द्वितीयं शिखरे मेरोश्चकार पुरुषोत्तमः॥

(वाल्मीकि रामायण, किष्किन्धा काण्ड, ४०/५८)
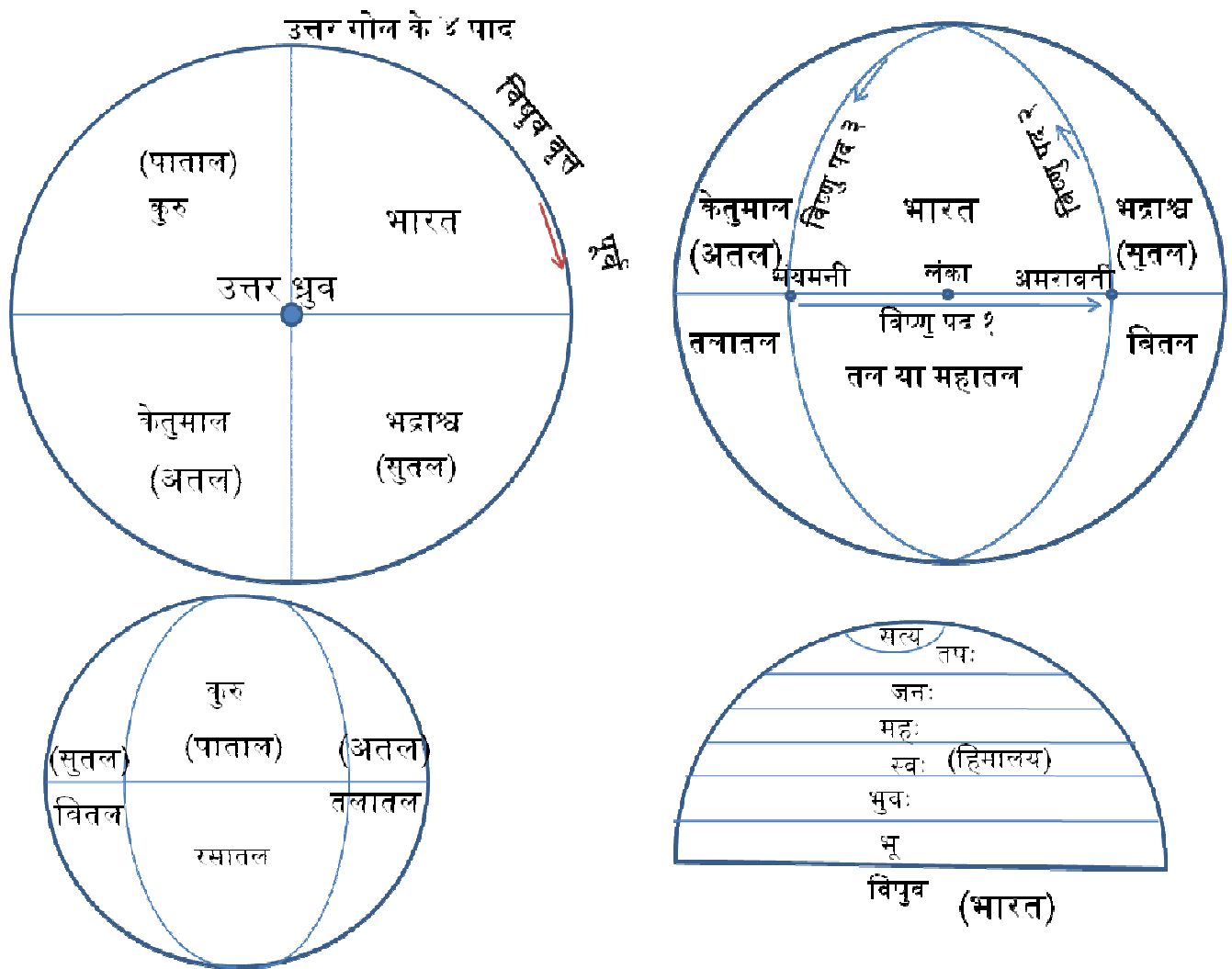
१०. राशि नक्षत्र

(१) चन्द्र पथ-चन्द्र २७.३ दिन में पृथ्वी की परिक्रमा करता है, अतः उसके परिक्रमा पथ को २८ भाग में बांटा गया है, जिनमें वह १-१ दिन रहेगा। कुछ नक्षत्रों के तारा समूह बड़े हैं, या उनके बाद खाली स्थान अधिक हैं। अतः ३ नक्षत्रों के पूर्व और उत्तर २-२ भाग किये गये हैं-फाल्गुनी, आषाढ़, भाद्रपद (वेद में प्रोष्ठ पद)। कुछ नक्षत्रों के स्थान १.५ गुणा बड़े हैं, कुछ के आधा हैं। २७ दिन के बाद बहुत कम समय परिक्रमा का बचता है, इसके लिए अभिजित् नक्षत्र जोड़ा गया है। ब्रह्मा के काल में यह ध्रुव के निकट था। प्रायः १५,८०० ईपू में ध्रुव इससे दूर हट गया तब कार्त्तिकेय द्वारा धनिष्ठा से वर्ष आरम्भ हुआ। धनिष्ठा में सूर्य रहते से माघ मास होता है जिससे वेदाङ्ग ज्योतिष में वर्ष आरम्भ होता है।

(२) मास गणना-सूर्य तुलना में चन्द्र २९.५ दिन में परिक्रमा करता है। जब सूर्य-चन्द्र पृथ्वी से एक दिशा में होते हैं तो वह अमावास्या है (एक साथ निवास)। अन्य प्रकार से इसका अर्थ है कि उस समय रात्रि में सूर्य या चन्द्र किसी का प्रकाश नहीं दीखता है, केवल ब्रह्माण्ड के तारा-गण का प्रकाश दीखता है। वह सदा स्थिर या अमृत है जिसे चन्द्र की अमृत कला कहते हैं। अमृत कला की तिथि अमावास्या है। अमावास्या के बाद चन्द्र सूर्य से आगे बढ़ने लगता है और प्रायः १५ दिन में उसके विपरीत या १८० अंश आगे निकल जाता है। अर्थात् हर तिथि में १२ अंश आगे निकलता है। अतः चन्द्र-सूर्य अन्तर ०-१२ अंश होने पर प्रतिपदा (प्रथम) तिथि, १२-२४ अंश द्वितीया आदि होते हैं। १ से प्रति पद का आरम्भ होता है तथा वह प्रसिद्ध स्थिर विन्दु प्रथित है, अतः एक का विशेषण प्रथम होता है। (अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः-गीता १५/१८)। ०- १८० अंश तक की गति में चन्द्र का प्रकाश धीरे धीरे बढ़ता है, अतः इसे शुक्ल पक्ष कहते हैं। पक्ष = १/२ भाग, पक्षी के २ पक्ष होते हैं। पक्षी की तरह गति होने से चन्द्र को पक्षी (सुपर्ण) भी

कहा है। चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि (ऋक्, १/१०५/१, अथर्व सं, १८/४/८९, वाज. यजु, ३३/९०, कौथुमी साम, १/४१७)। इसके अन्त में जब चन्द्रमा पूर्ण प्रकाशित होता है, वह पूर्णिमा तिथि है। पूर्णिमाके दिन चन्द्र जिस नक्षत्र में रहता है, उसी के अनुसार मास का नाम होता है, जैसे चित्रा नक्षत्र की पूर्णिमा होने पर चैत्र मास, विशाखा पूर्णिमा होने पर वैशाख आदि॥

१८०- से ३६० या शून्य अंश तह की गति में चन्द्र सूर्य के निकेट लौटने लगता है, वह बहुल (१५ से अधिक गणना) तिथि कहते हैं। लौटने की गति के कारण बहुल (बहोरी) का अर्थ लौटना हो गया है गयी बहोर गरीब नेवाजू (रामचरितमानस, १/१२/७) या जगन्नाथ की वापसी रथ यात्रा को बाहुला कहते हैं। चन्द्र गति के अनुसार मास होने से उसे मासकृत् कहा है (ऋक्, १/१०५/१८)।
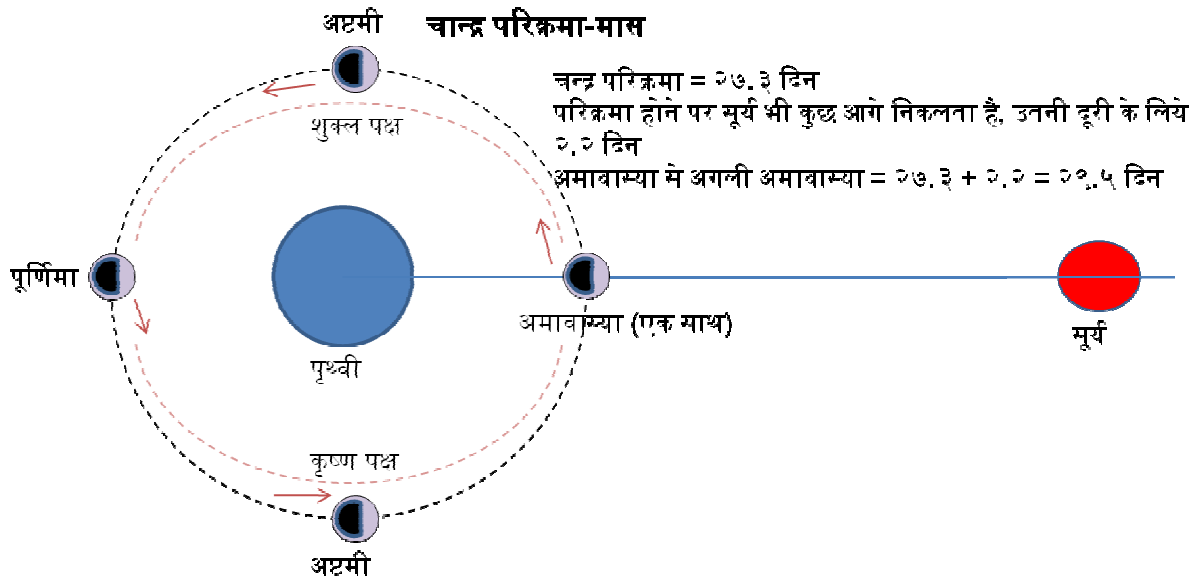
राशि-नक्षत्र
पृथ्वी से देखने पर सूर्य परिक्रमा करता है।
प्रायः ३६५ दिन में परिक्रमा अतः वृत्त में ३६० अंश।
१२ चान्द्र मास (३५४ दिन) अतः वृत्त में १२ राशि
१ राशि = ३० अंश
चन्द्र परिक्रमा २७.३ दिन
अतः १ दिन की दूरी = १ नक्षत्र = ३६०/२७ =१३°२०'
१ राशि = २+१/४ नक्षत्र

मास गणना के लिए चन्द्र कक्षा के २७ समान विभाग के नक्षत्र करते हैं, जो अश्विनी से रेवती तक है।

(३) कृत्तिका पद्धति-सूर्य की अयन गति की गणना के लिए जब वह उत्तरायण में विषुव वृत्त को पार करता है, तब से नक्षत्र गणना करते हैं। सूर्य मार्ग (पृथ्वी से दृश्य) को क्रान्ति-वृत्त कहते हैं। क्रान्ति तथा विषुव वृत्त जिस विन्दु पर काटते हैं, वह कैंची की तरह है, अतः उस नक्षत्र को कृत्तिका कहते हैं। इस विन्दु से सूर्य विषुव के ऊपर या उत्तर जाता है। इसके विपरीत दोनों वृत्त की २ शाखा जहां मिलती हैं वह द्वि-शाखा या विशाखा नक्षत्र है।

स्थिर ताराओं की तुलना में शून्य विन्दु का आरम्भ अश्विनी नक्षत्र या मेष राशि से होता है।

मुखं वा एतद् ऋतूनां यद् वसन्तः। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/१/२/६)

सा तत ऊर्ध्व आरोहत्। सारोहिण्यभवत्। तद् रोहिण्यै रोहिणित्वम्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/१/१०/६)

कृत्तिकातः गणना-

मुखं वा एतत् नक्षत्राणा यत् कृत्तिकाः। एतद्वा अग्नेः नक्षत्रं यत् कृत्तिकाः। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/१/२/१) =अग्नि का अर्थ अग्नि या अग्रणी भी है। प्रथम होने के कारण कृत्तिका अग्नि नक्षत्र है। या, संवत्सर की अग्नि इस नक्षत्र में (सूर्य आने पर) पूरी तरह प्रज्वलित हो जाती है।

कृत्तिका प्रथमं। विशाखे उत्तमं। तानि देव नक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि तानि दक्षिणेन परियन्ति। अनुराधाः प्रथमम्। अपभरणीरुत्तमम्। तानि यम नक्षत्राणि। यानि यम नक्षत्राणि तानि उत्तरेण (परियन्ति) (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/२/७)

संवत्सरोऽसि नक्षत्रेषु स्थितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/११/१/१३)
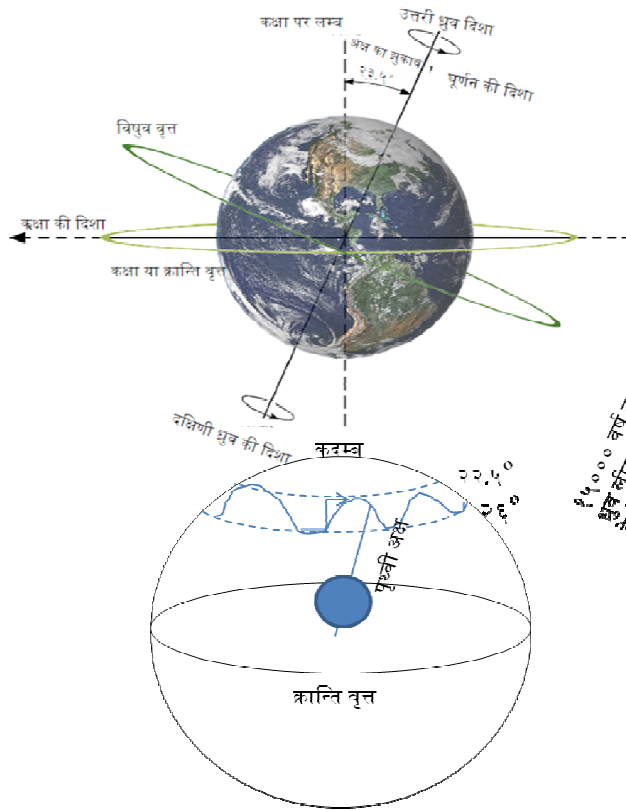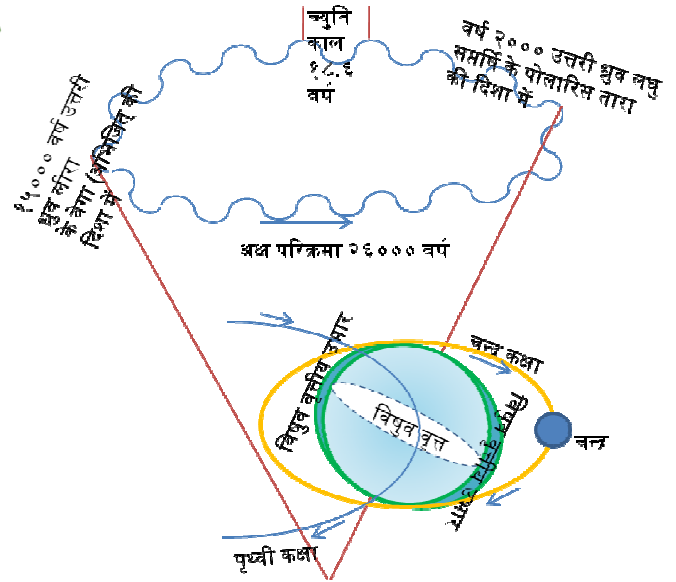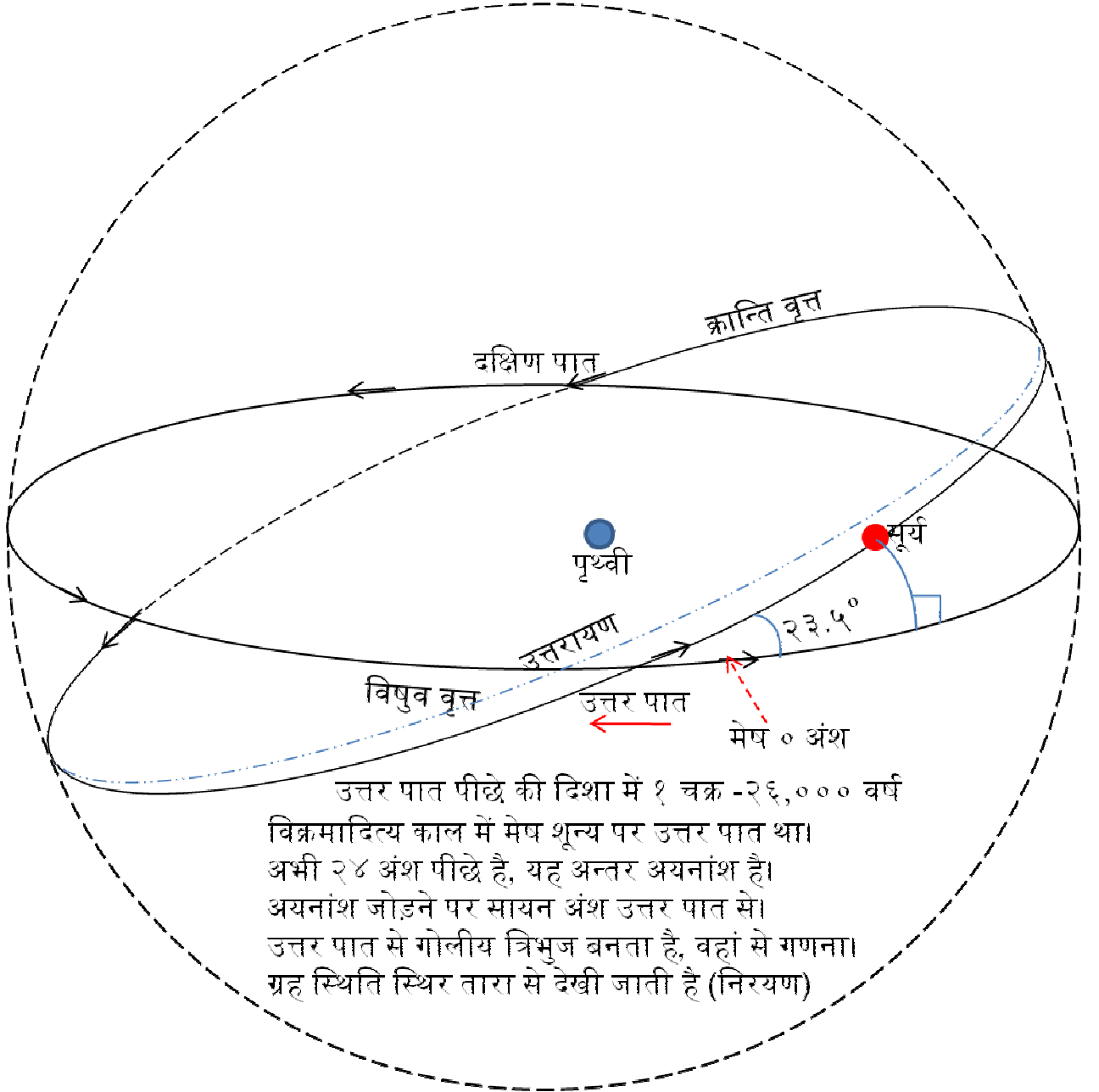
(४) राशि गणना-पृथ्वी से दृश्य सूर्य परिक्रमा काल में चन्द्र के १२ मास पूर्ण होते हैं। अतः क्रान्ति वृत्त तथा अन्य सभी वृत्तों को १२ राशि में बांटा गया है। १ राशि में १ मास की सूर्य गति है, जिसमें प्रायः ३० दिन होते हैं। अतः हर राशि को ३० अंश में बांटा गया। इस प्रकार वृत्त में १२ x ३० = ३६० अंश माने गये। एक अन्य पद्धति ४०० अंश मानने की भी की गयी किन्तु वह चल नहीं सकी। सूर्य कक्षा (क्रान्ति वृत्त) से चन्द्र कक्षा का झुकाव ५ अंश है, अतः क्रान्ति वृत्त से उत्तर-दक्षिण ५-५ अंश तक फैले पथ को राशि चक्र कहते हैं। १२ राशियों में स्थित तारा मण्डल की आकृति के अनुसार उनके नाम हैं। १२ राशियों में २७ नक्षत्र १३+१/३ अंश के हैं।
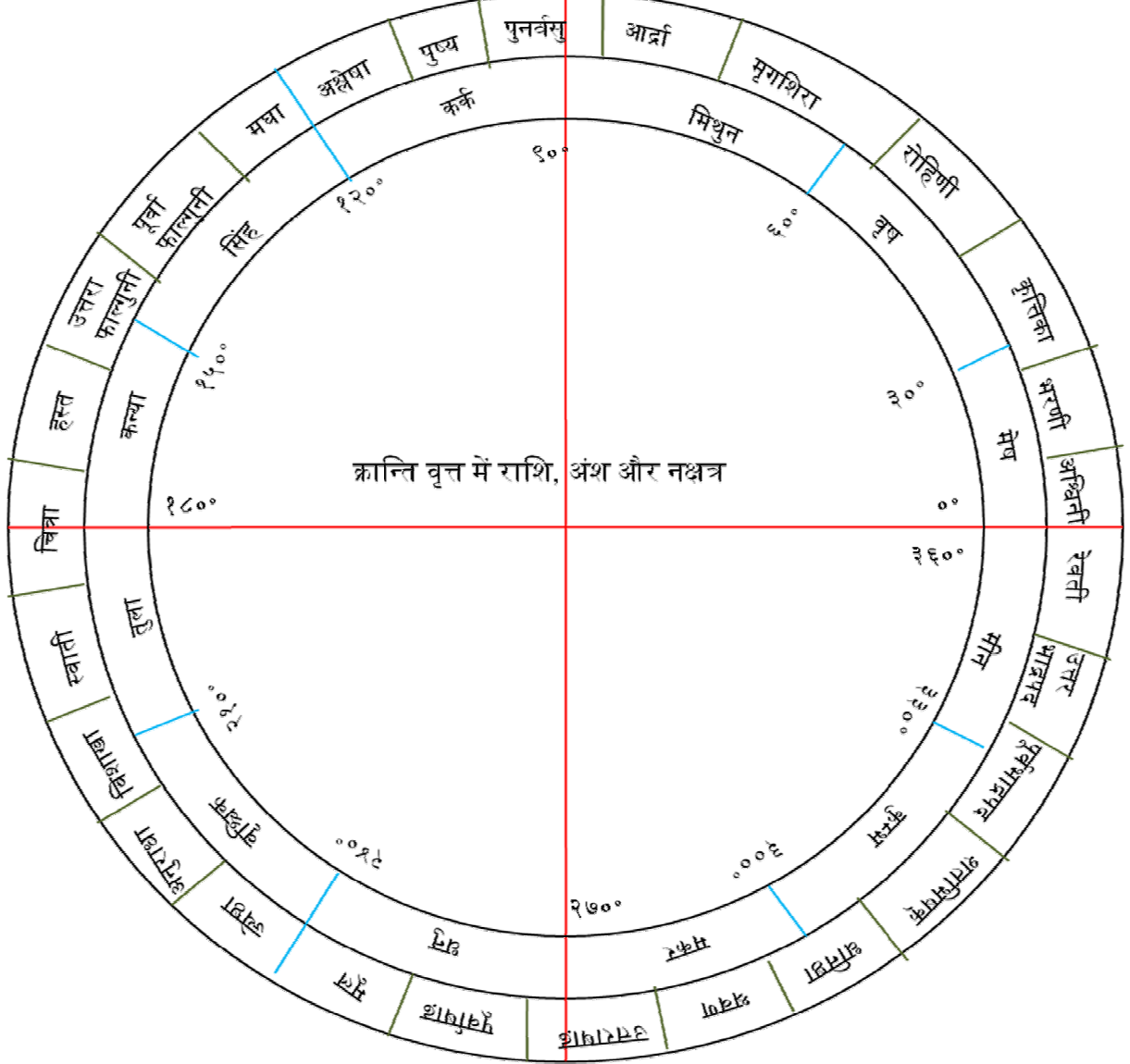
(५) अन्य नक्षत्र-राशि चक्र के बाहर भी कई विख्यात तारा मण्डल हैं, जिनमें मृगव्याध, सप्तर्षि मण्डल आदि प्रसिद्ध हैं।

११. वैदिक नक्षत्र सन्दर्भ

१. अश्विनी नक्षत्रं अश्व युजो देवता तारा ३ अश्वमुखवद्रूपम्। अश्विनोरश्वयुजौ ग्रामः (परस्तात्सेवनावस्तात्) – (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२६) वृष (वासवृक्ष) समिधा "अश्विनी" तुरगो, वाजी, तुरंगश्च तुरंगमः॥ घोटकोऽश्वोहयोवाहो दस्रोयुज्यं निगद्यते॥१॥ प्रार्थना मन्त्राः आहुतिश्च।

ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वतीव्वीर्यम्। वाचेन्द्रो बलेनेन्द्रायद धुरिन्द्रियम् ॥ (वाजसनेयी संहिता, २०/८०) तदश्विनावश्वयुजोपयातां, शुभं गमिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षत्रं हविषा यजन्तौ, मध्वासम्पृक्तौ यजुषा समक्तौ। यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहौ, विश्वस्यौदूतावमृतस्यगोपौ॥ तौ नक्षत्रं जुजुषाणोपयातां, नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यां ॥१॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/२५) (१) अश्विभ्यां स्वाहा, (२) अश्वयुग्भ्यां स्वाहा। (३) श्रोत्राय स्वाहा, श्रुत्यै स्वाहा, यमाय स्वाहा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/ ५/४६-५०)

२. भरणी नक्षत्रं यमो देवता। तारा ३ योनिवद् रूपम्। यमस्यापभरणीः। अपकर्षन्तः परस्तात्, अपवहन्तः अवस्तात्- (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२७) सकल (चंदन) समिधा। यमोऽन्तकः कृतान्तश्च याम्यं प्रेतपतिः स्मृतः। भरणी पलभादेशोमत्स्यो दाधिपतिस्तथा॥२॥
प्रार्थना मन्त्राः- ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्म्मः पित्रे॥ (वाजसनेयी संहिता ३८/९) ॐ अप पाप्मानं भरणीर्भरन्तु, तद्यमो राजा भगवान् विचष्टाम्। लोकस्यगजा महतो महान् हि, सुगं नः पन्थामभयं कृणोतु॥१॥ यस्मिन्नक्षत्रे यम एति राजा, यस्मिन्नेनमभ्यषिञ्चन्त देवाः॥ तदस्यचित्रं हविषा यजाम, अप पाप्मानं भरणीर्भरन्तु॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/२७-२८) योऽत्रजुहोति यमाय स्वाहा, अपाभरणीभ्यः स्वाहा, राज्याय स्वाहाऽभिजित्यस्वाहेति (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/ ५/५०-५३)॥
३. कृत्तिका नक्षत्रं अग्निर्देवता। तारा ६ क्षुराकृतिः। अग्नेः कृत्तिका शुक्रं परस्ताज्ज्योतिरवस्तात् (तैत्तिरीय ब्राह्मण १/५/१/१) (उदम्बरसमिद्) बहुलोदहनो वह्निः पावकोऽग्नि हुताशनः। हुतभुग्गनलाऽर्तिष्मान् रोहितश्चैव कृत्तिकाः॥३॥ उदुम्बरो जन्तुफलो यज्ञाङ्गो हेमदुग्धकं इति समिद् नामानि॥४॥
प्रार्थना मन्त्राः- अयमग्निसहस्त्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्द्धाकवीरयीणाम्॥१॥ (वाजसनेयी संहिता, १५/२१) ॐ अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः नक्षत्रं देवमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणं, हविरासं जुहोतन ॥१॥ यस्य भांति रश्मयो यस्यकेतवः यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वा॥ स कृत्तिकाभिरभिसंवसानः अग्निर्नो देवः सुविते दधातु॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/ १/१-२) अत्र जुहोति अग्नये स्वाहा, कृत्तिकाभ्यः स्वाहा, अम्बायै स्वाहा, दुलायै स्वाहा, नितत्न्यै स्वाहा, अभ्रयन्त्यै स्वाहा, मेघयन्त्यै स्वाहा, चुपुणीकायै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/१-९))
४. रोहिणी नक्षत्रं प्रजापतिर्देवता। तारा ५ शकटाकारं। प्रजापते रोहिणी। अपः परस्तादोषधयोऽवस्तात् (तैत्तिरीय ब्राह्मण १/५/१/२) जम्बुक (जामुन समिध) रोहिणी पद्मयोनिश्च ब्रह्मा कमल सम्भवः। पितामहो ऽब्जजो धाता विरञ्चिश्च प्रजापतिः॥१॥ चतुर्मुखः चतुर्वक्त्रः स्रष्टा पद्मासनस्तथा। आत्मभूः परमेष्ठी च सुरज्येष्ठो ऽमराग्रजः॥२॥ प्रार्थना मन्त्राः-ब्रह्म जज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतऽसुरुचो वेनऽआवः सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥ (वाजसनेयी संहिता, १३/३)॥१॥ प्रजापते रोहिणी वेत पत्नी, विश्वरूपा बृहती चित्रभानुः॥ सा नो यज्ञस्य सुविते दधातु, यथा जीवेम शरदः सवीराः॥२॥ रोहिणी देव्युदगात् पुरस्तात्। विश्वरूपाणि प्रतिमोदमाना॥ प्रजापतिँ हविषा वर्धयन्ती। प्रिया देवानामुपयातु यज्ञम्॥३॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/ १/३-४) प्रजापतये स्वाहा। रोहिण्यै स्वाहा। रोचमानायै स्वाहा। प्रजाभ्यः स्वाहा (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/ ४/१०-१३) (प्रियमावर्तते प्रियेण गच्छत इति फलम्)
५. मृगशीर्ष नक्षत्रं सोमो देवता। तारा ३ हरिणमुखाकृतिः। सोमस्येन्वका (इल्वला) विततानि परस्तात् वयन्तोवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण १/५/१/३) खदिर समिधः। सौम्यो मृगशिराः सोमो निशानाथो निशापतिः। मृगाङ्कः शान्तरश्मिश्च रात्रीशोरजनां पतिः॥१॥ इन्दुर्निशाकरश्चन्द्रः शशी च रोहिणी पतिः॥ प्रार्थना मन्त्राः-सोमो धेनुं सोमोऽअर्वन्तमाशुँ सोमो वीरं कर्मण्यन्ददाति॥ सादन्यं विदथ्यँ सभेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै॥१॥ (वाजसनेयी संहिता, ३४/२१) सोमो राजा मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षत्रं प्रियमस्य धाम। आप्यायमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजमाने दधातु॥२॥ यत्ते नक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियं राजन् प्रियतमं प्रियाणाम्। तस्मै ते सोम हविषा विधेम। शं न एधि द्विपदे शं चतुष्पदे॥३॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/५-६) सोमाय स्वाहा। मृगशीर्षाय स्वाहा। इन्वकाभ्यः स्वाहा। ओषधीभ्यः स्वाहा। राज्याय स्वाहा। अभिजित्यै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/१४-१९)
६. आर्द्रा नक्षत्रं रुद्रो देवता। तारा १, माणिक्याभम्। रुद्रस्य बाहू । मृगयवः परस्ताद् विक्षारो ऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/४) कलिवृक्ष (बेहेडे का वृक्ष) आर्द्रा रौद्रः शिवः शूली शंकरश्चन्द्रशेखरः। सोमभृत् त्र्यम्बको भर्गश्चण्डीशो गिरिजापतिः॥१॥ महेश्वरो महादेवः पार्वतीपतिरीश्वरः। श्रीकण्ठो नीलकण्ठश्च गोपतिर्वृषवाहनः॥२॥ विभीतकः कलि फले, भूतावासः कलिः स्मृतः॥३॥ प्रार्थना मन्त्राः- ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः॥१॥ (वाजसनेयी संहिता, १६/१) ॐ आर्द्रया रुद्रः प्रथमान एति। श्रेष्ठो देवानां पतिरघ्नियानाम्। नक्षत्रमस्य हविषा विधेम। मा नः प्रजाँ रीरिषन् मोत वीरान्॥२॥ हेती रुद्रस्य परिणो वृणक्तु। आर्द्र नक्षत्रं जुषताँ हविर्नः। प्रमुञ्चमानौ दुरितानि

विश्वा। अपाघशँसं नुदतामरातिम्॥३॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/७-८) रुद्राय स्वाहा। आर्द्रायै स्वाहा। पिन्वमानायै स्वाहा। पशुभ्य स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/२०-२३)

७. पुनर्वसू नक्षत्रं अदितिर्देवता। तारा ४ गृह सदृशम्। आदित्यैपुनर्वसू। वातः परस्तादार्द्रमवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) वंशवृक्ष समिधा। अदितिर्देवमाता च स्मृता पुनर्वसुर्बुधैः॥ प्रार्थना मन्त्राः-ॐ अदितिर्द्यौ-रदिति-रन्तरिक्ष-मदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवाऽअदितिः पञ्चजना ऽअदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥१॥ (वाजसनेयी संहिता, २५/२३) ॐ पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसूनः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो हविषा यजामः॥१॥ एवा न देव्यदितिरनर्वा। विश्वस्यभर्त्री जगतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू हविषा वर्धयन्ती प्रियं देवानामप्येतु पाथः॥३॥॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/९-१०) अदित्यै स्वाहा। पुनर्वसुभ्याँ स्वाहा। आभूत्यै स्वाहा। प्रजात्यै स्वाहा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण ३/१/४/२४-२७)

८. पुष्य नक्षत्रं बृहस्पतिर्देवता। तारा ३ बाण सदृश। बृहस्पतेस्तिष्यः जुह्वतः परस्ताद्यजमानावस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) पिप्पल समिधा। "गुरुः पुष्यः सुरज्येष्ठो देवमन्त्री कविः स्मृतः॥ बृहस्पति सुराचार्यो वागीशश्च सुरार्चितः। वाक्पतिः सुरपूज्योऽपि सुरेज्यस्त्रिदशार्चितः।" प्रार्थना मन्त्राः-ॐ वाचस्पतये पवस्व वृष्णो अंशुभ्यां गभस्ति पूतः। देवो देवेभ्य पवस्व येषाम्भागोऽसि॥८॥ (वाजसनेयी संहिता, ७/१) ॐ बृहस्पतिः प्रथमं जायमानः तिष्यं नक्षत्रमभिसम्बभूव श्रेष्ठो देवानां पृतनासुजिष्णुः दिशो न सर्वा अभयं नो अस्तु॥१॥ तिष्यः पुरस्ता दुतमध्यतो नः बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चात्। वाधेतां द्वेषो अभयं कृणुतां सुवीर्यस्य पतयः स्याम॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/११-१२) बृहस्पतये स्वाहा॥ तिष्याय स्वाहा॥ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/२८-३०)

९. आश्लेषा नक्षत्रं सर्पो देवता। तारा ५ चक्राकारं। सर्पाणामाश्लेषाः। अभ्यागच्छन्तः परस्तादभ्यानृत्यन्तो ऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) नागवृक्ष (पडोल) समिधा। आश्लेषा भुजगः सर्पो दन्दशूको भुजंगमः। चक्षुःश्रवा फणी नागो भुजंग फणभृत्तथा॥ उरगोऽ हिर्विषाग्निश्च विषधारोऽथ पन्नगः॥" प्रार्थना मन्त्राः- ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो येके च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥९॥ (वाजसनेयी संहिता, १३/६) ॐ इदं सर्पेभ्यो हविरस्तु जुष्टं। आश्लेषा येषामनुयन्ति चेतः। ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नः सर्पासो हवमागमिष्ठाः॥ ये रोचने सूर्यस्यापि सर्पाः। ये दिवं देवीमनुसञ्चरन्ति। येषामश्रेषा अनुयन्ति कामं। तेभ्यः सर्पभ्यो मधुमज्जुहोमि ॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/११/१३-१४) सर्पेभ्यः स्वाहा। आश्रेषाभ्यः स्वाहा। दन्दशूकेभ्यः स्वाहा॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/३१-३३)

१०. मघा नक्षत्रं पितरो देवता। तारा ५ गृह सदृशं। पितृणां मघाः। रुदन्तः परस्तादपभ्रंशोऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण १/५/१/८) वट न्यग्रोध समिधा। "पितृ देवो मघा नित्यं तातस्तु जनकः पिता॥" प्रार्थना मन्त्राः-
ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः॥ अक्षन् पितरो ऽमीमदन्त पितरो ऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम्॥१०॥ (वाजसनेयी संहिता १९/३६)
ॐ उपहूताः पितरो ये मघासु। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः॥ ते नो नक्षत्रे हवमागमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयतं जुषन्ताम्॥१॥ ये अग्निदग्धा येऽनग्निदग्धाः येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याँश्च विद्मयाँ उ च न प्रविद्म। मघासु यज्ञँ सुकृतं जुषन्ताम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/११५-१६) पितृभ्यः स्वाहा। मघाभ्यः स्वाहा। अनद्याभ्यः स्वाहा। अगदाभ्यः स्वाहा। अरुन्धतीभ्यः स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/३५-३८)

११. पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्रं अर्यमा देवता। तारा २ शय्याकारं। अर्यम्णः पूर्वेफल्गुनी। जाया परस्ताद् ऋषभो ऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/९) पलाश वृक्ष समिधा। "अर्यमातु पुमान् सूर्ये पितृदेवान्तरेऽपि च।ज्ञात्वैवमन्वदप्यूह्यमर्यमोत्तर फाल्गुनी॥" प्रार्थना मन्त्राः-ॐ दैव्यावध्वर्यूऽआगतँ रथेन सूर्य्य त्वचा। मध्वा यज्ञं समञ्जाथे। तं प्रत्नथाऽयं वेनश्चित्रन् देवानाम्॥११॥ (वाजसनेयी संहिता, ३३/७३) ॐ गवां पतिः फाल्गुनीनामसि त्वं, तदर्यमन् वरुणस्यमित्र चारु, तं त्वावयं सनितारं सनीनां जीवाजीवन्तमुपसंविशेम॥१॥ येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता, यस्य देवा अनुसंयन्ति चेतः॥ अर्यमा राजा ऽजरसस्तुविष्मान्, फल्गुनीनामृषभो रोरवीति॥१॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/१७-१८) अर्यम्णे स्वाहा। फल्गुनीभ्यां स्वाहा। पशुभ्यः स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/३९-४१)

१२. उत्तरा फल्गुनी नक्षरं भगो देवता। तारा २ मंचकामं। भगस्योत्तरे। वहतवः परस्तद्वहमाना अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१०) प्लक्ष (पाकड़) समिधा। "भगाख्यः पूर्वफल्गुनी॥ उपस्थेपि संस्थानो योनिः शेफः सुखप्रदः॥१॥

गर्भनिर्गमनद्वारं गर्भः पन्था स्मृतो बुधैः॥ प्रार्थना मन्त्राः- ॐ भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धिय मुदवा ददन्नः॥ भग प्र नो जनय गौभिरश्वै र्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥१२॥ (वाजसनेयी संहिता, ३४/३६)

ॐ श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्वा विदुः फल्गुनीस्तस्य वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमजरं सवीर्यं गोमदश्ववदुप संनुदेह॥१॥ भगो ह दाता भग इत् प्रदाता भगो देवीः फल्गुनीराविवेश॥ भगस्येत्तं प्रसवं गमेम यत्र देवैः सधमादं मदेम॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/१९-२०) भगाय स्वाहा। फल्गुनीभ्यां स्वाहा। श्रैष्ठ्याय स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/४२-४४) किञ्च भगो अर्यमा सविता पुरन्धिः। (पारस्कर गृह्य सूत्रं) (वर्तमान् ज्योतिष ग्रन्थों में पूर्व उत्तर फाल्गुनी नक्षत्रों के भग अर्यमा देवता लिखा है)

१३. हस्त नक्षत्रं सविता देवता। तारा संख्या ५, हस्ताकारम्। देवस्य सवितुर्हस्तः। प्रसव परस्तात् सनिरवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) अरिष्ट वैकंकत समिधा। "हस्तोऽर्कः सविता सूर्यः प्रचण्ड रुचिरुष्णगुः तरणिस्तपनो मनुर्दिननाथस्तिथीश्वरः॥ दिवाकरः सहस्रांशुर्मार्तण्डो मिहिरो रविः॥१॥ सप्तः साप्तः स्मृतोभास्वानादित्यो ब्रह्म एव च॥ निशान्तको निशारिः स्याद्दिनेशो ध्वान्तनाशनः॥२॥ प्रार्थना मन्त्राः-ॐ विभ्राड् बृहत् पिवतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविं ह्रुतम्॥ वात जूतो योऽअभिरक्षतित्मनाप्रजाः पुपोष पुरुधा वि राजति ॥१३॥ (वाजसनेयी संहिता, ३३/३०) ॐ आयातु देवः सवितोपयातु। हिरण्ययेन सुवृता रथेन। वहन् हस्तं सुभगं विद्मनापसम्। प्रयच्छन्तं पपुरिं पुण्यमच्छ॥१॥ हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिगृम्णीम एनत्॥ दातारमद्य सविता विदेय। यो नो हस्ताय प्रसुवाति यज्ञम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/२१-२२) सवित्रे स्वाहा। हस्ताय स्वाहा। ददते स्वाहा। प्रणते स्वाहा। प्रयच्छते स्वाहा। प्रतिगृभ्णते स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/४५-५०)

१४. चित्रा नक्षत्रं त्वष्टा देवता। तारा १ इन्द्रनीलमणि मौक्तिकाकारम्। इन्द्रस्य चित्रा। ऋतं परस्तात्। सत्यमवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) श्री वृक्ष (बेल वृक्ष) समिधा। प्रार्थना मन्त्राः-ॐ त्वष्टा तुरीपो अद्भुत इन्द्राग्नी पुष्टिवर्धना॥ द्विपदा छन्द इन्द्रियमुक्षा गौर्न वयो दधुः॥ (वाजसनेयी संहिता, २१/२०)

ॐ त्वष्टा नक्षत्रमभ्येति चित्रां सुभँससंयुवतिँ रोचमानाम् ॥ निवेशयन्नमृतान्मर्त्याँ श्च। रूपाणि पिँशन् भुवनानि विश्वा॥१॥ तन्न त्वष्टा तदु चित्रा विचष्टां, तन्नक्षत्रं भूरिदा अस्तु मह्यम्। तन्न प्रजां वीरवतीं सनोतु गोभिर्नो अश्वैः समनक्तु यज्ञम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/२३-२४) त्वष्ट्रे स्वाहा। चित्रायै स्वाहा। चैत्राय स्वाहा। प्रजायै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/२४-२७)

१५. स्वाती नक्षत्रं वासुर्देवता। तारा १ प्रवालोपमम्। वायोर्निष्ट्या व्रततिः परस्तादसिद्धिरवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१३) अर्जुन समिधा। त्वाष्ट्रश्चित्राऽथ वाताख्या स्वाती परमदैवतान्। समीरः श्वसनोवायुर्मारुतोऽथ समीरणः॥) प्रार्थना मन्त्राः-ॐ पीवो अन्ना रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुता मभिश्रीः। ते वायवे समनसो वि तस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः॥१५॥ (वाजसनेयी संहिता, २७/२३) ॐ वायुर्नक्षत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मशृङ्गो वृषभो रोरुवाणः। समीरयन् भुवना मातरिश्वा। अपद्वेषांसि नुदता मरातीः॥१॥ तन्नो वायुस्तदु निष्ट्या शृणोतु तन्नक्षत्रं भूरिदा अस्तु मह्यम्। तन्नो देवासो अनुजानन्तु काम्म्। यथा तरेम दुरितानि विश्वा॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/२५-२६) वायवे स्वाहा। निष्ट्यायै स्वाहा। कामचाराय स्वाहा। अभिजित्यै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/५५-५८)

१६. विशाखा नक्षत्रं इन्द्राग्नी देवता। तारा ४ तोरणाभं इन्द्राग्नियोर्विशाखे। युगानि परस्तात् कृषमाणा अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१४) आहिक (अगस्त) समिधा। "इन्द्राग्नीश्चापि शक्राग्नी विशाखश्च निगद्यते॥। प्रार्थना मन्त्राः- ॐ इन्द्राग्नी आ गतँ सुतं गीर्भिनभो वरेण्यम्। अस्यपातन्धियेषिता॥१६॥ (वाजसनेयी संहिता, ७/३१) ॐ दूरमस्मच्छत्रवो यन्तुभीताः। तदिन्द्राग्नी कृणुतां तद् विशाखे। तन्नो देवा अनुमदन्तु यज्ञम्। पश्चात् पुरस्तादभयं नो अस्तु॥१॥ नक्षत्राणामधिपत्नी विशाखे। श्रेष्ठाविन्द्राग्नी भुवनस्य गोपौ। विषूचः शत्रूनपबाधमानौ। अपक्षुधं नुदतामरातिम्॥२॥ पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय। तस्यां देवा अधि संवसन्तः। उत्तमे नाक इह मादयन्ताम्॥३॥ पृथ्वी सुवर्चा युवतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदगाच्छोभमाना। आप्याययन्ती दुरितानि विश्वा। उरुं दुहां यजमानाय यज्ञम्॥४॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१/२७-३०) इन्द्राग्निभ्यां स्वाहा। विशाखाभ्यां स्वाहा। श्रेष्ठ्याय स्वाहा। अभिजित्यै स्वाहा। पौर्णमास्यै स्वाहा। कामाय स्वाहा। अगत्यै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/२४-२७)

१७. अनुराधा नक्षत्रं मित्रो देवता। तारा ४ बलि सदृशं । मित्रस्यानुराधाः। अभ्यारोहत् परस्तात्। अभ्यारूढमवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१५) बकुल (मोलसिरि) समिधा। "अनुराधा स्मृतो मैत्रो वैशाखस्यानुजः स्मृतः॥ ध्यान मन्त्राः-ॐ नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतं सपर्यत। दूरेदृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शँसत॥१७॥ (वाजसनेयी संहिता, ४/३५) ॐ ऋध्यास्म हव्यैर्नमसोपसद्य। मित्रं देवं मित्रधेयं नो अस्तु। अनुराधान् हविषा वर्धयन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः॥१॥ चित्रं नक्षत्र मुदगात् पुरस्तात्। अनुराधास इति यद् वदन्ती॥ तन्मत्र एति पथिभिर्देवयानैः। हिरण्ययैर्विततैरन्तरिक्षे। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२) मित्राय स्वाहा। अनुराधेभ्यः स्वाहा। मित्रधेयाय स्वाहा। अभिजित्यै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/१-४)

१८. ज्येष्ठा नक्षत्रं इन्द्रो देवता। तारा ३ कुण्डल आकृतिः। इन्द्रस्य रोहिणी (ज्येष्ठा विपरीत दिगे) शृणत् परस्तात् प्रतिशृणन्तो अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/५) प्रार्थना मन्त्राः-ॐ स इषु हस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी सँस्रष्टा स युध इन्द्रो गणेन। सँ सृष्टजित् सोमपा बाहुवीर्या। शर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता।१८॥ (वाजसनेयी संहिता, १७/३५) ॐ इन्द्रो ज्येष्ठामनु नक्षत्रमेति। यस्मिन् वृत्रं वृत्र तूर्ये ततार। तस्मिन् वयममृतत्वं दुहानाः। क्षुधं तरेम दुरितिं दुरिष्टिम्॥१॥ पुरन्दराय वृषभाय धृष्णवे। अषाढाय सहमानाय मीढुषे। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमद् दुहाना। उरुं कृणोतु यजमानाय लोकम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/३-४) इन्द्राय स्वाहा। ज्यैष्ठायै स्वाहा। ज्यैष्ठ्याय स्वाहा अभिजित्यै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/५-८)

१९. मूलं नक्षत्रं निर्ऋतिर्देवता। तारा ११ सिंहपुच्छाकारम्। निर्ऋत्यै मूलबर्हणी। प्रतिभञ्जन्तः परस्तात्। प्रतिशृणन्तो ऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१७) सर्ज (शर) समिधा) राक्षसो निर्ऋतिर्मूलं स्यादलक्ष्मीस्तु निर्ऋतिः। राक्षसः कौणपः क्रव्यात् क्रव्यादोस्रप आशरः॥१॥ रात्रिंचरो रात्रिचरः कर्बुरो निकषात्मजः॥ यातुधानः पुण्यजनो नैर्ऋतौ यातु राक्षसी॥ ध्यान मन्त्राः- ॐ मातेव पुत्रं पृथिवी पुरुष्यमग्निँ स्वे योनावभारुखा। तां विश्वैर्देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा विमुञ्चतु॥ (वाजसनेयी संहिता, १२/६१) ॐ मूलं प्रजां वीरवतीं विदेय। प्राच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षत्रं पशुभिः समक्तम्। अहर्भूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१॥ अहर्नो अद्य सुविते दधातु मूलं नक्षत्रमिति यद् वदन्ति। पराचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजायै शिवमस्तु मह्यम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/५-६) मूलाय स्वाहा। प्रजायै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/१०-११)

२०. पूर्वाषाढा नक्षत्रं आपो देवता। तारा २ गजदन्त सदृशम्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः परस्तात् समितिः अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१८) वञ्जुल (जल वेतस) समिधा। 'पूर्वाषाढा जलाह्वयः। आपः स्त्री भूम्निवाः वारि सलिलं कमलं जलम्। पयः कीलालममृतं जीवनं भुवनं वनम्॥१॥ कबन्धमुदकं पाथः पुषकरं सर्वतोमुखं अम्भोर्णस्तोय पानीय नीरक्षीराम्बु शम्बरम्॥२॥ प्रार्थना मन्त्राः-ॐ अपाघमप किल्बिषमप कृत्यामपो रपः। अपामार्ग त्वमस्मदप दुःष्वप्न्यँ सुव॥२०॥ (वाजसनेयी संहिता, ३५/११) या दिव्या आपः पयसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थि वीर्याः। या सामषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शँस्योना भवन्तु॥१॥ याश्च कूप्याः याश्च नद्याः समुद्रियाः। याश्च वैशन्ती रुत प्रा सचीर्याः। या सामाषाढा मधु भक्षयन्ति। ता न आपः शँस्यो ना भवन्तु॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/७-८) अद्भ्यः स्वाहा। आषाढाभ्यः स्वाहा। समुद्राय स्वाहा। कामाय स्वाहा। अभिजित्यै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/१२-१६)

२१. उत्तराषाढ नक्षत्रं विश्वेदेवा देवता। तारा २ मञ्चकं सदृशं। विश्वेषां देवानामुत्तराः। अभिजयत् परस्ताद् अभिजितम् अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१९) । पनस (कटहल) समिधा। "विश्वेचाप्युत्तराषाढा वैश्वदेवश्च कथ्यते।" ध्यानमन्त्राः-ॐ विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती विश्वे भवन्त्यग्नयः समिद्धाः। विश्वेनो देवा अवसाऽऽगमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजो अस्मे ॥२१॥ (वाजसनेयी संहिता, १८/३१, ३३/५२) ॐ तन्नो विश्वे उपशृण्वन्तु देवाः। तदषाढा अभिसंयन्तु यज्ञम्। तन्नक्षत्रं प्रथतां पशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम् ॥१॥ शुभ्राः कन्या युवतयः सुपेशसः। कर्मकृतः सुकृतो वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् हविषा वर्धयन्तीः। अषाढाः काममुपयान्तु यज्ञम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/९-१०) विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। अषाढाभ्यः स्वाहा। अनपजय्याय स्वाहा। जित्यै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/१७-२०)

२२. अभिजिन्नक्षत्रं ब्रह्म देवता। तारा ३ त्रिकोण सदृशम्। अभिजिन्नामनक्षत्रं। अभिजयत् परस्ताद् अभिजितं अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१९) श्रोणायै (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/२)। ब्रह्मात्मभूः सुरज्येष्ठ परमेष्ठी

पितामहः। हिरण्यगर्भो लोकेशः स्वयम्भूश्चतुराननः॥१॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥२२॥ (वाजसनेयी संहिता, ३/३५, २२/९, ३०/२)

ॐ यस्मिन् ब्रह्माऽभ्य जयत् सर्वमेतत्। अमुं च लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षत्रमभिजिद्विजित्य। श्रियं दधात्व हृणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा संजितेमौ। तन्नो नक्षत्रमभिजिद्विचष्टाम्। तस्मिन् वयं पृतनाः संजयेम। तन्नो देवासो अनुजानन्तु कामम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/११-१२) ब्रह्मणे स्वाहा। अभिजिते स्वाहा। ब्रह्मलोकाय स्वाहा। अभिजित्ये स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/२१-२४)

२३. श्रवण नक्षत्रं विष्णुर्देवता। तारा ३ त्रिचरण सदृशं। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः परस्तात् पन्था अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२०) "श्रवणो माधवो विष्णुरच्युतः केशवो हरिः। श्रीधरो दानवारिस्च शाङ्गर्पाणिश्च वामनः। श्रोणस्त्रिविक्रमस्तार्क्ष पक्षाच्छादित बालकः॥" अर्क (आक) समिधा। ध्यान मन्त्राः-इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा नि दधे पदम्। समूळ्हमस्य पाँसुरे स्वाहा॥ (वाजसनेयी संहिता, ५/१५) शृण्वन्ति श्रोणाममृतस्य गोपाम्। पुण्यामस्या उपशृणोमि वाचम्। महीं देवीं विष्णुपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेनाँ हविषा यजामः॥१॥ त्रेधा विष्णुरुरुगायो विचक्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैति श्रव इच्छमाना। पुण्यँ श्लोकं यजमानाय कृण्वती॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/१३-१४) विष्णवे स्वाहा। श्रोणायै स्वाहा। श्लोकाय स्वाहा। श्रुताय स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/२५-२८)

२४. धनिष्ठा नक्षत्रं वसवो देवताः। तारा ४ मर्दलाकारं। वसूनां श्रविष्ठाः। भूतं पुरस्ताद् भूतिरवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२१) शमी (जांटी) समिधा। "धनिष्ठा च धनं वसुः। विनायको विघ्नराज द्वैमातुर गणाधिपाः। अप्येकदन्तो हेरम्ब लम्बोदर गजाननः।" ध्यान मन्त्राः-ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः॥ (वाजसनेयी संहिता, १/३) अष्टौ देवा वसवः सोम्यासः। चतस्रो देवीरजराः श्रविष्ठाः ते यज्ञं पान्तु रजसः परस्तात्। संवत्सरीणममृतँ स्वस्ति॥१॥ यज्ञं नः पान्तु वसवः पुरस्तात्। दक्षिणतोऽभियन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षत्रमभिसंविशाम। मा नो अरातिरघशँसागन्॥२॥ (अग्रं ह वै समानानां पर्येति) (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/१५-१६) वसुभ्यः स्वाहा। श्रविष्ठाभ्यः स्वाहा। अग्राय स्वाहा। परीत्यै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/२९-३२)

२५. शततारका नक्षत्रं वरुणो देवता। तारा १०० वर्तुलाकाम्। इन्द्रस्य शतभिषक्। विश्वव्यचाः परस्ताद्विश्वक्षिति रवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२२) कदम्ब समिधा वैकंकती वा। "वरुणो वारुणख्यातः शतभीषात्वम्बुराट् भवेत्॥ ध्यान मन्त्राः- ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भ सर्जनीस्यो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीदं॥ (वाजसनेयी संहिता, ४/३६) क्षत्रस्य राजा वरुणोऽधिराजः। नक्षत्राणां शतभिष्ग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः। शतं सहस्रा भेषजानि धत्तः॥१॥ यज्ञं नो राजा वरुण उपयातु। तन्नो विश्वे अभिसंयन्तु देवाः। तन्नो नक्षत्रं शतभिषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद् भेषजानि॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/१७-१८) वरुणाय स्वाहा। शतभिषजे स्वाहा। भेषजेभ्यः स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/३३-३५)

२६. पूर्वभाद्रपदा नक्षत्रं अजैकपात् देवता। तारा २ मञ्चक सदृशं। अजस्यैकपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वानरं परस्ताद् वैश्वावसवमवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२३) आम्रं (चूत वृक्ष) समिधा। "अजैकपात् स्मृतो नित्यं पूर्वाभाद्रपदा बुधैः॥" ध्यान मन्त्राः- ॐ उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः। विश्वे देवा ऋतावृधो हुवाना स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु। (वाजसनेयी संहिता, ३४/५३) अज एकपादुदगात्पुरस्तात्। विश्वा भूतानि प्रतिमोदमानः। तस्य देवाः प्रसवं यन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतस्य गोपाः॥१॥ बिभ्राजमानः समिधान उग्रः। आन्तरिक्षमरुहदगं द्याम्। तं सूर्यं देवमजमेकपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/१९-२०) अजायैकपदे स्वाहा। प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहा। तेजसे स्वाहा। ब्रह्मवर्चसायस्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/३६-३९)

२७. उत्तरा भाद्रपदा नक्षत्रं अहिर्बुध्निय देवता। तारा २ वलयाकारम्। अहेर्बुध्नियस्योत्तरे अभिषिञ्चन्तः परस्तादभिशृण्वन्तोऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२४) पिचुमन्द (नीम) समिधा। "स्यादुत्तरता भाद्रपदस्त्वहिर्बुध्न्यश्च कथ्यते।" ॐ शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा हिँसीः। नि वर्त्तयाम्यायुषे ऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय॥ (वाजसनेयी संहिता, ३/६३) अहिर्बुध्नियः प्रथमा न एति। श्रेष्ठो देवानामुत मानुषाणाम्। तं ब्राह्मणाः सोमपाः सोम्यासः। प्रोष्ठपदासो अभिरक्षन्ति सर्वे॥१॥ चत्वार एकमभिकर्म

देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदन्ति। ते बुध्नियं परिषद्यँ स्तुवन्तः। अहिँ रक्षन्ति नमसोपसद्य॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/२१-२२) अहयेबुध्नियाय स्वाहा। प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहा। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/४०-४२) २८. रेवती नक्षत्रं पूषा देवता। तारा ३२ मृदङ्गाकारं। पूष्णो रेवती। गावः परस्तात्। वत्सा अवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/२५) मधु वृक्ष (मुलेठी) समिधा। "अन्त्यभं रेवती पौष्णं पूषा चेतीवनामतः। एतानाक्षत्रजाः संज्ञा यत्ने नोक्ता मया स्फुटम्" (राजमार्तण्डोक्ताः) । ध्यान मन्त्राः-ॐ पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन। स्तोतारस्त इह स्मसि॥(वाजसनेयी संहिता, ३४/४१) पूषा रेवत्यन्वेति पन्थान्। पुष्टिपती पशुपा वाजवस्त्यौ। इमानि हव्या प्रयता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपयातां यज्ञं॥१॥ क्षुद्रान् पशून् रक्षतु रेवती नः। गावो नो अश्वाँ अन्वेतु पूषा। अन्नं रक्षन्तौ बहुधा विरूपं। वाजं सनुतां यजमानाय यज्ञम्॥२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/२/२३-२४) पूष्णे स्वाहा। रेवत्यै स्वाहा। पशुभ्यः स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५/४३-४५) इति नक्षत्र कल्पः॥

१२. वेदोक्त राशि विज्ञान

अथ राशि कल्पः। तत्रादौ (१) मेष राशिः। तारा ४२, पुञ्ज तारा । लैटिन ऐरिस। अंग्रेजी रैम। संस्कृत क्रिय, ओज, अज, मेढ्र, उरभ्र, उरण, ऊर्णायुः, वृष्णिः प्रथम राशिः। ॐ नेमि नमन्ति चक्षसा "मेषं" विप्रा अभिस्वरा। सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः॥१॥ (अथर्व सं. २०/५४/३)

(२) वृषभ राशिः। तारा २००, पुञ्ज तारा २९। लैटिन टारस, अंग्रेजी बुल, वृष, उक्षा, गौ, गोपति, तावुरि, द्वितीय राशिः। ॐ अनड्वाहमन्वारभामहे सौरभेयं स्वस्तये। स न इन्द्र इव देवेभ्यो वह्निः सन्तारणो भव॥ (वाजसनेयी संहिता, ३५/१३) ककुभँ रूपं वृषभस्य रोचते, बृहच्छुक्रः शुक्रस्य पुरोगाः। यत्ते सोमादाभ्यन्नाम जागृवि, तस्मै त्वा गृह्णामि तस्मै ते सोम सोमाय स्वाहा॥ (वाजसनेयी संहिता, ८/४९)

(३) मिथुन राशिः। तारा ८३, पुंज तारा १९, लैटिन जेमिनाइ, अंग्रेजी ट्विन्स। संस्कृत नृयुग्म, नृयुग, वीणा, यमल, जितुम, मन्मथ, तृतीय राशिः। ॐ लोहितेन (आर्द्रया) स्वधितिना मिथुनं कर्णयोः कृधि। अकर्तामश्विना लक्ष्म तदस्तु प्रजया बहु॥ (अथर्व सं. ६/१४१/२) अव त्मना भरते केतवोदा, अव त्मना भरते फेनमुदन्। क्षीरेणस्नातः कुयवस्य योषे हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः॥ युयोप नभिरुपरस्यायोः प्र पूर्वाभिस्तिरते राष्टि शूरः। अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पयो हिन्वाना उदभिर्भरन्ते॥ (ऋक् सं, १/१०४/३-४) (नृमिथुनं सगदं सवीनम्) वराहः॥

(४) कर्क राशिः। तारा ८, पुञ्जतारा ६, लैटिन कैन्सर, अंग्रेजी क्राव। सं. कुलीर, कर्कट, ककि, अब्ज, आयुः, जीवः, चतुर्थ राशिः। ॐ अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवान् कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन्। इमे ते स्तोका वहुला एहि -अर्वाङ् इयन्ते कर्कीह ते मनः अस्तु॥ (अथर्व सं. ४/३८/६)

(५) सिंह राशिः। तारा ९३, पुंज तारा १७, लैटिन लीओ, अंग्रेजी लायन। सं. हरि, मृगेन्द्र, पञ्चास्य, हर्यक्ष, केसरी, लेय, पञ्चम राशिः। ॐ (अजा वृत इन्द्र शूरपत्नी द्यां च येभिः पुरुहूत नूनम्) रक्षो अग्निमशुषं तूर्वयाणं सिंहो न दमे अपांसि वस्तोः॥ (ऋक् सं. १/१७४/३) एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः सिंहं हिन्वति महते सौभगाय। समुद्रं न सुभुवस्तस्थिवांसं मर्मृज्यन्ते द्वीपिनमप्स्वन्तः॥ (अथर्व सं. ४/८/७) (आविष्टयो वर्धते चारुरासु जिह्मानामूर्ध्वः स्वयशा उपस्थे) उभे त्वष्टुर्विभ्यतुर्जायमानात् प्रतीची सिंहं प्रति जोषयेते॥ (ऋक् सं. १/९५/५)

(६) कन्या राशिः। तारा ११७ पुञ्ज तारा १५। लैटिन वर्गो, अंग्रेजी वर्जिन्। सं. कन्यका, युवति, योषित्, षष्ठी, तरणी, नौका, तरुणी, कुमारी, पन्था, वहा, प्रवहा, षष्ठी राशिः। ॐ पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी धियं धात। ग्राभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यं सत्। (ऋक् सं. ६/४९/७) प्रथम भाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं सगभस्ति मृभ्वम्। होता यक्ष द्यजतं पस्त्याना मग्निस्त्वष्टारं सुहवं विभावा॥ (ऋक् सं. ६/४९/९) उत ग्ना व्यन्तु देव पत्नीरिन्द्राण्यग्नाय्यश्विनीराट्। (ऋक् सं. ५/४६/८) अग्र एति युवति रह्रयाणा प्राचिकितत् सूर्य यज्ञमग्निम्। अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तुभद्राः॥२७॥ (ऋक् सं. ७/८०/२-३) एता उ त्या उषसः केतुमक्रत, पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते॥ (ऋक् सं. १/९२/१) अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः। (ऋक् सं. १/९२/३) पशून्न चित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुर्न क्षोद उर्विया व्यश्वैत्॥ (ऋक् सं. १/९२/१२)

(७) तुला राशिः। तारा ६६, पुंज तारा ७, लैटिन लिब्रा, अंग्रेजी बैलेन्स। संस्कृत-तुला, वणिज, पथ, तौलि, जूक, घट, मूक, वणिजाख्य, तुलाधर, तौलपात्र, सप्तमराशि। ॐ आज्यस्य परमेष्ठिन् जातवेदस्तनू वशिन्। अग्ने तौलस्य प्राशान

यातुधानान् विलापय (अथर्व संहिता, १/७/२)। इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योते ऽदिते, सरस्वति महि विश्रुति। एता ते अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रूयात्। (वाजसनेयी संहिता, ८/४३) एष स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि। क्रतुं दधिक्रा अनु संसनिष्यदत् पथां अंकांसि अन्वापनीफणत् स्वाहा॥ (वाजसनेयी संहिता, ९/१४)

(८) वृश्चिक राशिः। तारा ६०, पुञ्ज तारा १७, लैटिन स्कार्पिओ, अंग्रेजी स्कार्पिअन्। संस्कृत-अलि, द्रुण, कौर्प्य, कीट, पृदाकुः। ॐ यस्ते सर्पो वृश्चिक स्तृष्टदश्मा हेमन्तजब्धो भृमलौ गुहाशये। कृमिर्जिन्वत् पृथिवियद्यदेजति प्रावृषितन्नः सर्पन्मोसृपद् यच्छिवं तेन नो मृड। (अथर्व संहिता, १०/१/४६)

(९) धनु राशिः। पुंज तारा १४। लैटिन सागिटेरिअस्, अंग्रेजी आर्चर। संस्कृत-अस्त्रं, धनुश्च कोदण्ड धरश्चापश्च तौक्षिकः। अश्वीनरोऽश्व जघनः धनं धन्वन्तरिः। नवम राशिः। ॐ दिवो मूलमवततं पृथिव्या अध्युत्ततम्। तेन सहस्रकाण्डेन परि णः पाहि विश्वतः॥ (अथर्व सं. २/७/३) परि मां परि मे प्रजां परि णः पाहि यद्धनम्। अरातिर्नो मा तारीन्मा नस्तारिषुरभिमातयः॥ (अथर्व सं. २/७/४) उदगातां भगवती विचृतौ नाम तारके। वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं पाशमुत्तमम्। (अथर्व संहिता २/८/१) यौ श्याव अश्वं अवथः वर्धि अश्वं मित्रावरुणा पुरुमीढं अत्रिम्। यौ विमदं अवथः सप्त वध्रिं तौ नः मुञ्चतं अंहसः॥ (अथर्व संहिता, ४/२९/४)

(१०) मकर राशिः। तारा संख्या ६४, पुञ्ज तारा ७। लैटिन कैप्रिकौर्नस्, अंग्रेजी गोट। संस्कृत-मृग, नक्र, दशम राशिः। "आकः केरो मृगश्चापि मृगास्यो मकरस्तथा। हरिणश्च। ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यंत्समुद्रादुत वा पुरीषात्। श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूं उपस्तुत्य महिजातं ते अर्वन्॥ (ऋक् संहिता, १/१६३/१)

(११) कुम्भ राशिः। तारा ११७, पुञ्ज तारा १५। लैटिन अक्वेरिअस्, अंग्रेजी वाटर। संस्कृत- कुम्भ। ॐ एमां कुमारस्तरुण आवत्सो जगता सह। एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः। (अथर्व संहिता, ३/१२/७) पूर्णः कुम्भोऽधि काल आहितस्तं वै पश्यामो बहुधा नु सन्तः।स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ् कालं तमाहुः परमे व्योमन्॥ (अथर्व संहिता, १९/५३/३)

(१२) मीन राशिः। तारा ११६, पुञ्ज तारा ११। लैटिन पिसेज, अंग्रेजी फिश् । संस्कृत-मीन, मत्स्य, अन्त्यभं। ॐ आण्डेव भित्त्वा शकुनस्य गर्भ मुदुस्त्रियाः पर्वतस्यत्मनाजत्। अश्नापिनद्धं मधुपर्यपश्य मत्स्यं न दीन उदनि क्षियन्तम्॥ (अथर्व संहिता, २०/१६/७-८)

१३. नक्षत्र तथा योगतारा

इनका स्थान २७ सम विभाग तथा अभिजित् सहित २८ विषम विभाग के दिते जाते हैं। संस्कृत नाम श्री काली नाथ मुखर्जी की पुस्तक Popular Hindu Astronomy के आधार पर है।

नक्षत्र	आरम्भ विन्दु (सम भाग) राशि-अंश-कला	आरम्भ विन्दु विषम भाग) राशि-अंश-कला	योगतारा निरयन अंश (बर्जेस) राशि-अंश-कला	संस्कृत नाम (मुखर्जी)
अश्विनी	० ० ०	० ० ०	β Arietis ० १० ७	१ मेषस्य
भरणी	० १३ २०	० १३ ११	41 Arietis ० २४ २१	३ मेषस्य
कृत्तिका	० २६ ४०	० १९ ४६	η Tauri १ ६ ८	२० वृषस्य
रोहिणी	१ १० ०	१ २ ५६	α Tauri १ १५ ५६	१ वृषस्य
मृगशिरा	१ २३ २०	१ २२ ४२	λ Orionis १ २९ ५१	११ मृगस्य
आर्द्रा	२ ६ ४०	२ ५ ५३	α Orionis २ ४ ५४	२ मृगस्य
पुनर्वसु	२ २० ०	२ १२ २८	β Geminorum २ २९ २२	१ मिथुनस्य
पुष्य	३ ३ २०	३ २ १४	δ Cancri ३ १४ ५२	३ कर्कटस्य
अश्लेषा	३ १६ ४०	३ १५ २५	ε Hydrae ३ १८ २९	२ ह्रद सर्पस्य

मघा	४ ० ०	३ २२ ०	α Leonis ४ ५ ५८	१ सिंहस्य
पूर्वा फाल्गुनी	४ १३ २०	४ ५ ११	δ Leonis ४ १७ २७	४ सिंहस्य
उत्तरा फाल्गुनी	४ २६ ४०	४ १८ २१	β Leonis ४ २७ ४६	२ सिंहस्य
हस्त	५ १० ०	५ ८ ७	δ Corvi ५ १९ ३६	२ कर्कटस्य
चित्रा	५ २३ २०	५ २१ १८	α Virginis ५ २९ ५९	१ कन्याः
स्वाती	६ ६ ४०	६ ४ २८	α Bootis ६ ० २३	निष्ठ्या
विशाखा	६ २० ०	६ ११ ३	α Libra ६ २१ १४	१ तुलस्य
अनुराधा	७ ३ २०	७ ० ४९	δ Scorpii ७ ८ ४३	५ वृश्चिकस्य
ज्येष्ठा	७ १६ ४०	७ १४ ०	α Scorpii ७ १५ ५४	१ वृश्चिकस्य
मूल	८ ० ०	७ २० ३५	λ Scorpii ८ ० ४४	२ वृश्चिकस्य
पूर्वाषाढ़	८ १३ २०	८ ३ ४६	δ Sagittarii ८ १० ४३	३ धनुषः
उत्तराषाढ़	८ २६ ४०	८ १६ ५६	σ Sagittarii ८ १८ ३२	२ धनुषः
अभिजित्		९ ६ ४२	α Lyrae ८ २१ २७	१ विनयः
श्रवण	९ १० ०	९ १० ५७	α Aquilae ९ ७ ५५	१ गरुडस्य
धनिष्ठा	९ २३ २०	९ २४ ७	β Delphini ९ २२ २९	१ श्रविष्ठास्य
शतभिषक्	१० ६ ४०	१० ७ १८	λ Aquarii १० १७ ४३	७ कुम्भस्य
पूर्व भाद्रपद	१० २० ०	१० १३ ५३	α Pegasi १० २९ ३८	३ पक्षिराजस्य
उत्तर भाद्रपद	११ ३ २०	१० २७ ४	γ Pegasi ११ १५ १८	१ ध्रुवमातुः
रेवती	११ १६ ४०	११ १६ ४९	ζ Piscium ११ २६ १	६ मीनस्य

ग्रीक वर्णमाला-α = Alpha, β = Beta, γ = Gamma, δ = Delta, ε = Epsilon, θ = Theta, η = Eta, λ = Lambda, μ = Myu, φ = Phi, σ = Sigma, ζ = Zeta. ι = iota, κ = kappa, ν = nu, ξ = Xi, ο = omicron, π = pai, ρ = rho, σ = sigma, τ = Tau, υ = Upsilon, χ = Chi, ψ = Psi, ω = Omega. Ω-capital omega

विषम तारा विभाग-उनके आकार तथा योग तारा का स्थान सिद्धान्त दर्पण, प्रकाश १२ के अनुसार दिया जा रहा है।

दस्रादीनां ध्रुवांशाः स्यु-र्व्यङ्घ्रि-काष्ठाः (१-९/४५) कु-बाहवः (२-२१)।
सपादे-ष्व-ग्नयः (३-३५/१५) सार्ध-षड्-वेदाः (४-४६/३०) साङ्घ्रि-ख-र्त्तवः (६-६०/१५)॥२॥

अश्विनी आदि नक्षत्रों का ध्रुवांश (क्रान्ति वृत्त में मेष ०° से दूरी) इस प्रकार है-१. अश्विनी (९/४५), २. भरणी (२१/२), ३. कृत्तिका (३५/१५), ४. रोहिणी (४६/३०), ५. मृगशिरा (६०/१५),

शर-षट् (६-६५) साङ्घ्रि-शून्या-ङ्काः (७-९०/१५), कृताशा (८-१०४) वसु-खे-न्दवः (९-१०८)।
रसा-र्काः (१०-१२६) सार्द्ध-वह्नी-न्द्रा (११-१४३/३०) राम-बाण-हिमांशवः (१२-१५३)॥३॥

६. आर्द्रा (६५), ७. पुनर्वसु (९०/१५), ८. पुष्य (१०४), ९. अश्लेषा (१०८), १०. मघा (१२६), ११. पूर्वाफाल्गुनी (१४३), १२. उत्तराफाल्गुनी (१५३),

शर-भूपा (१३-१६५) नव-घना (१४-१७९) त्रि-नन्द-सितभानवः (१५-१९३)।
नगा-भ्र-पक्षाः (१६-२०७) सार्द्धा-ष्ट-भू-भुजा (१७-२१८/३०) रस-दृग्-दृशः॥४॥

१३. हस्त (१६५), १४. चित्रा (१७९), १५. स्वाती (१९३), १६. विशाखा (२०७), १७. अनुराधा (२१८/३०),

अर्द्धोना (१८-२२५/३०) स्त्र्यंश-हीने-न्दु-सिद्धाः (१९-२४०/४०) ख-शर-बाहवः (२०-२५०)।

अर्द्धयुक्-तर्क-तत्त्वानि (२१-२५६/३०) दलोना-द्री-षु-बाहवः (० अभिजित्-२५६/३०)॥५।
१८. ज्येष्ठा (२२५/३०), १९. मूल (२४०/४०), २०. पूर्वाषाढ़ (२५०), २१. उत्तराषाढ़ (२५६/३०), (०) अभिजित् (२५६/३०),
त्रि-भानि (२२-२७३) सार्द्ध-पञ्चा-ष्ट-पक्षा (२३-२८५/३०) व्यङ्घ्य-षट्-भू-गुणाः (२४-३१७/४५)।
दृग्-दन्ता (२५-३२२) दन्ति-गीर्वाणाः (२६-३३८) शून्यं (२७-०) साभिजिता-मिति॥६॥
२२. श्रवण (२७३), २३. धनिष्ठा (२८५/३०), २४. शतभिषक् (३१७/४५), २५. पूर्वभाद्रपद (३२२), २६. उत्तरभाद्रपद (३३८), २७. रेवती (०)।
क्रान्त्यन्ता-देषामथ विक्षेपांशा दलाढ्य-दिश (१-१०/३०) ईशाः (२-११)।
साङ्घ्य-ब्धयः (३-४/१५) सहार्द्धे-न्द्रियाणि (४-५/३०) सार्द्धा-नल-क्षितयः (५-१३/३०)॥७॥
नक्षत्र-मण्डल के योगतारा का शर या क्रान्तिवृत्त से उत्तर या दक्षिण दिशा में उनकी दूरी कही जाती है-१. अश्विनी (उत्तर १०/३०), २. भरणी (उ. ११), ३. कृत्तिका (उ. ४/१५), ४. रोहिणी (दक्षिण ५/३७), ५. मृगशिरा (द. १३/३०),
त्र्यंशोन-तर्क-चन्द्राः (६-१५/४०) सार्द्ध-रसाः (७-६/३०) साङ्घ्रि-रूप (८-१/१५) मर्काश्च (९-१२)।
रूप-दलं निज-षष्ठांशोनित (१०-०/२५) मर्थेन्दवो (११-१५) विश्वे (१२-१३)॥८॥
६. आर्द्रा (द. १५/४०), ७. पुनर्वसु (उ. ६/३०), ८. पुष्य (उत्तर १/१५), ९. अश्लेषा (द. १२), १०. मघा (उ. ०/२५), ११. पूर्वाफाल्गुनी (उ. १२), १२. उत्तराफाल्गुनी (उ. १३),
रुद्राः (१३-११) स-रसांश-दृशौ (१४-२/१०) देवा (१५-३३) बाहु (१६-२) भुजौ (१७-२ सपाद-कृताः (१८-४/१५)।
सदला-नल-रजनीशाः (१९-१३/३०) सार्द्धा-ङ्गा (२०-६/३०) व्यत्रिभाग-कृताः (२१-३/४०)॥९॥
१३. हस्त (द. ११), १४. चित्रा (द. २/१०), १५. स्वाती (उ. ३३/०), १६. विशाखा (द. २/०), १७. अनुराधा (द. २/०), १८. ज्येष्ठा (द. ४/१५), १९. मूल (द. १३/३०), २०. पूर्वाषाढ़ (द. ६/३०), २१. उत्तराषाढ़ (द. ३/४०),
द्राषष्टि (० अभिजित्-६२) रभ्र-रामाः (२२-३०) षट्-त्रिंश (२३-३६) च्छीतदीधिते-स्त्र्यंशः (२४-०/२०)।
दन्ता (२५-३२) गज-भुज-सङ्ख्या (२६-२८) शरा (२७-५) इति शराः क्रमाद्-भानाम्॥१०॥
(०) अभिजित् (उ. ६२/०), २२. श्रवण (उ. ३०/०), २३. धनिष्ठा (उ. ३६/०), २४. शतभिषक् (द. ०/२०), २५. पूर्वभाद्रपद (उ. ३२/०), २६. उत्तरभाद्रपद (उ. २८/०), २७. रेवती (उ. ५/०)।
ब्रह्म-त्रयस्य (४/५/६) राधा-षट्क (१६/१७/१८/१९/२०/२१) स्याहेः (९) करस्य (१३) चित्रायाः (१४)।
वरुणस्य च (२४) विक्षेपो याम्यः सौम्योऽपर-र्क्षाणाम्॥११॥
निम्नलिखित नक्षत्रों का विक्षेप दक्षिण दिशा में होता है-(४, ५, ६, १६, १७, १८, १९, २०, २१,९, १३, १४, २४)। बाकी नक्षत्रों का विक्षेप उत्तर दिशा में होता है। (विक्षेप पहले ही दिखाया जा चुका है)।
रामा (१-३) गुणाः (२-३) षड् (३-६) विषया (४-५) हुताशा (५-३),
रूपं (६-१) शरा (७-५) वह्नय (८-३) आशुगाश्च (९-५)।
बाणा (१०-५) दृशौ (११-२) युग्म (१२-२) मथेन्द्रियाणि (१३-५),
धरा (१४-१) स्थिरा (१५-१) पञ्च (१६-५) नगाश्च (१७-७) रामाः (१८-३)॥१२॥
(नक्षत्रों में तारा संख्या)-१. अश्विनी (३), २. भरणी (३), ३. कृत्तिका (६), ४. रोहिणी (५), ५. मृगशिरा (३), ६. आर्द्रा (१), ७. पुनर्वसु (५), ८. पुष्य (३), ९. अश्लेषा (५), १०. मघा (५), ११. पूर्वाफाल्गुनी (२), १२. उत्तराफाल्गुनी (२), १३. हस्त (५), १४. चित्रा (१), १५. स्वाती (१), १६. विशाखा (५), १७. अनुराधा (७), १८. ज्येष्ठा (३),
नन्दाः (१९-९) सम्द्रा (२०-४) निगमा (२१-४) गुणाश्च (२२-३),
रामाः (०-३) शराः (२३-५) खा-भ्र-भुवो (२४-१००) भुजौ (२५-२) च।
दृशौ (२६-२) द्वि-रामा (२७-३२) इति तारकाणां सङ्ख्योदिता साभिजितां क्रमेण॥१३॥
१९. मूल (९), २०. पूर्वाषाढ़ (४), २१. उत्तराषाढ़ (४), (०) अभिजित् (३), २२. श्रवण (३), २३. धनिष्ठा (५), २४. शतभिषक् (१००), २५. पूर्वभाद्रपद (२), २६. उत्तरभाद्रपद (२), २७. रेवती (३२)। ये विभिन्न नक्षत्रों में तारा संख्या हैं।

जीवर्क्ष (८) मध्ये बहु-तारकाणां स्थितावपि व्यक्ततया विनाद्यैः।
एकत्व-मुक्तं कतिचिद्-विभिन्न-सङ्ख्यानि-भानी-त्यपरे वदन्ति॥१४॥
८. पुष्य नक्षत्र में अनेक तारा रहने पर भी वे स्पष्ट नहीं दीखने के कारण मेरे मत से एक ही तारा है। कई आचार्य अनेक नक्षत्रों में ताराओं की संख्या भिन्न भिन्न कहते हैं।
ऋक्ष-चयस्या-कृतयः प्रत्यय-हेतो-रथा-भिधास्यते।
तुरग-वदन (१) त्रिकोन (२) ज्वलन-शिखा (३) नः (४) सदृक्षास्ताः॥१५॥
अब नक्षत्रों की आकृति का वर्णन किया जाता है। अश्विनी का रूप घोड़े के मुंह के समान, २. भरणी त्रिकोण आकार का, ३. कृत्तिका अग्निशिखा के समान, तथा ४. रोहिणी-गाड़ी (शगड़) या बैलगाड़ी के समान।
मार्ज्जार-पाद (५) विद्रुम (६) कार्म्मुक (७) कठिनी-रजः (८) श्वपुच्छ (९) निभाः।
लाङ्गल (१०) भार-समाभे (११) भार (१२) कराभे (१३) च मुक्ताभा (१४)॥१६॥
५. मृगशिरा-बिल्ली के पैर या मृग के मुख के समान, ६. आर्द्रा-मूंगा (मणि) या बून्द की तरह, ७. पुनर्वसु-धनुष के समान, ८. पुष्य-खल्ली (chalk) के टुकड़े या तीर की तरह,, ९. अश्लेषा-कुत्ते की पूंछ के समान, १०. मघा-हल की तरह, (५), ११. पूर्वाफाल्गुनी और १२. उत्तराफाल्गुनी-दोनों का आकार भार (कांवर) या लाठी के दोनों तरफ लटकाये भार के समान, १३. हस्त-हाथ के समान, १४. चित्रा-मोती के समान,
माणिक्य (१५) तोरण (१६) फणि (१७) क्रोड़रद (१८) कम्बुं (१९) सूर्प (२०) सदृश-तनवः।
सूर्पा (२१) ग्निबिम्ब (०) सायक (२२) म्रज (२३) वितान (२४) प्रतीकाशाः॥१७॥
१५. स्वाती-माणिक्य या मूंगा जैसा, १६. विशाखा-तोरण (छप्पर) की तरह, १७. अनुराधा-सांप के फण के समान, १८. ज्येष्ठा-सूअर के दांत की तरह, १९. मूल-शंख के समान, २०. पूर्वाषाढ़ और २१. उत्तराषाढ़-दोनों सूप की तरह (या हाथी दांत की तरह), (०) अभिजित्-अग्नि बिम्ब की तरह या त्रिकोण, २२. श्रवण-शर (तीर) की तरह या वामन, २३. धनिष्ठा-नगाड़ा की तरह, २४. शतभिषक्-तोरण की तरह,
भारनिभा (२५) भारसमा (२६) मीनाभा (२७) चेति सम्मता उड़वः।
काश्चित्-कैश्चित्-प्रोक्ता भिन्नाकृतयः स्व-शास्त्रेषु॥१८॥
२५. पूर्वभाद्रपद और २६. उत्तरभाद्रपद-दोनों भार (डण्डे के दोनों तरफ लटके) या मञ्च की तरह, २७. रेवती-मछली या नगाड़ा की तरह दीखता है। नक्षत्रों का आकार समस्तों के मत से समान नहीं है।
अश्वि (१) चन्द्र (५) बगे (११) न्द्राग्नि (१६) तोय (२०) विश्वा (२१) जपादजाः (२५)।
अहिर्बुध्नस्यो (२६) त्तरस्था योगतारा ध्रुवांशगाः॥१९॥
किस नक्षत्र का योगतारा कहां स्थित है, यह कहा जाता है। १. अश्विनी, ५. मृगशिरा, ११. पूर्वाफाल्गुनी, १६. विशाखा, २०. पूर्वाषाढ़, २१. उत्तराषाढ़, २५. पूर्वभाद्रपद, तथा २६. उत्तर भाद्रपद-इन नक्षत्रों का योगतारा नक्षत्र की उत्तर दिशा में है। इन्द्र (१८) गोविन्द (२२) मित्रा (१७) ग्नि (३) जीवानां (८) मध्यगा मताः।
आदित्या (७) दित्य (१३) दैत्याना (१९) मीशान-दिग-वस्थिताः॥२०॥
१८.ज्येष्ठा, २२. श्रवण, १७. अनुराधा, ३. कृत्तिका, ८. पुष्य-इन नक्षत्रों का योगतारा नक्षत्र के मध्य में है। ७. पुनर्वसु, १३. हस्त, १९. मूल-इनका योगतारा नक्षत्र के ईशान में है।
वित्त (२३) स्याभिजितः (०) पश्चात् पूर्वस्यां ब्रह्म (४) सर्पयोः (९)।
याम्या स्थूला पितुः (१०) पूष (२७) यमा (२) र्य्यम्णाश्च (१२) दक्षिणाः॥२१॥
२३. धनिष्ठा और अभिजित् (०) का योगतारा नक्षत्र के पश्चिम में है। ४. रोहिणी और ९. अश्लेषा का योगतारा पूर्व में है। १०, मघा का योगतारा अत्यन्त स्थूल है और नक्षत्र के दक्षिण में है। २७. रेवती, २. भरणी और १२. उत्तराफाल्गुनी का योगतारा नक्षत्र के दक्षिण में है।
कृपीटयोनि-काष्ठायां योगतारा प्रचेतसः (२४)। शङ्कर-त्वष्ट्-वातानां (१५) स्वरूपा-ण्येकभावतः॥२२॥
२४. शतभिषक् का योगतारा आग्नेय कोण में है। ६. आर्द्रा, १४. चित्रा और १५. स्वाती में एक ही तारा है, अतः इनके योगतारा और नक्षत्र-पुञ्ज में कोई अन्तर नहीं है। योगतारा का ही ध्रुव और शर नक्षत्र का ध्रुव और शर होता है।
योगतारा-विलिप्तास्तु सूक्ष्माः क्रमान्, मानतः षड् (६) भुजौ (२) वह्नयः (३) सप्तयः (७)।

ईक्षणे (२) क्ष्माभृतः (७) कुञ्जरा (८) लोचने (२) सिन्धवः (४) षड् (६) गुणा (३) वार्द्धय (४) श्चाब्धयः (४)॥२३॥
योगताराओं की सूक्ष्म बिम्ब-कला (विलिप्ता में) कही जाती है। १. अश्विनी (६), २. भरणि (२), ३. कृत्तिका (३), ४. रोहिणी (७), ५. मृगशिरा (२), ६. आर्द्रा (७), ७. पुनर्वसु (८), ८. पुष्य (२), ९. अश्लेषा (४), १०. मघा (६), ११. पूर्वाफाल्गुनी (३), १२. उत्तराफाल्गुनी (४), १३. हस्त (४),
सैन्धवा (७) स्त्री-न्दवः (१३) श्चक्षुषी (२) सिन्धवः (४) सप्त (७) पञ्चा (५) ब्धय (४) श्चाब्धयो (४) ऽब्धी-न्दवः (१४)।
वाजिनः (७) पावका (३) वीतिहोत्राः (३) कृता (४) अर्णवा (४) वह्नय (३) श्चेति दस्रादितः॥२४॥
१४. चित्रा (७), १५. स्वाती (१३), १६. विशाखा (२), १७. अनुराधा (४), १८. ज्येष्ठा (७), १९. मूल (५), २०. पूर्वाषाढ़ (४), २१. उत्तराषाढ़ (४), (०) अभिजित् (१४), २२. श्रवण (७), २३. धनिष्ठा (३), २४. शतभिषक् (३), २५. पूर्वभाद्रपद (४), २६. उत्तरभाद्रपद (४), २७. रेवती (३)।
देवमातुः (७) पुनर्याम्यगा तारका सर्व्व-तारा-धिका तद्-विलिप्ता नखाः (२०)।
तद्-ध्रुवः सप्त-सप्तां (७७) शका मार्गणः (५) खा-र्णवां (४०) शा निजा-पक्रमाद्-दक्षिणः॥२५॥
अन्य कई ताराओं का ध्रुव, बिम्बमानतथा शर दिया जा रहा है। ७. पुनर्वसु नक्षत्र के दक्षिण में सबसे उज्ज्वल एक तारा का बिम्ब-कला (२०), ध्रुव (७७) तथा ध्रुव-प्रोतीय क्रान्ति (४०) है।
सूर्य्यसिद्धान्त-वाक्या-दियं तारका लुब्धकाख्यो मुनिश्चेति निश्चीयते।
चेददित्यास्तदा याम्यगान्-वा लघु-स्तारका तत्-समीपेऽपि निर्णीयताम्॥२६॥
सूर्य्यसिद्धान्त के मत से इसे लुब्धक तारा कहा जाता है। एक और तारा भी (पुनर्वसु के दक्षिण में दीखता है जो लुब्धक नहीं है।
केचिदाहु-र्मृगव्याध-नामा मुनिः, सोमभा (५) द्याम्यग-स्तद्-ध्रुवोऽङ्गे-षवः (५६)।
याम्य-बाणो रदाः (३२) स्वापमा-दंशका दिग् (१०) विलिप्ताश्च तन्-मण्डलस्या-यतिः॥२७॥
कोई कोई आचार्य मृगव्याध नक्षत्र को मृगशिरा नक्षत्र के दक्षिण में मानते हैं। इसका ध्रुव ५६, दक्षिण शर ३२, तथा बिम्बमान १७ है।
तस्य चेशा (५) नभस्या (६) पि मध्य-स्थिता-स्तारका-स्तिस्र ईष्वाभका इल्वलाः।
एक-षष्टि (६१) र्ध्रुवः स्थूल-भस्यार्द्ध-युग्-वह्नि-पक्षाः (२३+१/२) शरो याम्य आसां मतः॥२८॥
यह मृगव्याध और आर्द्रा नक्षत्र के बीच में तीर के आकार के ३ तारा हैं। इनको इल्वल कहा जाता है। इनके बीच का योगतारा है जिसका ध्रुव (६१) और दक्षिण शर (२३/३०) है।
हुतभुग्-ब्रह्महृदययोः पक्षा-र्था (५२) ध्रुवश्च सौरोक्तः। प्रथमस्याष्टौ (८) त्रिंशद् (३०) द्वितीय-भस्यो-त्तरेष्वंशाः॥२९॥
हुतभुक् नक्षत्र का सूर्य्यसिद्धान्त के अनुसार ध्रुव (५२) और उत्तर शर (८) है। ब्रह्महृदय का भी सूर्य्यसिद्धान्त के अनुसार ध्रुव (५२) और उत्तर शर (३) है।
ब्रह्महृदय पूर्वस्यां पञ्चभि-रंशैः प्रजापति-र्वसति। तस्योत्तर विक्षेपः कुञ्जर-रामां (३८) शकोऽप्युदितः॥३०॥
ब्रह्महृदय से पूर्व ५° की दूरी पर प्रजापति नक्षत्र है, जिसका ध्रुव ५७° तथा उत्तर शर ४८° है। (सूर्य्यसिद्धान्त के अनुसार) आधुनिकै-रभियुक्तै-र्निश्चित्योक्तं पृथक् च संस्थानम्। हुतभुग्-ब्रह्महृदययोः प्रजापते-स्तत्-पुन-र्वच्मि॥३१॥
आधुनिक प्रत्यक्ष-दर्शी लोगों ने इन तारा का जो ध्रुव कहा है, वह मैं पुनः कहता हूँ।
हुतभुग्-ध्रुवः सपादा-ष्टा-र्था (५८/१५) शाः साङ्घ्रि-पञ्च (५/१५) सौम्य शरः।
षड्-विकला-स्तन्-मानं ध्रुवः पुन-र्ब्रह्महृदयस्य॥३२॥
हुतभुक् का ध्रुव ५८°१५', शर ५°१५' उत्तर तथा बिम्ब मान (६) है। ब्रह्महृदय का ध्रुव-
अङ्गा-र्थाः (५६) सौम्य-शर-स्त्रि-भुज (२३) लवा नृपा (१६) स्तनू-विकलाः।
सोमभ (५) याम्य-गतो यो लुब्धक एतत्-प्रजापति-भम्॥३३॥
५६° उत्तर शर २३° तथा बिम्बमान (१६) है। मृगशिरा नक्षत्र से दक्षिण के तारा को लुब्धक कहा गया था। उसे अब प्रजापति कहा जाता है।
त्वाष्ट्र (१४) स्यापांवत्सः पञ्च-लवान्ते वसत्युदम्-भागे। आप्यवसु-स्तत्-सौम्ये स्थूलः किञ्चित्-ततोऽङ्गां(६) शैः॥३४॥
१४. चित्रा तारा के उत्तर ६° की दूरी पर अपांवत्स तारा है। इसके उत्तर ६° की दूरी पर आप्य-वसु तारा है। यह कुछ बड़ा दीखता है। इसका अन्य नाम आप है। अपांवत्स और आप्यवसु-दोनों का ध्रुव चित्रा के समान है। अपांवत्स का उत्तर शर २°५०' तथा आप्यवसु का उत्तर शर (८°५०') है।

ध्रुवोऽगस्त्यस्य पञ्चाङ्क (९५) भागाः पञ्चा-द्रयः (७५) शरः (५)।
दक्षिण-स्तद्-ध्रुवो वामं चलांशैः संस्कृतः स्फुतः॥३५॥
अगस्त्य तारा का ध्रुव ९५° और दक्षिण शर ७५° है। इस अगस्त्य के ध्रुव का अयनांश संस्कार (धन होने पर जोड़ेंगे, ऋण होने से घटायेंगे) करने पर यह स्फुट होगा।
धृतयो (१८) विकलास्तस्य सूक्ष्म-मण्डल-विस्तृतिः।
यम-स्यैवं द्वि-पक्षां (२२) शा ध्रुवोऽङ्गा-ङ्गानि (६६) मार्गणः॥३६॥
अगस्त्य का बिम्ब (१८"), ध्रुव (२२°), दक्षिण शर (६६°),
याम्योऽष्टौ विकला बिम्बोऽगस्त्य-वद्-ध्रुव-संस्कृतिः। राशि-त्रय-मगस्त्यस्य ध्रुवः सौरोदितः पुरा॥३७॥
तथा बिम्ब मान (८") है। सूर्य सिद्धान्त में अगस्त्य तारा का ध्रुव ९०° कहा है (जब सत्य युग में अल्प या १३१ वर्ष बाकी था)।
सप्त-नागां (८७) शकः प्रोक्तः सत्-सिद्धान्त-शिरोमणौ। भू-शरा-क्षि-कृता (४२५१) ब्देषु कले-र्भास्कर-धीमता॥३८॥
कलि गताब्द (४२५१) में भास्कराचार्य ने सिद्धान्त शिरोमणि में अगस्त्य का ध्रुवांश ८७° कहा है।
स्वोक्ता-दिति (७) ध्रुवात् (९३) पश्चाद्-भाग-षट्का-न्तरे (८७) यतः।
दृष्टोऽसौ साम्प्रतं सार्द्ध-घनां (१७/३०) शान्तर ईक्ष्यते॥३९॥
(सिद्धान्त शिरोमणि में) पुनर्वसु का ध्रुव ९३° तथा अगस्त्य का उससे ६° कम अर्थात् ८७° कहा है। अभी सिद्धान्त दर्पण के समय (१८६८ ई. में) यह ७. पुनर्वसु से १७°३०' पीछे है। अर्थात् (९०°१५' - १७°३०' = ७२°४५')। अगस्त्य ध्रुव में चलांश २२° घटाने पर भी ७३° (प्रायः समान) आता है।
युग्मस्य विश्व (१३) भागान्ते तदब्दै-र्गो-कु-पर्वतैः (७१९)।
तस्य स्थानान्तरं सिद्धं सार्द्ध-रुद्रा-यनांशजम् (११/३०)॥४०॥
अगस्त्य का ८७° ध्रुव ११°३०' अयनांश (सिद्धान्त शिरोमणि के समय) था। अभी का मिथुन १३° (७३°) ध्रुव भास्कर के बाद ७१९ वर्षों में परिवर्तन है (१८६८ ई. में)।
सप्तर्षीणां ध्रुवं प्राग्भि-र्नोक्त-सञ्चार-सम्भवात्। तथा-प्यनुभवात्-तेषां व्यवस्था क्रियतेऽधुना॥४१॥
चलनशील होने के कारण सप्तर्षि मण्डल का ध्रुव पूर्वाचार्यों ने नहीं कहा है। तथापि अपने अनुभव के आधार पर इनकी स्थिति के बारे में मैं कहता हूँ।
पूर्व्वाग्रं शकटा-कार-मुदक्स्थ-मुडु-सप्तकम्। सुरर्षि-मण्डलं प्रोक्तं व्यक्तं विश्व-नमस्कृतम्॥४२॥
उत्तर दिशा में पूर्व से पश्चिम की तरफ शगड़ (बैल गाड़ी) की तरह सप्तर्षि मण्डल बहुत स्पष्ट दीखता है। संहिता तथा पुराणों में सप्तर्षि को जगद्-वन्द्य कहा गया है।
तत्-पूर्व्वोन्नत-रेखाग्रे मरीचिः पश्चिमे ततः। वसिष्ठोऽरुन्धती-युक्त-स्तत्-पश्चा-दङ्गिरा स्थितः॥४३॥
सप्तर्षि-मण्डल में पूर्व की तरफ जो उठी हुई रेखा दीखती है, उसके आगे मरीचि का स्थान है। मरीचि के पीछे वसिष्ठ अरुन्धती के साथ हैं। वसिषठ के पश्चिम अङ्गिरा है।
तत्-पश्चा-च्चतुरस्रस्य शम्भु-दिश्य-त्रि-रस्य च। पुलस्त्यो दक्षिणे तस्य पश्चिमे पुलहः स्थितः॥४४॥
उसके बाद जो चतुर्भुज है, उसके ईशान कोण में अत्रि हैं। अत्रि के दक्षिण पुलस्त्य और पुलस्त्य के दक्षिण पुलह स्थित है।
क्रतु-स्तदुत्तर-स्थान-स्तत्रोक्तौ पुलहः क्रतुः। ध्रुव-सूत्रेण यल्लग्नौ तदृक्षस्था महर्षयः॥४५॥
पुलह के उत्तर में क्रतु है। पुलह और क्रतु को मिलानेवाला ध्रुव-प्रोत वृत्त क्रान्ति वृत्त को जिस स्थान पर काटेगा, उसी नक्षत्र या राशि में सप्तर्षि मण्डल को माना जायेगा।
कथ्यन्ते साम्प्रतं सिंहे भू-भुजां (२१) शान्तगौ स्थितौ। कालांशै-र्विश्वकैः (१३) प्राच्यां पुलस्त्यो वर्त्तते ततः॥४६॥
अभी पुलह और क्रतु सिंह राशि के २१° अंश पर या पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के तृतीय पाद में है। पुलह और क्रतु से १३ कालांश पूर्व में पुलस्त्य है।
ततस्तैः सायकै (५) रत्रि-रङ्गिरा नवभि-स्ततः। ततोऽष्टाभि (८) र्वसिष्ठोऽस्मान् मरीचि-र्वर्त्ततेऽषटभिः (८)॥४७॥
पुलह से ५ कालांश पूर्व में अत्रि, अत्रि से ९ कालांश पूर्व अङ्गिरा, अङ्गिरा से ८ कालांश पूर्व वसिष्ठ तथा वसिष्ठ से ८ कालांश पूर्व मरीचि है।
अरुन्धती स्थिता प्राच्यां स्वामिनोऽद्रि (७) कलान्तरे। या वसिष्ठा-ति-नेदिष्ठा यन्त्र-दृष्टा-रेततः॥४८॥

अरुन्धती वसिष्ठ से ७ कालांश पूर्व, वसिष्ठ के बहुत निकट बहुत छोटा तारा है जो आंख से कठिनाई से दीखता है, या यन्त्र द्वारा दीखता है।
सा नेष्टा सदसद्-दृष्टि-फलोक्तेः प्रथमेष्यते। एकास्या मान-विकला तिस्रोऽत्रे-रष्ट चान्यतः॥४९॥
यह शुभ या अशुभ फलदायक नहीं है। पहले जो कहा गया है (वसिष्ठ से ७ कला पूर्व) वही अरुन्धती फलदायक है। इसका बिम्ब मान १ विकला है। अत्रि का बिम्ब ३ विकला और बाकी सभी तारों (सप्तर्षि मण्डल में) बिम्ब मान ८ विकला है।
परस्परस्य चैतेषां सदा तुल्यान्तर-स्थितेः। गृह्यन्ता-मृक्ष-योगेषु कालांशा दिक् (१०) पलात्मकाः॥५०॥
इन तारा-गणों की दूरी परस्पर समान है। अतः इनका कालांश १० पल है।
तेऽष्टादश-शता-भ्यस्ता व्यक्ष-लग्ना-सुभि-र्हृताः। प्राग्-ध्रुवाढ्या भवन्तीष्ट-मुनि-क्रान्त-गृहांशकाः॥५१॥
इस १० पल को १८०० से गुणा कर निरक्ष उदय (लग्न मान) असु से भाग देने पर जो लब्धि होगी उसे पुलह और क्रतु के पूर्वोक्त ध्रुव (सिंह २१°) में जोड़ने से ऋषि नक्षत्र का राशि आदि ध्रुव होगा।
सप्तर्षि-मण्डलायाम-स्त्र्य-ब्धि (४३) कालांशकोऽपि यत्।
सायनांश-तुला-कन्या-स्थित्या-ङ्गा-ब्ध्यंश (४६) ईक्ष्यते॥५२॥
सप्तर्षि मण्डल की पूर्व से पश्चिम दिशा में लम्बाई ४३ कालांश होने पर भी सायन कन्या और तुला राशि में उसकी स्थिति के कारण यह लम्बाई (४६°) अंश दीखती है।
क्रान्त्यन्ता सौम्य-बाणांशा लिख्यन्तेऽङ्ग-शराः (५६) क्रतोः।
पुलह-स्यैक-पञ्चाशत् (५१) पुलस्त्य-स्याग्नि-सायकाः (५३)॥५३॥
क्रतु का क्रान्तिवृत्त से ह्रुव-प्रोत वृत्त पर उत्तर शर (५६°) अंश है। पुलह का (५१°) तथा पुलस्त्य का (५३°) है।
अङ्क-पत्रिण (५९) एवात्रेः षष्टि (६०) रङ्गिरसो मता।
द्वा-षष्ट्यंशा (६२) वसिष्टस्य मरीचेः षष्टि (६०) रीक्षिता॥५४॥
अत्रि का (५९°), अङ्गिरा का (६०°), वसिष्ठ का (६२°) और मरीचि का (६०°) उत्तर शर दीखता है।
सर्व्वदायं शर-क्रान्ते यदि तुल्यो भवेत्तदा। युग्मान्तस्य-वसिष्ठस्या-च्चतु-र्भागान्तरो ध्रुवात्॥५५॥
यदि क्रान्ति वृत्त से वसिष्ठ का शर सर्वदा समान रहे, तो यह युग्मान्त (मिथुन अन्त) में रहने के कारण ध्रुव से ४° पर होगा। वसिष्ठ का उत्तर या सौन्य शर ६२, युग्मान्त की क्रान्ति २४°, कुल ८६°, अतः ध्रुव ९०° से अन्तर ४° हुआ।
स्फुट-क्रान्ति-र्महर्षीणां तुल्यता यदि सर्व्वदा। तदा राश्यन्तर-प्राप्तौ विक्षेपो भिन्नतां व्रजेत्॥५६॥
सप्तर्षियों में प्रत्येक की स्फुट क्रान्ति सदा समान रहने पर भी वे अन्य राशि में जाने पर उनका शर बदलता है।
यमा-गस्त्य-स्फुअट-क्रान्ते-र्यथा साम्यं सदेक्ष्यते। दस्रा-दीनाञ्च वैषम्यं तथैषां नेक्षितोऽपमः॥५७॥
यम और अगस्त्य की स्फुट क्रान्ति सदा समान होती है। अश्विनी आदि नक्षत्रों की क्रान्ति सदा बदलती रहती है। सप्तर्षि-मण्डल की क्रान्ति कभी सम कभी असमान होती है।
प्रत्यब्दं प्राग्-गतिः प्रोक्ता पुराणै-रष्ट-लिप्तिका। तेषां नो निविता पूर्व्वा-नुभवा-दर्शनान्-मया॥५८॥
पूर्व आचार्यों ने सप्तर्षि-मण्डल की पश्चिम से पूर्व गति वर्ष में ८ कला मानी है। पर मैंने (लेखक ने) यह गति नहीं देखी है। अतः इसे नहीं मानता हूँ।
तथा-यनांश-संस्कारो वाम-स्तेषां यदीरितः। तत्-सर्व्वं कविभि-र्भाव्यै-र्ज्ञेयं मत्-कालिक-स्थितेः॥५९॥
यम, अगस्त्य और सप्तर्षि मण्डल का अयन-संस्कार ध्रुव के विपरीत दिशा में करने के लिये कहा गया है। वह मेरे समय (१८६८ ई.) के लिये है।
लिप्ता तिथ्यं (१५) शमानः खे यत्र राजत्यु-दग्-ह्रुवः। न तन्-मध्य-ध्रुव-स्थानं सूत्र-पातार्ह-मिष्यते॥६०॥
ध्रुव तारा (उत्तर) का बिम्ब मान लिप्ता का १/१५ भाग (४ विकला) है। उत्तर ध्रुव तारा का स्थान वास्तविक ध्रुव नहीं है। अतः यह विषुव वृत्त का केन्द्र नहीं है। ध्रुव-प्रोत वृत्त इससे नहीं खींचा जाता है।
कृता-ष्ट (८४) लिप्ता-न्तरितो निज-केन्द्राद्-यतो ध्रुवः। मेषा-दिस्थो भ्रम-त्यस्मात् पौष्ण-भे (२७) गगना-द्धगे॥६१॥
दृश्य ध्रुव तारा नाड़ी-वृत्त के पृष्ठ-केन्द्र (गणितीय ध्रुव) से लिप्ता (१°२५') की दूरी पर है। अतः रेवती नक्षत्र याम्योत्तर-वृत्त पर आने से ध्रुवतारा मेषादि में रह कर याम्योत्तर-वृत्त पर ८४ कला नत दीखता है।
उन्नतो दृश्यते विष्णौ (२२) दित्यां (७) चाक्ष-समीच्छ्रितः। त्वाष्ट्रे (१४) नत-स्ततो मध्य-स्थान-मस्या-नुमीयताम्॥६२॥
श्रवण, पुनर्वसु याम्योत्तर-वृत्त पर रहने के समय, यह ध्रुव नक्षत्र दिग्वलय से अपने अक्षांश के बराबर उन्नत दीखता है। पुनः चित्रा नक्षत्र याम्योत्तर-वृत्त पर आने से ध्रुव अपने केन्द्र से ८४ कला नत दीखता है।
एवं याम्य-ध्रुवो मेधि-मूल-योजित-गौरिव। तुला-दिस्थो भ्रम-न्नभ्रे दृश्येता-सुर-भागगैः॥६३॥

इसी प्रकार दक्षिण ध्रुव भी दक्षिण गोलार्द्ध के लोगों को वास्तविक ध्रुव केन्द्र के चारों तरफ मेढ़ी के बैल की तरह घूमता दीखता है।
अंशास्तु त्रिविधा ज्ञेया मानांशाः कालजां-शकाः। क्षेत्रांशा-श्चेति लग्नानां भेदात्तौ क्षेत्र-कालजौ॥६४॥
अंश ३ प्रकार के हैं-मानांश, कालांश, और क्षेत्रांश। राशियों का उदय मान भिन्न-भिन्न होने के कारण क्षेत्रांश और कालांश-
अंशौ विभिन्नौ भवत-श्चक्रान्ते सङ्ख्यया (३६) समौ। मान-कालांशयो साम्यं क्रमोना-वागुदङ्-मितेः॥६५॥
-भिन्न-भिन्न होते हैं। पर चक्र समाप्त होने पर इन दोनों का मान ३६०° होता है। मानांश और कालांश का मान विषुव वृत्त में समान होता है, पर-
महत्-तदन्तर-मेव स्यात्-तदुदग्-याम्य-भागयोः। प्राक्-पश्चिमान्तर-स्यायं क्रमोना-वागुदङ्-मितेः॥६६॥
विषुव से उत्तर या दक्षिण जाने पर कालांश और मानांश में बहुत अन्तर होगा। सप्तर्षि-मण्डल के तारों का क्रम पूर्व-पश्चिम दिशा स्थिति (देशान्तर के अनुसार) लिया जाता है (सबसे पश्चिम का पहला तारा आदि)। यह उत्तर-दक्षिण दिशा (अक्षांश के क्रम में नहीं लिया जाता।
यथात्र पुलह-क्रत्वोः सौम्य-याम्या-न्तरं शराः (५)। भागा एव समा दृष्टा मरीच्यन्तं क्रतोः पुनः॥६७॥
जिस प्रकार पुलह और क्रतु का शरान्तर (ध्रुव-प्रोतीय वृत्तान्तर) सदा ५° मात्र रहता है, उसी प्रकार क्रतु और मरीचि का पूर्व-पश्चिम अन्तर-
प्राक्-पश्चा-दन्तरे दृष्टा मानांशा-स्तत्त्व (२५) सङ्ख्यकाः।
सार्द्धा (०/३०) स्तत्तत् शरांशेभ्य-स्तयोः साध्यौ स्फुटा-पमौ॥६८॥
मानांश २५° तथा शरांश २५°३०' है। इससे पूर्व विधि से स्फुट क्रान्ति का साधन किया जा सकता है।
दिन-व्यास-दले प्राग्वत् तद्-योगार्द्धं हृति-र्भवेत्। मानांशा-स्त्रिज्यया-भ्यस्ता हृताप्ताः क्षेत्रजांशकाः॥६९॥
स्फुट क्रान्ति द्वारा द्युज्या का साधन होगा। दोनों द्युज्या (क्रान्ति-वृत्तीय और विषुव-वृत्तीय) का योगार्द्ध हार कहलाता है। मानांश को त्रिज्या से गुणा कर हार से भाग देने पर प्राप्त फल क्षेत्रांश (क्रान्ति-वृत्तीय अंश) होगा।
स्युस्ते लग्ना सुगणिताः ख-ख-नाग-मही (१८००) हृताः। कालांशाः स्युस्ततो मान-भागा व्युत्क्रम-कर्म्मतः॥७०॥
क्षेत्रांश को राशि के उदयासु से गुणा कर (१८००) से भाग देने पर फल कालांश होता है। इस प्रकार मरीचि और क्रतु का कालांश आयेगा। विपरीत क्रिया से इस क्रिया द्वारा कालांश से मानांश निकलेगा।
एवं ध्रुव-भ्रान्ति-मार्गः खा-ङ्गा-ग्नि (३६०) क्षेत्र-भागकः।
अप्य-ष्टा-म्बुधि-लिप्ताश्च-वसु (८/४८) मानांश-सम्मितः॥७१॥
ध्रुव क्षेत्र के भ्रमण मार्ग का वृत्त ३६०° अंश होने से उसका मानांश (३६० x ८४)/३४३८ = ८'४८" मात्र है।
क्रान्ति-भेदे महर्षीणा-माकृतेः समता यदि।
स्यात् तदा-न्तर-कालांशाः क्रान्त्य-ल्पत्व-महत्त्वयोः॥७२॥
क्रान्ति बदलने पर सप्तर्षियों का आकार यदि स्थिर रहता है (क्रान्ति के साथ नहीं बदलता) तो क्रान्ति कम या अधिक होने पर-
क्रमा-दल्पाश्च भूयांसो भवेयु-र्द्युगण-क्रमात्।
कालांशा-न्तर-मेतेषां क्रान्ति-भेदे यदि स्थिरम्॥७३॥
उदयान्तर भी कम या अधिक होता है (क्रमानुसार द्युज्या अधिक या कम होने के कारण)। यदि क्रान्ति भेद होने पर सप्तर्षि ताराओं का कालान्तर स्थिर रहता है-
तदा-क्रऋते-र्हानि-वृद्धी स्याता-मृक्षान्तरांश-वत्।
स्थिरा क्रान्ति-र्यदैषां स्यात् कालांशाः स्यु-स्तदा स्थिराः॥७४॥
- तो क्रान्ति कम या अधिक होने पर तारा का पूर्व-पश्चिम अन्तर कम या अधिक अक्षांश अन्तर के समान होता है। यदि ताराओं की क्रान्ति स्थिर हो तो उनका कालांश भी स्थिर रहेगा।
क्षेत्रांशानां स्थिरत्वे स्यात् काल-मानाल्प भूरिता।
क्षेत्र मानांशयोः सिद्धिः कालभागांशयोरिव॥७५॥
क्षेत्रांश स्थिर रहने पर कालांश के साथ मानांश कम या अधिक होगा। कालांश और भागांश के समान ही कालांश और मानांश का परसपर सम्बन्ध निकलेगा।
नक्षत्राणां ध्रुवांशा ये ते कृता-यन-दृक्-क्रियाः।
उदिता एव विज्ञेया विक्षेपाश्च तथा स्फुटाः॥७६॥

यहां नक्षत्रों का जो ध्रुवांश दिया गया है, उसमें आयन दृक्-कर्म संस्कार किया हुआ है। इनका शर भी स्फुट अर्थात् ध्रुव प्रोत वृत्तीय है।

ग्रहाणा-मस्फुटो बाणः कदम्बा-भिमुख-स्थितः।
दृक्-कर्म्मणा ध्रुव-मुखः स्फुटः स्यात्-तारके-षु-वत्॥७७॥

ग्रहों का अस्फुट शर कदम्ब-प्रोत वृत्त में है। इसका दृक्-कर्म संस्कार करने से वह ध्रुव-मुख अर्थात् ध्रुव-प्रोत वृत्तीय होगा। जिस प्रकार ताराओं का स्फुट शर होता है।

प्राक्-पश्चा-च्चलनाद्-भानां क्रान्त्यन्तात् शर-साम्यतः।
क्रान्ति-भेद-स्ततो रात्रि-दिन-मानं पृथग्-भवेत्॥७८॥

क्रान्ति वृत्त से नक्षत्रों का कदम्ब प्रोतीय शर समान होने पर भी उनके पूर्व पश्चिम तल के कारण(ध्रुव प्रोतीय) क्रान्ति भिन्न होगी। अतः उनके दिन और रात्रि का मान भिन्न होगा।

यस्य सौम्या स्फुत-क्रान्ति-र्लम्बांशेभ्योऽधिका स्वतः।
तद्-भं सदो-दितं यस्य याम्या स्यात् तत्र दृश्यते॥७९॥

जिस नक्षत्र की स्फुट क्रान्ति अपने स्थान के लम्बांश से अधिक हो वह नक्षत्र वहां सदा उदित होगा (वहां उक्त नक्षत्र सदा दिखाई देगा)। उस नक्षत्र की दक्षिण स्फुट क्रान्ति लम्बांश से अधिक होने पर वह नक्षत्र उस स्थान पर सदा अस्त रहेगा, अर्थात् कभी दिखाई नहीं देगा।

ग्रहा-र्क्षा-न्तरजा लिप्ता ग्रह-भुक्त्या विभाजिताः।
दिनादिभिः फलै-र्योगो ग्रहे हीनेऽधिके ध्रुवात्॥८०॥

जिसग्रह का किसी नक्षत्र के साथ योग जानना हो उस ग्रह का आयन दृक्-कर्म संस्कार कर उसका और नक्षत्र के ध्रुव का अन्तर निकालते हैं। ग्रह नक्षत्र की अन्तर कला को ग्रह की स्फुट गति कला से भाग दे कर लब्धि दिन आदि होगी। ग्रह ध्रुव, नक्षत्र ध्रुव से कम होने पर उतने दिनों बाद योग होगा। ध्रुव से अधिक होने पर-

एष्यो गतो वक्रगे तो गतैष्यत्व-विपर्ययात्।
असकृत्-कर्म्मणा तुल्य-फले स्यातां ग्रहो-ड्डुनी॥८१॥

-उतने समय (दिन आदि) पहले योग हो चुका है। ग्रह वक्री होने पर ग्रह-नक्षत्र योग का क्रम उलटा होगा (ग्रह से नक्षत्र ध्रुव कम रहने पर उतने समय पहले योग हुआ, अधिक रहने पर बाद में योग होगा)। योग समय का स्फुट ग्रह और ध्रुव के अन्तर का पुनः अन्तर काल निकाल कर फिर योग काल निकालेंगे। बार बार ऐसा करने से ग्रह और नक्षत्र की कला समान होती है।

ग्रहस्या-यन-दृक्-कर्म्म कृत्वाथ ग्रह-तारयोः।
कार्य्ये दिन-निशा-माने स्फुत-क्रान्ति-चर-क्रमात्॥८२॥

इसके बाद ग्रह और नक्षत्र की अपनी अपनी स्फुट क्रान्ति और चर निकाल कर दिन और रात्रि मान का साधन होगा।

उदयेऽस्त-मये लग्न-मस्य्त-लग्नं प्रकल्प्य च।
तत्-समेऽर्के तदु-दय-मस्तं ज्ञात्वा-न्तरांशकैः॥८३॥

इससे ग्रह और तारा दोनों का उदय के समय उदय लग्न और अस्त के समय अस्त लग्न होगा। पहले कहे गये आक्ष दृक्-कर्म विधि से स्फुट रवि का अंश उतना ही होने पर उदय और अस्त का समय होगा।

कार्य्या तत्-समता प्राग्वद्-याम्य-सौम्या-न्तरं तयोः।
बिम्ब-भेदश्च निर्णेतुं शक्यते ग्रह-युद्ध-वत्॥८४॥

इसके बाद नक्षत्र उदयास्त प्रकरण की विधि से उदय और अस्त स्फुट होगा। उसके बाद भी अन्तर रहने पर पहले की तरह कला समान करेंगे। इसके बाद ग्रह योग विधि से ग्रह और नक्षत्र का उत्तर-दक्षिण अन्तर (ध्रुव प्रोतीय शरान्तर) तथा बिम्ब अन्तर का निर्णय करेंगे।

ब्रह्मे-ज्या-नल-चित्र-पित्र-दितयो मित्रे-न्द्र-शक्राग्नयः,
पौष्णा-म्भःपति-वैश्वदेव-सलिला (४/८/३/१४/१०/७/१७/
१८/१६/२७/२४/२१/२०) -नीषु क्रमात् खेचरैः।
भिद्यन्ते न पराणि (१/२/५/६/९/११/१२/१३/१५/१९/०/
२२/२३/२५/२६) तत्र दितिभं (७), सर्व्वैः सदा भिद्यते।
कादाचित्-कतया जला-न्त्य-दहनाः (२०/२७/३) शिष्टानि
(४/८/१०/१४/१६/१७/१८/२१/२४) तैः प्रायशः॥८५॥

रोहिणी, पुष्य, कृत्तिका, चित्रा, मघा, पुनर्वसु, अनुराधा, ज्येष्ठा, विशाखा, रेवती, शतभिषक्, पूर्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़-इन १३ नक्षत्रों का भेद ग्रह करते हैं। अश्विनी, भरणी, मृगशिरा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वा फाल्गुनी, हस्त, स्वाती, मूल, अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, पूर्व भाद्रपद और उत्तर भाद्रपद- इन १५ नक्षत्रों का भेद ग्रह नहीं कर पाते हैं। भेद्य नक्षत्रों में पुनर्वसु का सभी ग्रह भेद करते हैं। पूर्वाषाढ़, रेवती और कृत्तिका का कभी कभी भेद होता है। अन्य नक्षत्रोंका क्रान्ति के अनुसार प्रायः भेद होता है।

यस्य स्याद्-वृष-राशि-शक्र (१४) लव-गस्या-वाक्-शरोंऽश-द्वयात्,
स-त्र्यंशा (२/२०) दधिको भिनत्ति शकटं स्वायम्भुवं सग्रहः।
अन्यर्क्षा-कृति-भेद-भाग-कलना यन्त्रेण कार्य्या बुधै-
र्याम्योदग्-गमन-र्क्ष-भेदज-फलं ज्ञेयं श्रुतान्-मैहिरात्॥८६॥

वृष राशि के १४ अंश में जिस ग्रह की दक्षिण क्रान्ति २°२०' से अधिक हो वही रोहिणी (शकट आकार) का भेद कर सकता है। अन्य नक्षत्रों का ग्रह द्वारा भेदन होने पर ज्योतिर्विद् उनकी स्थिति यन्त्र वेध द्वारा स्थिर करते हैं। नक्षत्रों के आकार तथा उनके उत्तर या दक्षिण ग्रहोंकी गति का फल वराहमिहिर की बृहत् संहिता में देखा जा सकता है।

प्राक्-सिद्धानां ज्योतिषां स्थान-मित्थं,
प्रोक्तं व्यक्तं यानि भानी-तराणि।
खे लक्ष्यन्ते तत्-तदाख्यापि-सङ्ख्यया,
सङ्ख्या-वद्भिः ख्याति-माप्ता न पूर्व्वैः॥८७॥

प्राचीन काल से विख्यात कई नक्षत्रों की स्थिति इस प्रकार कही गयी। इसके अतिरिक्त और कितने नक्षत्र हैं, उनकी संख्या भी ज्ञात नहीं है। अश्विनी आदि के अतिरिक्त अन्य नक्षत्रों के बारे में यहां नहीं कहा गया है।

अथ व्योम्नि च्छायापथ इतिह-वैश्वानर-पथो-
ऽभिजिन्नामा सूक्ष्मै-र्घनतर-भचक्रै-र्निचुलितः।
प्रकाशात्मा वृत्ता-कृति-रनुमितो भ्राम्यति च य-
स्तदीयं संस्थानं कियदिह वदामि स्फुटतया॥८८॥

आकाश में अत्यन्त सूक्ष्म तारा गणों का सघन और वृत्ताकार मार्ग गतिशील दीखता है। इसको छाया पथ, वैश्वानर पथ या अभिजित् मार्ग कहते हैं। इसकी स्थिति के विषय में कुछ कहने की इच्छा है।

क्रान्ति-वृत्त-मयनान्तयोः स्पृसन्-उत्तरायणज-गोल-सन्धितः।
उत्तरे ख-रस (६०) भाग-दूरग-स्त्वन्य-गोल-युग-सन्धि-दक्षिणे॥८९॥

यह छायापथ वृत्ताकार है। क्रान्ति वृत्त को यह सायन कर्क और मकर आदि में स्पर्श करता है। पुनः सायन मेष से ६०° अंश उत्तर तथा सायन तुला विन्दु से दक्षिण दिशा में-

वह्नि-तर्क (६३) लव-दूरगोऽदिते (७) र्दक्षिणां-शभिदवाग्-दिशं गतः।
मूल (१९) तोय (२०) भिदसौ तथा-भिजिद्-
वैष्णवा (२२) न्तर उदग्-दिशं गतः॥९०॥

६३° अंश तक इसकी सीमा है। पुनर्वसु नक्षत्र के दक्षिण भाग को भेद कर यह वृत्त दक्षिण दिशा में जा कर फिर मूल और पूर्वाषाढ़ दोनों नक्षत्रों को भेद कर अभिजित् तथा श्रवण के बीच तक जाता है। वहां से उत्तर की तरफ जाता है।

याम्या-यनान्त-स्थलतो द्विफाल-भाक्,
ख-नाग (८०) भागान्त-मुदग्-दिशि स्थितः।
गोले विलिख्या-कृति-मस्य पश्यतां
यथा सुबोधो न तथा भवेद्-दिवि॥९१॥

कर्क के आदि विन्दु से यह २ भागों में उत्तर की तरफ ८०° तक जाता है। छाया को गोल के ऊपर लिख कर आसानी से दिखाया जा सकता है। आकाश में दिखाना सम्भव नहीं है (क्योंकि आधा ही दीखता है)।

१४. क्षितिज वृत्त के त्रिभुज

(१) चित्र में S सूर्य या आकाश गोल का अन्य ग्रह या तारा है। S से क्षितिज तल पर SA लम्ब है। R उदय विन्दु तथा T अस्त विन्दु है। S से SB उदय-अस्त रेखा RT पर लम्ब है। A से RT पर लम्ब AB है।

OS = R = वृत्त का व्यासार्द्ध = ३४३८ (३४३७'४४') जहां परिधि को ३६० अंश = २१,६००' कला मान रहे हैं।

$\angle$ SOA = S का उन्नतांश = a। S की उच्चता = SA = R sin a = शंकु। SB (कर्ण) = इष्ट हृति (या धृति, स्वधृति, इष्टधृति, निजधृति आदि)

AB = शंकुतल या शंक्वग्र।

$\angle$ ASB = φ , अतः Δ ASB = अक्ष त्रिकोण। इसमें-

आधार	लम्ब (उच्चता)	कर्ण	
शंकुतल	शंकु या R sin a	स्वधृति या इष्टधृति	(१)

(२) यदि S आकाश के सर्वोच्च विन्दु पर हो, तो SA = समशंकु, AB = अग्रा, SB = समधृति या तद्-धृति।

आधार	उच्चता	कर्ण	
अग्रा	समशंकु	तद्-धृति	(२)

(३) यदि S आकाश के सर्वोच्च विन्दु पर हो तथा A से तद्-धृति SB पर लम्ब AC है, तो २ त्रिभुज ACB तथा ACS बनते हैं। AC = R sin δ जहां δ सूर्य की क्रान्ति (उत्तर या दक्षिण झुकाव, Declination) है। CB = क्षितिज्या (कुज्या, भूज्या, महाजीवा आदि, Earth-sine)। SC = तद्-धृति-कुज्या।

आधार	उच्चता	कर्ण	
क्षितिज्या	R sin δ	अग्रा	(३)
R sin δ	तद्-धृति	समशंकु	(४)

(४) जब सूर्य विषुव वृत्त पर लम्ब हो तथा आकाश गोल में मध्याह्न में स्थान S है, क्षितिज पर लम्ब SA है, आकाश गोल का केन्द्र O है, तब SAO भी एक क्षितिज त्रिकोण बनता है। यहां $\angle$ OSA = φ।

आधार	उच्चता	कर्ण	
R sin φ	R sin δ	R	(५)

(५) जब सूर्य विषुव वृत्त पर लम्ब हो, तब मध्याह्न के समय शंकु (१२ इकाई उच्चता का स्तम्भ जो स्थायित्व के लिए शंकु आकार का होता है) की मध्याह्न छाया = पलभा (अक्षभा, पलच्छाया, विषुव छाया आदि) है। मध्याह्न छाया के कर्ण को पल-कर्ण (पलश्रवण, अक्षकर्ण, अक्षश्रुति आदि) कहते हैं। शंकु-पलभा-अक्षकर्ण से बने त्रिभुज का प्रयोग उत्तर-दक्षिण दिशा, अक्षांश आदि की माप में होता है।

आधार	उच्चता	कर्ण	
पलभा	शंकु (१२)	पलकर्ण	(६)

सूर्य की उच्चता के २ त्रिभुज बनते हैं-

आधार	उच्चता	कर्ण	
(१) शंकु	दृग्-ज्या (नतज्या)	कर्ण	
R sin a	R sin Z	R	(७)
(२) १२ अंगुल, शंकु	छाया	छाया-कर्ण	(८)

१५. गोलीय माप

किसी मूल विन्दु से सतह पर माप २ दिशाओं में होती है-पूर्व पश्चिम रेखा पर, या उत्तर-दक्षिण रेखा पर।

अन्य विधि है, मूल विन्दु से अन्य विन्दु की दूरी निकाली जाय और किसी सन्दर्भ रेखा से उसका दिशा का कोणीय अन्तर निकाला जाय।

आयत रूप में मूल विन्दु O से विन्दु P की दूरी X दिशा में x, Y दिशा में y।

वृत्ताकार रूप में मूल विन्दु O से P विन्दु की दूरी r, मूल रेखा OX से कोण θ ।
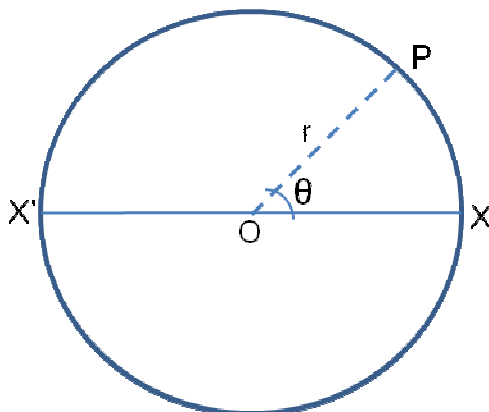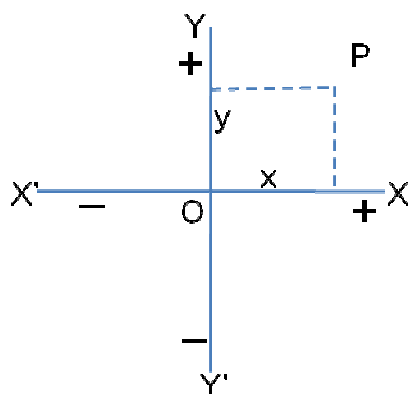
इन पद्धतियों में २ नियामक या निर्देशांकों की आवश्यकता है (x, y) या (r, θ)। अतः सतह २ आयाम का है।

आकाश ३ आयाम का है, अतः ३ निर्देशांक की आवश्यकता है। इसकी ३ पद्धतियां हैं।

समकोण दिशाओं में X, Y, Z दिशाओं में दूरी x, y, z।

बेलन आकार में समतल की वृत्तीय माप के अतिरिक्त दिशा में ऊंचाई (r,θ, z) ।

गोलीय पद्धति में मूल विन्दु से दूरी, मूल रेखा से कोण θ तथा सतह वृत्त के लम्ब दिशा में कोण ∠ ।
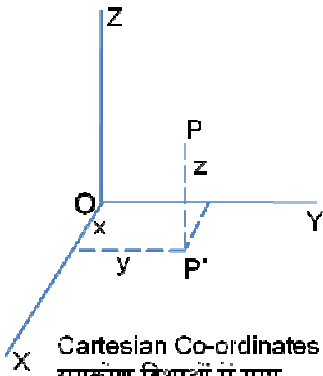
Cartesian Co-ordinates
समकोण दिशाओं में माप
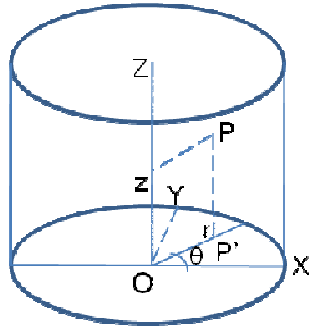
Cylindrical Polar Co-ordinates
बेलनाकार निर्देशांक
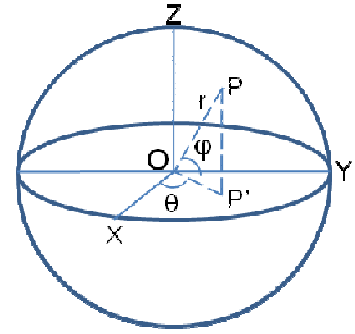
Spherical Polar Co-ordinates
गोलीय निर्देशांक

गोलीय त्रिकोणमिति-गोल सतह को किसी समतल से काटने पर वृत्त बनता है। जब यह सतह केन्द्र O से गुजरता है तो सबसे बड़ा वृत्त (MOM') होता है, उसे बृहत् या महा वृत्त कहते हैं। अन्य वृत्त (BAC) छोटे हैं, उनको लघु वृत्त कहते हैं। महावृत्त सतह पर जिस रेखा में काटता है, उसे गोल पृष्ठ पर सरल रेखा (MM') कहते हैं। POQ महावृत्त पर लम्ब रेखा है। इसके २ छोर P, Q ध्रुव हैं।
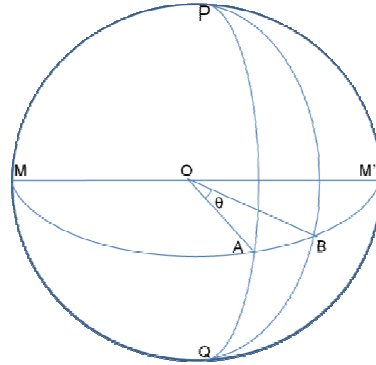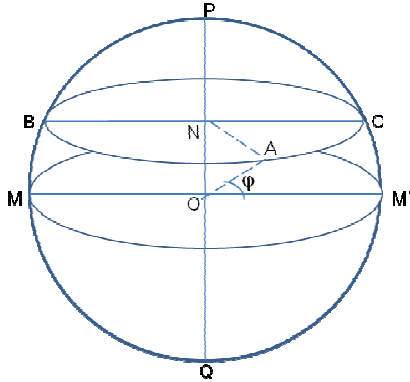
पृथ्वी को गणना के लिए पूर्ण गोल मान लेते हैं। P, Q उत्तर तथा दक्षिण ध्रुव (North and South Pole) हैं, जिनको मेरु (सुमेरु) तथा कुमेरु कहते हैं। MM' विषुव वृत्त है। इसके समानान्तर उत्तर या दक्षिण के लघु वृत्तों को अक्ष वृत्त कहते हैं, जैसे BAC वृत्त है। इसके सतह विन्दु A का विषुव वृत्त MOM' के तल से कोण $\varphi = \angle AOM$ अक्ष कोण है, इसकी माप अंश-कला-विकला में करने पर यह अक्षांश (Latitude) है।

ध्रुवों P, Q के बीच असंख्य रेखायें हो सकती हैं जो विषुव वृत्त पर लम्ब महावृत्तों के कटने से बनते हैं। इसमें किसी एक रेखा PAQ को शून्य अंश पर मान लेते हैं (Prime Meridian)। प्राचीन काल में इस रेखाका विषुव से कटान विन्दु A लंका नगर था। लंका समुद्र में डूबने पर उसी रेखा पर २२.५ उत्तर अक्षांश पर स्थित उज्जैन की रेखा को शून्य अंश पर माना गया। इस मूल रेखा या अन्य रेखाओं को देशान्तर रेखा कहते हैं। किसी स्थान का देशान्तर जानने के लिए उस स्थान से गुजरती ध्रुव रेखा PBQ लेते हैं जो विषुव वृत्त को B पर काटती है। कोण $\angle AOB = \theta$ उस रेखा PBQ पर स्थित सभी स्थानों का देशान्तर (Longitude) हुआ। पिछले १५० वर्षों से ब्रिटेन के लन्दन निकट ग्रीनविच से गुजरती देशान्तर रेखा को शून्य मानते हैं, जिससे उज्जैन ७५ अंश ४३' पूर्व है।

ज्योतिष की निर्देशांक पद्धतियां

(१) क्षितिज निर्देशांक- अपने स्थान (स्वस्थान) O से हर दिशा में जहां तक आकाश पृथ्वी की सतह को छूता दीखता है, वह क्षितिज वृत्त NESW है। इसके ४ मुख्य विन्दु हैं- पूर्व E, पश्चिम W, उत्तर N, दक्षिण S। उत्तर क्षितिज विन्दु N से आकाश के सर्वोच्च विन्दु V से होकर दक्षिण क्षितिज विन्दु S तक जाती हुई NVS मध्याह्न रेखा या याम्योत्तर

है। आकाश के एक अन्य विन्दु P से गुजरती हुई उत्तर-दक्षिण रेखा NPS है। P विन्दु की क्षितिज तल से ऊंचाई का कोण a उन्नतांश है। OP से गुजरता क्षितिज पर लम्ब तल का पूर्व दिशा से कोण A दिगंश है (दक्षिण दिशा में)।
इसके कुछ मुख्य दीर्घवृत्त हैं-(१) सममण्डल-पूर्वपश्चिम तथा ऊर्ध्व विन्दु से दीर्घवृत्त। (२) उन्मण्डल = पूर्व-पश्चिम और ध्रुव से दीर्घवृत्त। उसी देशान्तर पर यह विषुव रेखा का क्षितिज वृत्त है। (३) दृक्-मण्डल = ऊर्ध्व विन्दु तथा किसी ग्रह से दीर्घवृत्त।

याम्योत्तर रेखा से विभाजित आकाश का पूर्व भाग पूर्व कपाल तथा पश्चिम भाग पश्चिम कपाल है। इनको मित्र-वरुण भाग भी कहते हैं। इस रेखा के उत्तर और दक्षिण विन्दु वसिष्ठ और अगस्त्य हैं, जिनको मैत्रा-वरुण (मित्र-वरुण का पुत्र) कहते हैं। याम्योत्तर रेखा से क्षितिज दिशा में किसी विन्दु का कोण नत-अंश है।

(२) मुख्य दिशा निर्धारण -चुम्बकीय सूई पृथ्वी के चुम्बकीय ध्रुव की दिशा दिखाती है। पृथ्वी घूर्णन अक्ष की दिशा उत्तर-दक्षिण दिशा है जिसके छोर पर ध्रुव हैं। उत्तर ध्रुव की दिशा केवल ज्योतिषीय पद्धति से ही जान सकते हैं। इसका सिद्धान्त है कि सूर्य के उच्चतम विन्दु पर रहने से उससे किसी स्तम्भ की छाया सबसे छोटी होती है तथा उत्तर दक्षिण दिशा में होती है। सूर्य जब अपने स्थान से दक्षिण दिशा में हो तो सबसे छोटी छाया उत्तर दिशा में होती है। इसी थिति के बारे में वर्णन किया जा रहा है। किन्तु छाया कब सबसे छोटी होगी, यह जानना बहुत कठिन है कि अब छाया इससे छोटी नहीं होगी तथा पुनः बड़ी होने लगेगी। अतः मध्याह्न से पहले तथा बाद में जब छाया समान होती है तो वे उत्तर दिशा से समान दिशा में पूर्व तथा पश्चिम होती हैं। इनकी दिशा जानने के लिए स्तम्भ केन्द्र से एक वृत्त खींचते हैं जिसकी त्रिज्या लघुतम छाया से पर्याप्त बड़ी होगी, तथा सूर्योदय छाया से छोटी होगी। सूर्योदय समय सूर्य पूर्व दिशा में होगा तथा उसके कारण स्तम्भ की छाया पश्चिम दिशा में होगी। सूर्य जैसे जैस् क्षितिज से ऊपर उठेगा, उसकी छाया छोटी होती जायेगी और वृत्त की परिधि को छू कर उसके भीतर गति करने लगेगी। मध्याह्न काल में सबसे छोटी होने के बाद छाया पूर्व दिशा में बढ़ने लगेगी और पुनः वृत्त परिधि को छुएगी। जिन दो विन्दुओं पर छाया वृत्त को छूती है, वृत्त केन्द्र से उनकी दिशाओं के कोण को विभाजित करने वाली रेखा खींचते हैं। इस के लिए २ विन्दुओं से उनकी दूरी के आधे से अधिक त्रिज्या के २ वृत्त खींचते हैं। इनका मिलन भाग मीन (मछली) जैसा होता है, जिसके छोरों को मिलाने वाली रेखा उत्तर दिशा में होगी। इन विन्दुओं के बीच छाया का शीर्ष कुतुप (कुप्पी) आकार का होता है जिसे मीन द्वारा विभाजित करते हैं। अतः इसे कुतुप-मीन तथा ऐसे बड़े स्तम्भ को कुतुप-मीन कहते हैं। प्रायः ऐसा ही काम चुम्बकीय सूई सेहोता है, जिसे कुतुब-नुमा कहते हैं।

(३) शङ्कु - शङ्कु के २ अर्थ हैं- शङ्कु आकार के स्तम्भ से ज्योतिष में काल या सूर्य स्थिति की माप होती है। शङ्कु द्वारा विश्व के धारण का अर्थ है कि शांकव छेद के आकारों वृत्त, दीर्घवृत्त आदि कक्षाओं में तारा तथा ग्रह स्थिर रहते हैं।

तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः॥ (ऋक्, १/१६४/४८)

शङ्कु भवत्यह्नो धृत्यै यद्वा अधृतँ शङ्कुना तद्दाधार॥११॥

तद् (शङ्कु साम) उ सीदन्तीयमित्याहुः॥१२॥ (ताण्ड्य महाब्राह्मण, ११/१०)

यहां शङ्कु साम एक माप है। शङ्कु = १० घात १३ (शंख)। पृथ्वी व्यास का १० घात १३ गुणा कूर्म चक्र है जिसने ब्रह्माण्ड (आकाशगंगा) को धारण किया है। यह ब्रह्माण्ड का १० गुणा है, जिसे ब्रह्मवैवर्त्त पुराण, प्रकृति खण्ड, अध्याय ३ में गोलोक कहा है जिसमें ब्रह्माण्ड रूपविराट् बालक की उत्पत्ति होती है। आज कल इसे ब्रह्माण्ड का आभा मण्डल (Neutrino Corona) कहते हैं।

शङ्कु और उसके छेद

गुरुत्व क्षेत्र मे वृत्त में गति अपसारक बल = गुरुत्व
गति थोड़ा अधिक होने पर दीर्घवृत्त
गुरुत्व सीमा से बाहर निकलने की गति-परवलय
उससे भी अधिक गति -अतिपरवलय
वृत्त की गति से कम होने पर वह केन्द्र के निकट जायेगा।
गति बढ़ जाने से निकट कक्षा में। बहुत कम होने से केन्द्र में लीन।
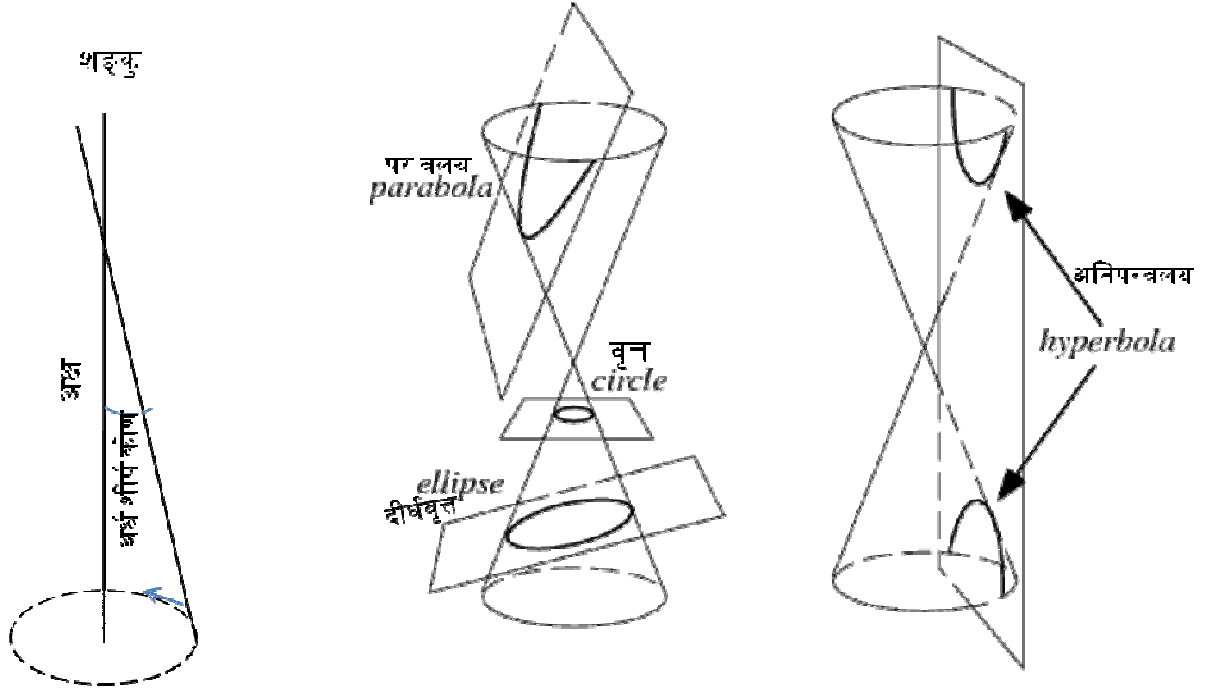
(२) **विषुव वृत्तीय निर्देशांक**-पृथ्वी के विषुव वृत्त तथा गोल को आकाश में अनन्त दूरी तक विस्तार करने से खगोलीय विषुव निर्देशांक होते हैं। इसमें २ पद्धति हैं। अपने स्थान की याम्योत्तर (ऊर्ध्व विन्दु या ख-स्वस्तिक तथा उत्तर दक्षिण ध्रुवों से रेखा) से पूर्व दिशा में जो कोण है उसे होरा कोण (Hour angle H) कहते हैं। विषुव वृत्त की दिशा में ३६० अंश परिक्रमा में पृथ्वी को २४ घण्टा लगता है, अतः १ अंश = २४/३६० घण्टा = ४ मिनट। निरक्ष से उत्तर दिशा में कोण को Declination δ कहते हैं।

भारत में शून्य विन्दु २ प्रकार के हैं। आंख से या दूरवीक्षण से देखने पर स्थिर नक्षत्रों की तुलना में ग्रह स्थिति देखते हैं। मेष राशि का शून्य अंश M से कोण की माप होती है। किन्तु गणना के लिए जिस विन्दु पर विषुव वृत्त तथा क्रान्ति वृत्त मिलते हैं, उसे शून्य मानते हैं, क्योंकि इस विन्दु से गोलीय त्रिभुज बनता है। दोनों वृत्त २ विन्दुओं पर काटते हैं। जिस विन्दु K पर क्रान्ति वृत्त विषुव से उत्तर जाता है (या जब सूर्य उत्तर दिशामें विषुव वृत्त पर लम्ब होता है, सूर्य का आकाश में वह स्थान) शून्य होता है। K तथा M का कोणीय अन्तर KM अयनांश कहते हैं। यह धीरे धीरे बढ़ता है क्योंकि पृथ्वी का घूर्णन अक्ष NS लट्टू की तरह विपरीत दिशा में २६,००० वर्षों में एक परिक्रमा कर रहा है। अयन गति की व्याख्या के साथ उसके चित्र हैं।

विषुव वृत्त पर कोणीय दूरी MNL कालांश θ है (Right Ascension = RA), उससे उत्तर या दक्षिण ध्रुव दिशा में कोणीय दूरी POL क्रान्ति φ (Declination) है।
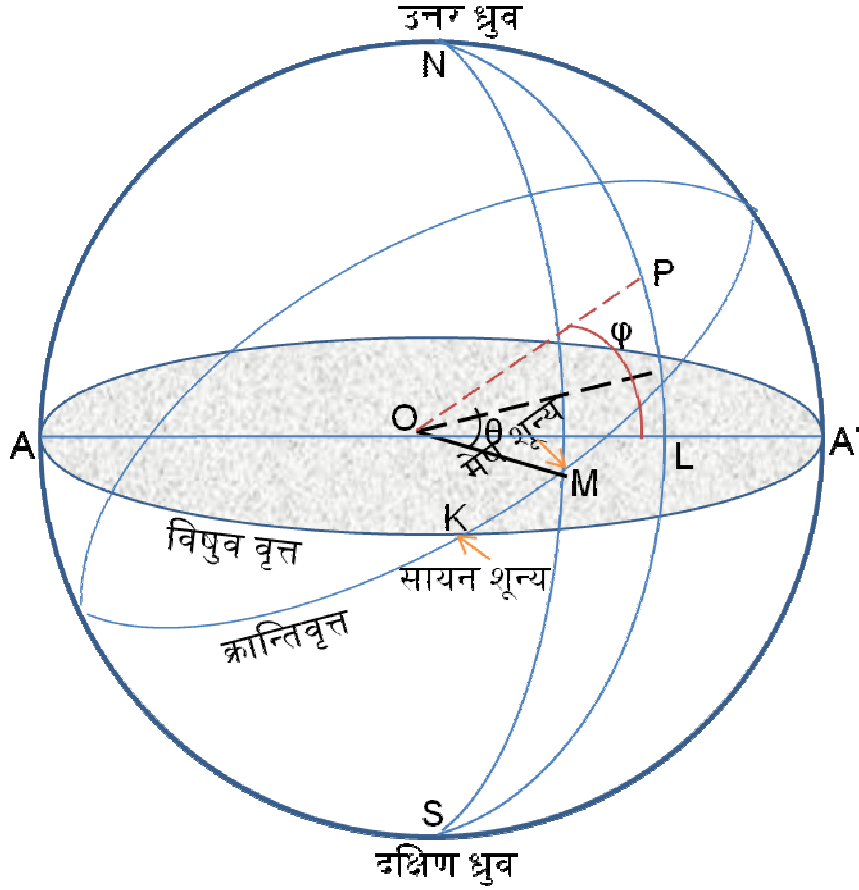
(३) क्रान्ति वृत्त-इस वृत्त पर मेष शून्य से पूर्व दिशा में ग्रह का कोण उसका राशि अंश कहते हैं। आकाश में मेष शून्य अंश ही दीखता है। गणना से निकालते हैं कि सूर्य किस स्थान पर विषुव वृत्त पर लम्ब था। वहां से राशि अंश जानने के लिए अन्तर अयनांश जोड़ना पड़ता है, अतः इसे सायन अंश कहते हैं।

क्रान्ति वृत्त से लम्ब दिशा (ध्रुव प्रोत वृत्त पर) में कोण को शर या विक्षेप कहते हैं।

क्रान्तिवृत्त पर शून्य विन्दु से दूरी खगोलीय रेखांश तथा उस पर लम्ब दिशा में शर को खगोलीय अक्षांश कहते हैं।

क्रान्ति वृत्त से ऊपर (रेखांश दिशा में पेंच खोलने पर जिस दिशा में जाता है) वह कदम्ब है। नीचे का या दक्षिण ध्रुव कलम्ब है।

१६. आकाशगंगा

ब्रह्माण्ड का केन्द्रीय चक्राकार भाग रात्रि में प्रकाशित पथ जैसा दीखता है। इसका दिन की तुलना में कम प्रकाश है, अतः इसे छाया-पथ या तारापथ कहते हैं।

छायापथः देवपथः सोमधारा नभः सरित् (त्रिकाण्ड-शेष, १/२/१६)

तारापथोऽन्तरिक्षं च मेघाध्वा च महाविलम् (अमरकोश, १/२/३२)

नक्षत्रमार्गं विपुलं सुरवीथीति विश्रुतम् (महाभारत, वन पर्व, ४३/१२)

केन्द्रीय चक्र के घूमने से इसके विरल पदार्थ (सोम = मद्य) भी घूमता है अतः इसे सोम-धारा कहते हैं।

सोमस्य धारा पवते (ऋक्, ९/८०/१)

अयम् विश्वानि तिष्ठति पुनानः भुवनोपरि। सोमः देवः न सूर्य्यः (ऋक्, ९/५४/३)

राजा सिन्धूनाम् पवते पतिः दिवः ऋतस्य याति पथिभिः (ऋक्, ९/८६/३३)

दिवः विष्टम्भमुत्तमः (ऋक्, ९/१०८/१६)

दिवा हरिः ददृशे नक्तम् ऋजः (ऋक्, ९/९७/९)

मद्य समुद्र- यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्त।
य उ त्रिधातु पृथिवीमुत द्यामेको दाधार भुवनानि विश्वा॥४॥

तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति।
उरुक्रम्स्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः॥५॥ (ऋक्, १/१५४/४-५)

इसकी सर्पाकार भुजा को अहिर्बुध्न्य (समुद्र का सर्प) या पुराण भाषा में शेषनाग या अनन्त कहते हैं। सर्पाकार भुजा लगातार नहीं है।

उत नो अहिर्बुध्न्यः शृणोतु अज एकपात् पृथिवी समुद्रः (ऋक्, ६/५०/१४, वाज. यजु, ३४/५३, मैत्रायणी सं, ८८/१२, निरुक्त, १२/३३)

शेष अनन्त है, जिसका केन्द्र मूल नक्षत्र में हमसे ३०,००० प्रकाश वर्ष दूर है-

अस्य मूलदेशे त्रिंशयोजन (यहां योजन = प्रकाश वर्ष) सहस्रान्तर आस्ते या वैकला भगवतस्तामसी समाख्यातानन्त इति सात्वतीया द्रष्टृदृश्ययोः सङ्कर्षणमित्याचक्षते (भागवत पुराण, ५/२५/१)

अस्य मूल प्रदेशे हि त्रिंशत् साहस्रकेऽन्तरे॥१७॥
योजनैः परिसंख्याते तामसी भगवत् कला।
अनन्ताख्या समास्ते हि सर्वदेवप्रपूजिता॥१८॥
(देवी भागवत पुराण, ८/२०/१७-१८)

स्कन्द पुराण, अध्याय (३/१/१४) तथा लिंग पुराण अध्याय १७ में ब्रह्माण्ड के केन्द्रीय स्तम्भ को महालिंग कहा है, जिसके छोर की खोज में वराह रूपी विष्णु १००० वर्ष तक नीचे गये और हंस रूपी ब्रह्मा ऊपर दिशा में।

ब्रह्माण्ड की नदी-

(१) गंगा-सर्पाकार भुजा के ७ खण्ड हैं जिनको आकाश में गंगा की ७ धारा कहा गया है। इसके अनुरूप जम्बू द्वीप में ७ गंगा, भारत में गंगा की ७ धारा तथा अन्य द्वीपों की ७ मुख्य नदियों को गंगा कहा गया है।

सप्त प्रवत आदिवम् (ऋक्, ९/५४/२)

अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुः (ऋक्, ८/९६/१)

वर्तमान काल में इन धाराओं के नाम हैं ३०००० परसेक तथा पर्सीयस, नोर्मा तथा बाहरी भुजा, स्कुटम-सेण्टारस भुजा, करीना-दहु भुजा, ओरियन-साइग्नस जिसमें सूर्य है। (3kpc-1.Perseus, 1a-Norma, 2. Scutum Centaunus, 2a-Carina-Sahittarius, 2b-Orion Cygnus, 1a-outer, 1a-New outer)
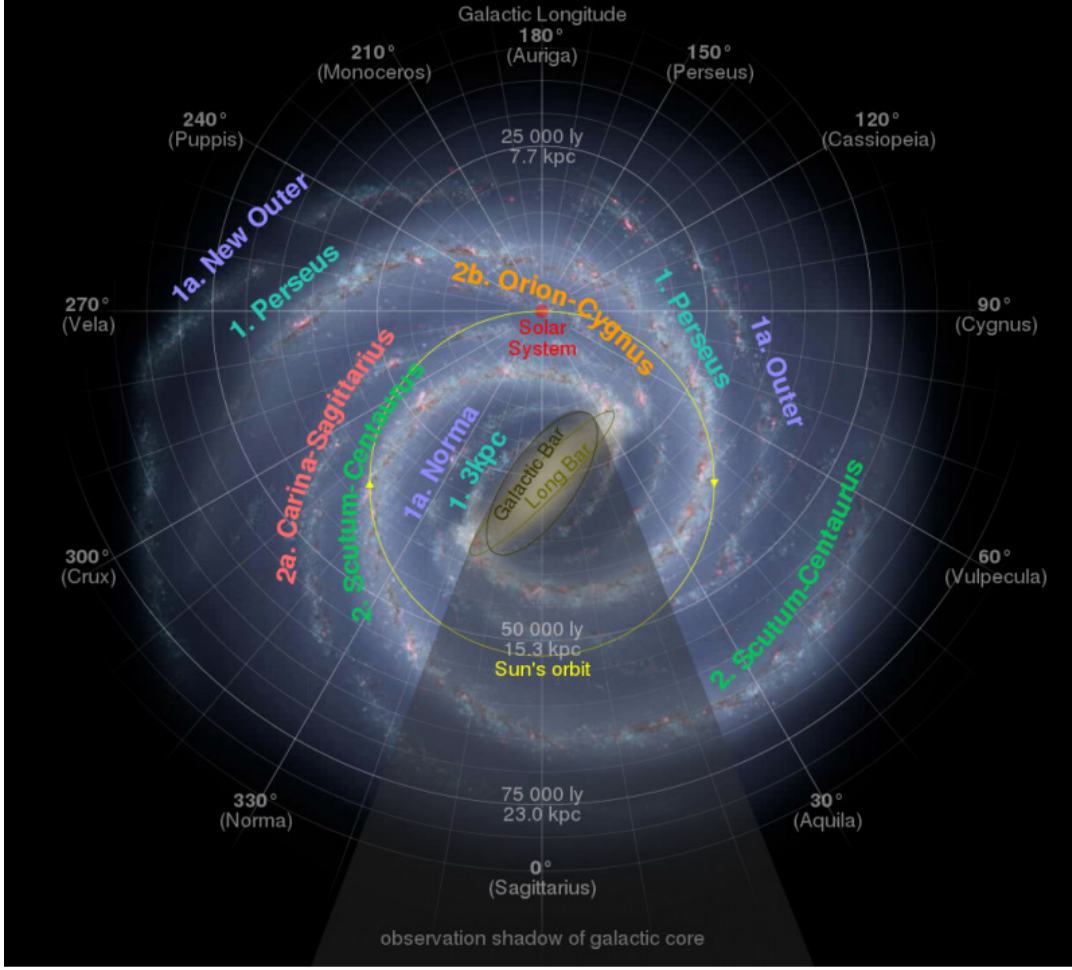
ततो विसृज्यमानायाः स्रोतस्तत् सप्तधा गतम्। तिस्रः प्राचीमभिमुखं प्रतीचीं तिस्र एव तु॥३९॥
नद्याः स्रोतस्तु गंगायाः प्रत्यपद्यत सप्तधा। नलिनी ह्लादिनी चैव पावनी चैव प्राच्यगाः॥४०॥
सीता चक्षुश्च सिन्धुश्च प्रतीचीं दिशमास्थिताः। सप्तमी त्वन्वगात्तासां दक्षिणेन भगीरथम्॥४१॥

(ब्रह्माण्ड पुराण, १/२/१८)

शकद्वीप (स्तम्भ जैसे शक वृक्षों या ३०० प्रकार युकलिप्टस का द्वीप आस्ट्रेलिया) की ७ गङ्गा-
शाको नाम महावृक्षः प्रजास्तस्य महानुगाः॥२७॥
तेषु नद्यश्च सप्तैव प्रतिवर्षं समुद्रगाः। द्विनाम्ना चैव ताः सर्वा गङ्गाः सप्तविधः स्मृताः॥२९॥

(मत्स्य पुराण, १२२/२७-२९)

क्रौञ्च द्वीप (उड़ते पक्षी जैसा उत्तर अमेरिका) की सप्त गंगा-
घृतोदकः समुद्रो वै क्रौञ्चद्वीपेन संवृतः। चक्रनेमि प्रमाणेन वृतो वृत्तेन सर्वशः॥७९॥
गोविन्दात् परतश्चापि क्रौञ्चस्तु प्रथमो गिरिः॥८१॥ श्रुतास्तत्रैव नद्यस्तु प्रतिवर्ष गताः शुभाः॥८७॥
गौरी कुमुद्वती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजवा। ख्यातिश्च पुण्डरीका च गङ्गा सप्तविधा स्मृता॥८८॥

(मत्स्य पुराण, १२२/७९-८८)

(२) विरजा नदी-यह ब्रह्माण्ड के ७ आवरणों के बाद गोलोक में है, जहां से तपः लोक आरम्भ होता है। इस स्थान के वैराज देव हैं।

अष्टमावरणं व्योम्नोरन्तरा विरजा नदी।
पञ्चयोजन विस्तीर्णा समन्तात् परिधीकृता॥

(गरुड़ पुराण, ब्रह्मखण्ड, १०/१७)

ऊर्ध्वं तु सीम्नि विरजा निस्सीमाधस्सनातनी।
तयादृतं जगत् सर्वं स्थूल सूक्ष्माद्यवस्थया॥

(पद्म पुराण, उत्तरखण्ड, २२७/५५)
चतुर्गुणोत्तरे चोर्ध्वं जनलोकात्तपः स्थितम्।
वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता दाह विवर्जिताः।
(विष्णु पुराण, २/७/१४)
वैराजा नाम देवाः (अथर्व सं, ३/२६/३)

(३) यमुना नदी-सौर मण्डल के ग्रहों की सीमा यम है। सौरमण्डल की सीमा पर प्रवाह यमुना है। या ब्रह्माण्ड की सीमा के भीतर का प्रवाह यमुना है जो ७ x ७ = ४९ मरुत् के बाद है। यह ब्रह्माण्ड की भीतरी सीमा है, बाहरी सीमा पर गोलोक में विरजा नदी है।
सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता ददुः।
यमुनायामधि श्रुतमुद् राधो गव्यं मृजे, नि राधो गव्यं मृजे।
(ऋक्, ५/५२/१७)

(४) सरस्वती नदी-ब्रह्माण्ड में फैला अप् (विरल पदार्थ) का समुद्र सरस्वान् है। उसका चक्रीय प्रवाह सरस्वती है, जो सबसे बड़ी नदी है।
महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना। धियो विश्वा विराजति। (ऋक्, १/३/१२, वाज. यजु, २०/८६)
सरस्वतीति तद् द्वितीयं वज्रं रूपम् (कौषीतकि ब्राह्मण, १२/२)
ब्रह्माण्ड में जितने कण (तारा) हैं, उतने ही मनुष्य मस्तिष्क के कण (कलिल, न्यूरोन्), अतः ब्रह्माण्ड समुद्र की नदी सरस्वती ज्ञान रूपिणी है।
यावन्त्येतानि नक्षत्राणि तावन्तो लोमगर्त्ताः। (शतपथ ब्राह्मण, १०/४/४/२)
मनो वै सरस्वान् (शतपथ ब्राह्मण, ७/५/१/३१, ११/२/४/९)
वाक् सरस्वती (शतपथ ब्राह्मण, ७/५/१/३१, ११/२/४/९)
ब्रह्माण्ड की १२ वीथियों के तारागणों के नाम नीचे दिये जाते हैं।
सन्दर्भ-PopularHindu Astronomy-Kalinath Mukherji, 1905, 1969

१७. मेष वीथी

प्रथम वीथी- यह आकाशीय विषुव-वृत्त पर मेष शून्य तथा उसके अन्त ३० अंश से गुजरती उत्तर तथा दक्षिण ध्रुवों के बीच की रेखाओं से घिरा क्षेत्र है। सभी वीथी उत्तर तथा दक्षिण दोनों गोल में हैं। मेष वीथी में ६ नक्षत्र मण्डल हैं-

(१) पर्शु मण्डल- ग्रीक नाम परसीयस (Perseus)। यह वीथी १ में सबसे ऊपर (उत्तर) ब्रह्म मण्डल (Auriga) के निकट है। इसमें २९ तारा दीखते हैं तथा सुर-नदी आकाशगंगा इससे गुजरती है। धनुष आकार के तारा हैं-८, ३, १, ६, १७ पर्शोः (η, γ, α, δ, μ Persei)। कुठार आकार के तारा हैं-३, ११, १३, १२ पर्शोः (γ, τ, θ, ι Persei)| कुठार दण्ड रूप तारा हैं-१, २ पर्शोः (α, β Persei) जिनको ग्रीक में मीरफाक तथा अल्गोल भी कहते हैं| ग्रीक कथा के अनुसार सूर्य देवता परसीयस ने ३ गोर्गन बहनों में एक का सिर काट कर अपने हाथ में पकड़ा था। पौराणिक कथा के अनुसार पिता जमदग्नि (अग्नि रूप) के कहने पर परशुराम ने माता रेणुका (आकाशगंगा की रेणु रूप) का सिर काटा था और शुद्धि के लिए ब्रह्म कुण्ड में स्नान किया था। ब्रह्म मण्डल इसके निकट है। तारा रूप में वर्णन है-
यन्मध्ये पुरुषः शुद्धः किरीटी नीलवाससा।
रत्नदाम्नाय विद्धाङ्गः दुष्प्रेक्ष्यः ज्योतिषाम् गणः॥
ततः रामः इति ख्यातः प्रजातः अयम् भृगोः कुले। (पद्म पुराण, १/४९)
मायावती (ग्रीक अल्गोल)-रूपं रूपं मघवा बोभवीति मायाः कृणानः तन्वम् (ऋक्, ३/५३/८)
रेणुका मुण्ड-७ पर्शोः (ρ Persei)।

(२) त्रिकोण मण्डल (ग्रीक- डेल्टोटन, Deltoton, लैटिन ट्रेंगुलम Triangulum)-इसे मूल कीलक भी कह सकते हैं, क्योंकि यहां से मेष आदि राशियों का आरम्भ होता है।
विषुवत् क्रान्ति वृत्त-ऐक्पात् पूर्व्वभाग स्थिताः स्थिराः।

मेषाद्याः राशयः क्रान्ति वृत्तयः पूर्व दिक् क्रमात्। (मुनीश्वर)।
(३) मेष मण्डल (ग्रीक क्रियोस, Krios, लैटिन ऐरिस, Aries), स्वामी -मंगल। इसमें १८ दृश्य तारा हैं। इसका मेष नाम सूर्य के तेज रूप इन्द्र से है जिनको मेष कहा है, मेष प्रकाश जैसा सीधा चलता है- त्यं सु मेषं महया स्वः (ऋक्, १/५२/१)। इस राशि में प्रथम २ नक्षत्र अश्विनी, भरणी हैं (कृत्तिका से गिनने पर अन्तिम २)। अश्विनी के तारा मेष की पूंछ तथा भरणी के तारा सिर हैं।
अश्विनी या अश्वयुजौ (तैत्तिरीय ब्राह्मण) के देवता अश्विनौ हैं। इसके ३ तारा घोड़े के सिर जैसे हैं-१, २, ४ मेषस्य (α, β, γ, Arietis)-तन्वि घोटकमुखाकृतौ त्रिभे (कालिदास कृत रात्रिलग्ननिर्णयः)। १ मेषस्य इसका योगतारा है।
अपाभरणी या भरणी नक्षत्र-यम देवता। इसके ३ तारा हैं-३, ६, ९ मेषस्य (= 41, μ, 36 Arietis)
(४) तिमि मण्डल (सुमेरिया-कुमर = कृष्ण, ग्रीक केटोस = तिमिंगल, व्हेल) इसमें २२ दृश्य तारा हैं। इनमें १ तिमि (= o Ceti) को ग्रीक में मीरा कहते हैं। यह रूप बदलता रहता है, अतः इसे कामरूप भी कह सकते हैं, जिसका परिवर्तन चक्र ३३१ दिन ८ घण्टे का है। इसका मन्द होना काम की मृत्यु तथा उसके बाद पुनः उत्पन्न होने जैसा है।
(५) यज्ञकुण्ड मण्डल -ला कैले ने इसे १७५२ में फर्नेस नाम दिया था जिसका अनुवाद किया है।
(६) यामी मण्डल-ग्रीक-एरिडानोस, पोटामस (Eridanos, Potamos)-यह आकाश की यमुना नदी है जो ब्रह्माण्ड की सीमा पर है।
प्रागेव दिव्य यमुना तं त्यक्त्वा ब्रह्मणः सुतम्। (कालिका पुराण, ८२/९०)
विप्र मुण्ड-यामी मण्डल के तारा ४, २०, ८, ७, १९, १३, १२, १७, ९ (=α, π, δ, ε, ζ, η, τ3, τ4. another, Eridani) का आकार मनुष्य के सिर जैसा है। ग्रीक कथा में जीयस ने एरिडानस तट पर फेथन का सिर काटा था। पुराण कथा में इन्द्र ने ब्राह्मण त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप का सिर काटा था (भागवत पुराण, अध्याय ६/९, ऋक्, १०/८/९)
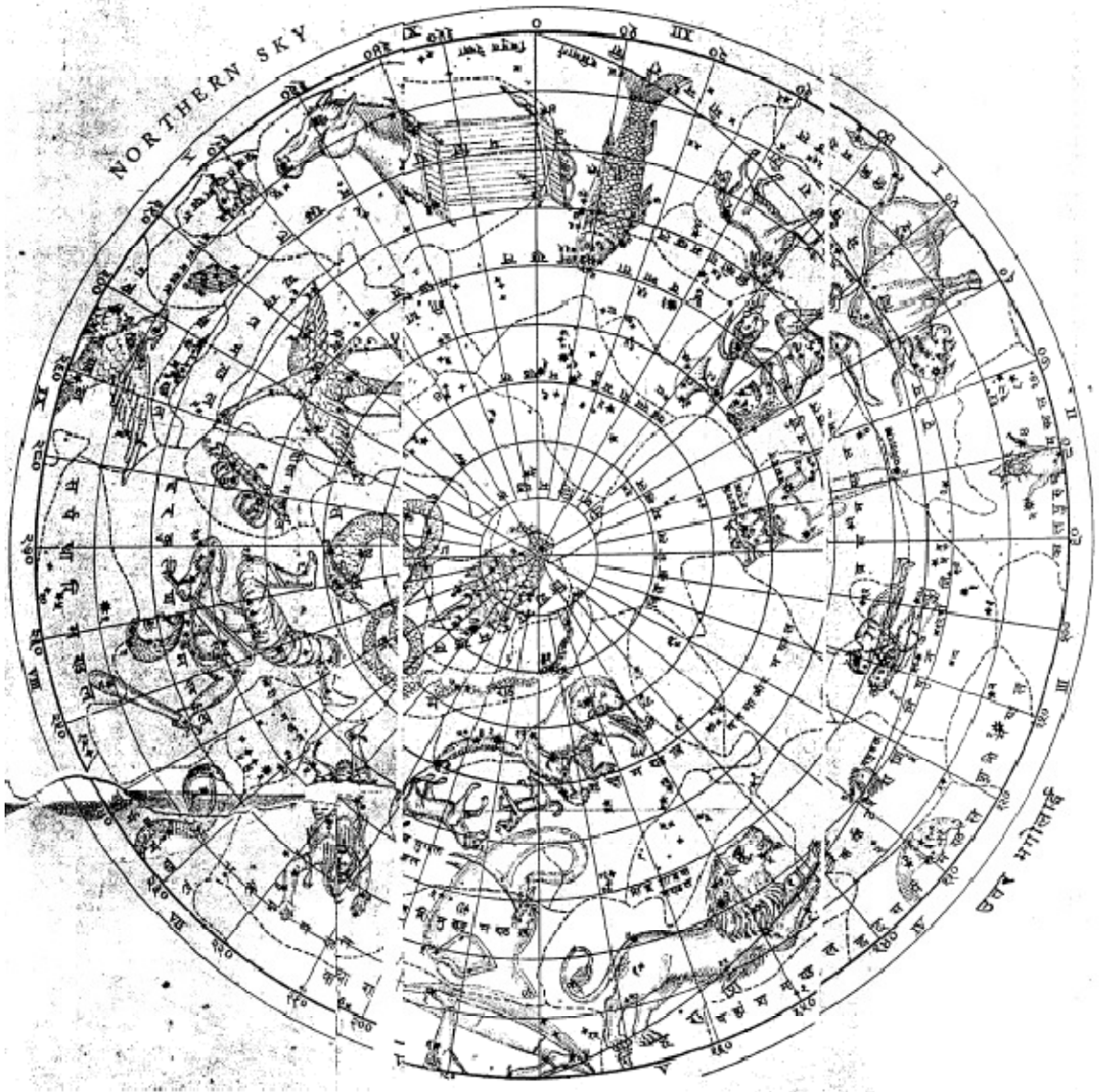
१८. वृषभ वीथी

विषुव वृत्त के ३०-६० अंशों से उत्तर-दक्षिण ध्रुव रेखाओं के बीच का क्षेत्र। इस में ये नक्षत्र हैं-

(१) चित्र क्रमेल मण्डल (वीथी २ में सबसे ऊपर)-लैटिन कैमेलोपार्डलिस (Camelopardalis), अंग्रेजी-जिराफ। इसका नामकरण हेवेलियस ने १६९० में किया था।

(२) ब्रह्म मण्डल-ऋग्वेद-रथीतम पूषन् (रथियों में श्रेष्ठ), ग्रीक-हेनिओकस, लैटिन-औरिगा (Auriga, रथी), अंग्रेजी-चैरिओटियर (Charioteer)

इसमें १४ दृश्य तारा हैं।

उशना च प्रसन्नार्चिः अनुत्वां भार्गवः गतः। ब्रह्मराशिः विशुद्धश्च शुद्धाश्च परमर्षयः।

अर्च्चिष्यन्तः प्रकाशन्ते ध्रुवं सर्वे प्रदक्षिणम्। (रामायण, युद्धकाण्ड, ४/४८)

अर्थात् ध्रुव के बाद सप्तर्षि के निकट ब्रह्मराशि (ब्रह्म-मण्डल) है, दोनों ध्रुव की परिक्रमा करते हैं। सूर्य सिद्धान्त में २ तारा का स्थान दिया है-प्रजापति (५७ अंश पूर्व, ३८ अंश उत्तर), ब्रह्म हृदय (५२ अंश पूर्व, ३० अंश उत्तर)। इसके अनुसार δ Aurigae प्रजापति तथा α Aurigae ब्रह्म हृदय है।

पश्चिम में औरिगा का सम्बन्ध अज तथा बालक से जोड़ते हैं, जिसका कारण अज्ञात है। वेद में पूषा को भी अजाश्व कहा गया है। अज का अर्थ बकरा तथा भगवान् दोनों है।

या ते पूषन् नावः अन्तः समुद्रे हिरण्ययीः अन्तरिक्षे चरन्ति।
ताभिः यासि दूत्वाम् सूर्य्यस्य-- (ऋक्, ६/५८/३)
पूषन् प्रकाशित क्षेत्र है-वसोः राशिः (ऋक्, ६/५५/३), दस्म वर्च्चाः (ऋक्, ६/४८/४), द्यौः इव असि (ऋक्, ६/५८/१)
परिवर्तनशील तेज-शुक्रं ते अन्वत् यजतम् ते अन्वत् -- (ऋक्, ६/५८/१)
अज रूप-पूषणन् नु अजाश्वम् (ऋक्, ६/५५/४)
आ अजासः पूषणम् रथे -- देवम् वहतु बिभ्रतः। (ऋक्, ६/५५/६)
पूषा गौ तथा अश्व का स्वामी है-
पूषा गाः अनु एतु नः पूषा रक्षतु अर्व्वतः। (ऋक्, ६/५४/५)
सूर्य पथ का स्वामी-पथः पते (ऋक्, ६/५३/१)
श्रेष्ठ रथी ने सूर्य के हिरण्य रथ को वृषभ (गो) में पहुंचाया है-
उत अदः परुषे गवि सूरः चक्रम् हिरण्ययम्। नि ऐरयत् रथितमः। (ऋक्, ६/५६/३)
सूर्य रथ इसके मार्ग में है = सूर्य्यम् आ धत्थः दिवि चित्र्यं रथम् (ऋक्, ५/६३/७)

ब्रह्म हृदय (३० अंश उत्तर, ५२ अंश पूर्व)-सुमेरिया-अस्कर (Askar), अंग्रेजी -गोट (Goat star)
अज का अर्थ ब्रह्म और बकरा दोनों है, अतः ब्रह्म हृदय का नाम बकरा हुआ। तारा १ ब्रह्माणः (α Aurigae) पूषन् का पर्शु है-
अधा नः विश्व सौभग हिरण्य वाशीमत् तम (ऋक्, १/४२/६)
अग्निः भूत्वा नैगमेयः छागवक्त्रो बहुप्रजः (महाभारत, सभा पर्व, २२६/२९)
अजामेकां लोहित शुक्लकृष्णा, बह्वीः प्रजाः सृजमानाः (श्वेताश्वतर उपनिषद्, ४/५)

राम बाण-लैटिन हेडी (Haedi, बालक), अंग्रेजी-किड्स (Kids)
ब्रह्मा के ६, ८ तारा (η, ζ Aurigae) तथा ५ ब्रह्माणः मिल कर बाण बनाते हैं। राम ने यह बाण परशुराम का स्वर्ग द्वार बन्द करने के लिए छोड़ा था।
सः हतान् दृश्य रामेण स्वान् लोकान् तपसा अर्जितान् (रामायण, १/७६/२२)

वृष राशि, देवता-शुक्र।
वृष मण्डल-ग्रीक टारस (Taurus, संस्कृत तावुरि)-इसमें ४४ दृश्य तारा हैं। इसमें कृत्तिका, रोहिणी नक्षत्र तथा कुछ अन्य तारा हैं। कैंची आकार का कृत्तिका (= कैंची) वृषभ का ककुद् तथा V आकार का रोहिणी वृषभ का मुंह बनता है।
संस्कृत-मातृ मण्डल, चीन-माओ (सूर्य द्वार)

कृत्तिका नक्षत्र
संस्कृत-बहुला, ग्रीक-प्लीडास (Pleiades, असंख्य)
देवता-अग्नि
मातृ मण्डल में ४०० छोटे तारा हैं। कृत्तिका में अग्निशिखा रूप में ६ तारा हैं।
इसके ६ तारा को कार्त्तिकेय की ६ माता कहा गया है जो भारत के ६ सैन्य क्षेत्र हो सकते हैं। १. दुला-ओड़िशा तथा बंगाल, २. वर्षयन्ती-असम, ३. चुपुणीका-पंजाब, कश्मीर (चोपड़ा उपाधि), ४. मेघयन्ती-गुजरात राजस्थान-यहां मेघ कम हैं पर मेघानी, मेघवाल उपाधि बहुत हैं। ५. अभ्रयन्ती-महाराष्ट्र, आन्ध्र (अभ्यंकर), ६. नितत्नि-तमिलनाडु, कर्णाटक। अतः ओड़िशा में कोणार्क के निकट बहुत से दुला देवी के मन्दिर हैं। दुलाल = दुला का लाल कार्त्तिकेय।
अत्र जुहोति अग्नये स्वाहा, कृत्तिकाभ्यः स्वाहा, अम्बायै स्वाहा, दुलायै स्वाहा, नितत्न्यै स्वाहा, अभ्रयन्त्यै स्वाहा, मेघयन्त्यै स्वाहा, चुपुणीकायै स्वाहेति। (तैत्तिरीय ब्राह्मण ३/१/४/१-९)

रोहिणी नक्षत्र-प्रजापति देवता
ग्रीक-हाइडेस (Hyades, वर्षा), लैटिन-प्लुविया (Pluviae, सूअर)

वेदिक-रोहित (हरिणी), पौराणिक-सुरभि।

इसमें १, ७, ५, १२, १४ वृषस्य (α, ε, θ, γ, δ Tauri) तारा हैं। प्रथम तारा योगतारा है जिसे रोहित या सुरभि कह सकते हैं। ततो दुहितरावन्ये सुरभिर्देव्यजायत। रोहिणी चैव सुभगां (ब्रह्माण्ड पुराण,२/३/३/७३)। रोहिणी सुरभिः देवी अदितिः देवकी ह्यभूत् (हरिवंश पुराण)

रोहित तारा। अंग्रेजी अल्डेबारन (Aldebaran)।

याम् आहुः तारका एषा विकेशी इति (अथर्व, ५/१३/४)

अग्नि तारा (२ वृषस्य, β Tauri)-सूर्य सिद्धान्त अनुसार इसका स्थान ८ अंश उत्तर, ५२ अंश पूर्व है।

स्वाहा तारा (३ वृषस्य, ζ Tauri)

(४) घटिका मण्डल-लैटिन होरोलोगियम-ला कैले द्वारा १७५२ में नाम।

(५) सुवर्णाश्रम मण्डल-लैटिन-डोरेडो, अंग्रेजी-स्वोर्ड फिश। बेयर द्वारा १६६४ में नामित। ४ सुवर्णस्य (R Doradus) का प्रकाश घटता बढ़ता है तथा प्रायः लुप्त हो जाता है। अतः इसका नाम लोपामुद्रा है।

(६) आढ़क मण्डल-लैटिन रेटिकुलम (Reticulum)। ला कैले द्वारा १७५२ में नामित।

१९. मिथुन वीथी

इसके मण्डल हैं-

(१) मिथुन राशि- यह वृष राशि के पूर्व है जिसमें मृगशिरा नक्षत्र का उत्तरार्ध, आर्द्रा तथा पुनर्वसु नक्षत्र के ३ पाद हैं। इसमें काल पुरुष का उत्तरी भाग है। लैटिन नाम जेमिनि (Gemini) है। संस्कृत में जितुम भी कहते थे। सूर्य चन्द्र युगल के नाम पर इस राशि को मिथुन (युग्म) कहते हैं। इनके प्रतीक हैं २, १ मिथुनस्य (α, β Geminorum)। इसमें मनुष्यों का जोड़ा है जिनके हाथ में गदा और वीणा है।

मत्स्यौ घटी नृमिथुनम् सगदम् सवीणम्,
चापी नरः अश्वजघनः मकरः मृगास्यः।
तौली सशस्यदहना प्लवगा च कन्या,
शेषाः स्वनाम सदृशाः खचराः च सर्वे॥ (मनोहर)

स मिथुनः उदपादयते, रयिम् च प्राणम् च, इति।
एतौ मे बहुधाः प्रजाः करिष्यतः।
आदित्यः ह वै प्राणः, रयिः एव चन्द्रमाः। (प्रश्नोपनिषद्, १/४-५)

इन्वका या इल्वला नक्षत्र-देवता सोम। इसके ५ तारा मृगशिरा के ऊपर हैं जो मृग काल पुरुष का सिर है।

इल्वलाः मृगशिरः-शिरस्याः पञ्चतारकाः। (हेमचन्द्र)

ये ५ तारा हैं-७, ५, ३, ६ मिथुनस्य तथा ३ वृषस्य (= γ, μ, η, ζ Geminorum, ζ Tauri)

यह प्राचीन ३० चान्द्र नक्षत्रों में है तथा वर के लिए शुभ मानते थे।

सोमस्य इन्वकाः विततानि (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१)

इल्वलाः सोमदैवत्याः रौद्रम् च आर्द्रम् उदाहृतम्। (अग्नि पुराण, १/५९/२)

इन्वकाभिः प्रसृज्यन्ते ते वराः प्रतिनन्दिताः (आपस्तम्ब गृह्य सूत्र, २/१६)

इसे मृगशीर्ष नक्षत्र के बाद गिनते थे-

मृगशीर्षाय स्वाहा। इन्वकाभ्यः स्वाहा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४/२)

पुनर्वसु नक्षत्र-अदिति देवता। लैटिन-कैस्टर, पोलक्स।

आदित्यै पुनर्व्वसू। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/७)

अदित्यै स्वाहा। पुनर्व्वसूभ्यां स्वाहा॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/३)

पूर्वी तारा इसका योगतारा है-

रोहिणी आदित्य मूलानाम् प्राची (सूर्य सिद्धान्त, ८/१९)

(२) काल पुरुष मण्डल -

(१) ऋग्वेद-ऋष्य-मृग की ५ जातियां हैं-ऋष्य, रुद्र, न्यङ्क, पृषत, कुलङ्ग। ऋष्य मृग का स्वर ऋषभ होता है-वसुभ्या ऋष्यानालभते (वाज.सं. २४/२७, मैत्रायणी सं. ३/१४/९), ऋष्यो मयूरः सुपर्णस्वे गन्धर्वाणाम् (वाज.सं २४/३७)। देवता-सोम।

ऋग्वेद-वराह-देवता-रुद्र

हिब्रू-यारा तथा एरी। यूफ्रेटस-यारी (जंगली वराह का देवता)

(२) ऋग्वेद (२/३५/३)-अपाम्-नपात् (जेन्द अवेस्ता में भी)-अप् या जल की सन्तान, रामायण-गंगासुत, सुमेरिया-निन-गिर्-सु (नदी तट का देव), लैटिन-ऐकुओसस (Aquosus)

(३) ऋग्वेद-विश्वरूप या त्वष्टा-देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः (ऋक्, ३/५५/१९, १०/१०/५), त्रिशीर्षा (ऋक्, १०/८/८)। यूफ्रेटस-ताम्-मुज्, अक्काडियन-दूजी, ग्रीक-फेथन (दीप्त) या ओरियन, लैटिन-ओरियन।

(४) महाभारत (वन पर्व, अध्याय, २२५-२३०)-स्कन्द, कुमार, कार्त्तिकेय, विशाख, बलि। मत्स्य पुराण-कुमारी। ग्रीक-कण्डून (राजकुमार), सेमिटिक-कोहैन दयान (राजकुमार, न्यायाधीश), हिब्रू-केसिल (शक्तिशाली)

ज्योतिष में-कालपुरुष।

इसके उत्तर भाग में इषु-त्रिकाण्ड है जो मृग व्याध के ३ गांठ (काण्ड) का बाण (इषु) है।

यः उ मृगव्याधः सः उ एव सः। या रोहित् सा रोहिणी यः एव इषुः त्रिकाण्डा सः एव इषुः त्रिकाण्डा। (ऐतरेय ब्राह्मण, ३/३३)

अपाम् नपात्-अपाम् नपातम् परितस्थु आपः (ऋक्, २/३५/३)

हिरण्यरूपः स हिरण्य सन्दृक् अपाम् नपात् सः इत् उ हिरण्यवर्णः (ऋक्, २/३५/१०)

Zenda Avesta-We sacrifice unto Apam-napat, the swift horsed, the tall, the shining (हिरण्य रूपः) lord, the lord of the females, we sacrifice unto the waters made by Mazda and holy (Avesta, Sirozaj, 2/7)

रुद्र-श्रेष्टः जातस्य रुद्र, श्रिया असि तवस्तमः तवसां वज्रबाहो (ऋक्, २/३३/३)

विश्वरूप-स इद्दासं तुवीरवं पतिर्दन् षळक्षं त्रिषीर्षाणं दमन्यत्।

अस्य त्रितो न्वोजसा वृधानो विपा वराहमयो अग्रया हन्॥ (ऋक्, १०/९९/६)

भूरीदिन्द्र उदिनक्षन्तमोजोऽवाभिनत् सत्पतिर्मन्यमानम्।

त्वाष्ट्रस्य चिद्विश्वरूपस्य गोनामाचक्राणस्त्रीणि शीर्षा परा वर्क्॥ (ऋक्, १०/८/९)

इन्द्र ने त्वष्टा पुत्र विश्वरूप के ३ सिरों को काटा तो वे नीचे लटक गये।

स्कन्द के विभिन्न रूपों का वर्णन महाभारत, वन पर्व के अध्यायों २२४ से २३१ तक है। उनकी स्त्री रूप कुमारी तारा ४ मृगस्य (γ Orionis) का नाम Bellatrix (स्त्री योद्धा) है।

बाण राज-प्राग्ज्योतिषपुर का राजा बाणासुर शिव भक्त था। उसने कृष्ण-पौत्र अनिरुद्ध को बन्दी बनाया तो कृष्ण ने आक्रमण किया। शिव और स्कन्द बाणासुर की रक्षा के लिए आये। ५ अग्नि भी रक्षा कर रहे थे। बाणासुर ने जब ब्रह्मशिर अस्त्र का प्रयोग किया तो भगवान् कृष्ण ने सुदर्शन चक्र का प्रयोग किया और बाणासुर की १,००० भुजायें काट दीं। शिव के कहने पर बाणासुर को क्षमा कर दिया। (विष्णु पुराण, भागवत पुराण, हरिवंश पुराण)

इस कथानक के आधार पर इस नक्षत्र के नाम हैं।

बाणराज = इषु त्रिकाण्ड या पुराण का पाशुपत बाण।

रुद्र = ओरियन।

५ अग्नि= इल्वल नक्षत्र के ५ तारा।

त्रिशिरा = ३ सिर का ओरियन।

ब्रह्मशिर = ब्रह्म प्रजापति का सिर = मृगशिरा नक्षत्र।

कार्त्तिकेय = ओरियन।
श्रीकृष्ण = सूर्य का देवता।
कार्त्त-वीर्य- महिष्मती का हैहय वंशी राजा जिसने रावण को बन्दी बनाया था। परशुराम द्वारा मार गया।
असुर राजा बलि भी तारारूप में हैं-
तवापि चैव त्रैलोक्यं, विद्योताम्यहमेव च। (महाभारत, १४/२२४/८३)
बलि ने स्वच्छा से राज्य छोड़ दिया था-
ततः ददर्श स बलिं स्वरवेशेन संवृतम्।
----- शून्यागारे कृतालयम्। (महाभारत, १४/२२३/१२)
स्कन्द की तरह बलि के गले में भी हार था-
न ते पश्यामि शृङ्गारं न छत्रव्यञ्जने न च।
ब्रह्मदत्तं च ते माल्यं न पश्याम्यसुराधिप। (महाभारत, १४/२२३/२३)
बलि के साथ कुक्कुटी भी थी जो दक्षिण आकाश में सप्तर्षि का प्रतिरूप है-
बले का इयं अपक्रान्ता रोचमाना शिखण्डिनी।
त्वत्तः स्थिता स केयूरा दीप्यमानास्वतेजसा॥
(महाभारत, १४/२२५/३)
प्राचीन बाहु नक्षत्र -देवता-रुद्र मृढ
यूफ्रेटिस-इलु मेरुदुकु (मेरोदुख देव)
इसके २ तारा हैं-२, ४ मृगस्य (α, γ Orionis) जो रुद्र-Orion के २ कन्धों के स्थान पर हैं।
रुद्रस्य बाहु (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१)
यदि मृगशीर्ष के स्थान पर बाहु को तृतीय चान्द्र नक्षत्र (कृत्तिका से) गिनें, तो इल्वला नक्षत्र में ये तारा होंगे-७, ५, १४, ३, १९ मिथुनस्य (η, μ, ν, γ, κ Geminorum)। आधुनिक आर्द्रा नक्षत्र में बाहु का ४ मृगस्य तारा मिलाया गया है।
मृगशिरा नक्षत्र (प्रजापति)-देवता सोम
यूफ्रेटिस-कक्कब
इसके ३ तारा चूहे के पैर की तरह हैं-
मूषिकासन पदाकृतौ विधौ व्योम मध्यमिलिते त्रितारके (कालिदास)
इस नक्षत्र में जिस मास में पूर्णिमा होती है, वह मार्गशीर्ष मास है। पहले इसमें १ ही तारा मानते थे-
सोमाय स्वाहा मृगशीर्षाय स्वाहा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/५)
आर्द्रा नक्षत्र (= आर्द्र करने वाला), देवता-रुद्र, (मृढ)
इसका योगतारा २ मृगस्य (α Orionis) अपने समूह में सबसे उज्ज्वल तारा है जिसका स्थान ९ अंश दक्षिण तथा मिथुन का ७ अंश २०' है।
यथा प्रत्यवशेषाणाम् स्थूला स्यात् योगतारका (सूर्य सिद्धान्त, ८/१९)
बाद में इसे आर्द्रा की तरह १ ही तारा का नक्षत्र माना गया-
पद्माकृति उज्ज्वल एक तारकामयम् (कालिदास)
रुद्राय स्वाहा, आर्द्रायै स्वाहा (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/३)
(१) मयूर तुण्ड (मयूर का गला तथा सिर)
लैटिन-एन्सिस ओरिओनिस (ओरियन की असि या तलवार)
स्कन्द का वाहन मयूर है। मयूर की गर्दन मे तारा इषु-त्रिकाण्डके नीचे हैं-१९, २०, ८, १८, २१ मृगस्य तथा सिर १३ मृगस्य है (v, d, ı, θ1, c, σ Orionis) इसकी पूंछ Ω आकार के तारा हैं जो कालपुरुष में तथा इसके निकट हैं।
(२) गुहा-बल या बलि की गुहा में जल को बन्द किया था जिसे तोड़ कर इन्द्र ने जल निकाला।
त्वम् बलस्य गोमतः अप अवः अद्रिवः बिलम्। (ऋक्, १/११/५)

वीलु चित् आरुजत्नुभिः गुहा चित् इन्द्र वह्निभिः। अविन्दः उस्रिया अनु॥ (ऋक्, १/६/५)

अपाम् बिलम् अपिहितम् यत् आसीत्वृत्रन्। जघन्वान् अप् तत्ववार॥ (ऋक्, १/३२/११)

(३) पणि-यह वृत्र द्वारा गुहा की रक्षा के लिये नियुक्त थे-

अयम् निधिः सरमे अद्रिबुध्नः...।

रक्षन्ति तम् पणयः ये सुगोपाः ...॥ (ऋक्,१०/१०८/७)

३. शश मण्डल

महाभारत-कपोती, ग्रीक-लोगोस (अंग्रेजी-हेयर) महाभारत-कपोती, ग्रीक-लोगोस (Logos, शश), लैटिन-लेपस (Lepus = शश) अंग्रेजी-हेयर (Hare, शश = खरगोश)

मृगव्याध के पश्चिम २ छोटे नक्षत्र हैं-कपोत, कपोती। पाश्चात्य सूची मे कपोस को लेपस (Lepus) और कपोती को कोलम्बा (Columba, कपोत) कहते हैं।

कपोती के तारा हैं-६, ५, १, २, ३, ९, ८, ७ शश (σ, η, ζ, α, β, ε, ε1, δ, γ Lepi)। कपोत में भी इसी आकार में ८ तारा हैं।

ऋक् (१०/१६५/१-५) तथा अथर्व सं (६/२७/१-३, ६/२८/१-३, ६/२९/१-३) में कपोत का वर्णन है। इसकी विस्तृत कथा महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय, १४३-१४९ में है। कपोत के द्वारा मारने वाले बहेलिये का भी अतिथि सत्कार जिसे अपने सम्बन्धियों ने भी त्याग दिया था। कपोती को व्याध ने पकड़ लिया, उसके बाद भी कपोत ने उसके सत्कार के लिए अपनी बलि दे दी जिसके कारण कपोत और कपोती स्वर्ग चले गये। इससे बहेलियेको वैराग्य हो गया और आत्मदाह किया। उसे भी कपोत के निकट स्थान मिला (मृग व्याध)।

४. कपोत मण्डल-लैटिन कोलम्बा नोशी (Colamba or Columba Noachi, नोह का कपोत)

आकाशीय कपोत के तारा हैं- ५, ६, १, ३, ७, ८, ४, २ कपोतस्य (σ, μ, α, ε, ε1, ε2, γ, β, Columbae)। इसे पश्चिम में रोयर ने १६७९ में नाम दिया था।

५. मृगव्याध मण्डल (हरिण मारने वाला)-

वेद -श्वन् (कुक्कुर),

यूफ्रेटस-लिक उडु (Lik Udu, सूर्य का कुक्कुर),

ग्रीक-क्योन (Cyon, Kuon = कुक्कुर)

सेमिटिक- कलब सम्सी (Kalab Samsi, सूर्य का कुक्कुर),

लैटिन-कैनिस मेजर (Canis Major, बड़ा कुक्कुर),

अंग्रेजी-द ग्रेट डौग (The Great Dog)।

बिद्ध ऊर्ध्वं उद् प्रपततम् एतं मृगः इति आचक्षते। यः उ एव मृगव्याधः सः उ एव सः। या रोहित् सा रोहिणी। यः एव इषुः त्रिकाण्डा। सः एव इषुः त्रिकाण्डा। (ऐतरेय ब्राह्मण, ३/३३)

सूर्य की ऊर्जा इन्द्र है, इन्द्र का श्वान (कुक्कुर) सारमेय या सरमा-पुत्र, अर्जुन है-

स्तोतृन् इन्द्रस्य रायसि किम् (ऋक्, ७/५५/३) = हे इन्द्र के श्वान, इन्द्र के स्तोता पर क्यों भूंक रहे हो?

यत् अर्ज्जुन सारमेय दत्तः पिशङ्ग यच्छसे। (ऋक्, ७/५५/२)

लुब्धक तारा-

ऋक् - तिष्य (तेज युक्त)

अवेस्ता-तिस्त्र्य, ग्रीक-सीरियस, लैटिन-सिरियस, अंग्रेजी-सोपदित, बेबीलोन-काकवन (धनु तारा)

ऋक्-श्वन्।

यूफ्रेटस-क-लिक्-क (कुकुर जीभ), सेमिटिक-लेसन कल्बे (कुक्कुर जीभ), लैटिन-कैनिस, कैनिकुटा। अंग्रेजी डौग स्टार।

ऋक्-कोष्टा (सियार), पुराण-शिवा (सियारिन)

वेद में इसे पिशङ्ग कहा है-यत् अर्ज्जुन सारमेय दत्तः पिशङ्ग यच्छसे। (ऋक्, ७/५५/२)

सूर्य सिद्धान्त के अनुसार लुब्धक का स्थान ४० अंश दक्षिण, ८०अंश पूर्व है। कोलब्रुक ने इसे सिरियस माना है। तिष्य नाम-

कृशानुं अस्तॄन् सधस्थे आरुद्रम् रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे (ऋक्, १०/६४/८)

प्राचीन आर्द्रा लुब्धक नक्षत्र

११५० ई. से पूर्व आर्द्रा नक्षत्र का अंश लुब्धक था।, जिससे इसके २ नाम हैं। आर्द्रा का उल्लेख इल्वल के बाद है तथा उसके निकट केवल लुब्धक है।

इल्वलाः सोमदैवत्याः रौद्रश्चार्द्रमुदाहृतम् (गरुड पुराण,१)

६. अर्णवयान मण्डल

ऋग्वेद-नौ (नौका), ग्रीक-आर्गो (तेजस्वी), लैटिन-आर्गो नाविस (Argo Navis, तेजस्वी नौका)

सूर्य मूल नौका है जिसमें ग्रह यात्रा कर रहे हैं।

मध्ये दिवः तरणिं भ्राजमानम् (अथर्व सं, १३/२/६)

यह सभी नक्षत्रों में बड़ा है। नौका का आधार तारा हैं-९, २०, १२, ७, २४ नावः (π, σ, γ, λ, ψ Argus)। मुख्य ध्वज के तारा हैं-८, ११ नावः (ζ, θ, Argus)। ध्वज से बन्धा कपड़ा है १६ नावः (ξ, Argus)। १ नावः या तो पतवार है या लंगर है जिसए मान (स्तम्भ याभार) कहते हैं।

वेद में इसके कई उल्लेख हैं-

हिरण्ययी नौः अचरत् हिरण्यबन्धना दिवि।तत्र अमृतस्य पुष्पं देवाः कुष्ठं अव्रन्वत॥४॥

हिरण्ययाः पन्थानः आसन् अरित्राणि हिरण्यया। नावो हिरण्ययीः आसन् याभिः निः आवहन्॥ (अथर्व, ५/४/४-५)

हिरण्ययी नौः अचरत् हिरण्यबन्धना दिवि। तत्र अमृतस्य चक्षनम् ततः कुष्ठः अजायत॥

यत्र नावप्रभ्रंसनं यत्र हिम्वतः शिरः। तत्र अमृतस्य चक्षनम् ततः कुष्ठः अजायत॥ (अथर्व, १९/३९/७-८)

राजा सिन्धूनाम् अवसिष्ट वासः। ऋतस्य नावम् आ अरुहत् रजिष्ठाम्। (ऋक्, ९/८९/२)

दक्षिणी ध्रुव वृत्त का २/३ भाग इसी मण्डल का है। इसका अगस्त्य तारा १२,००० ईपू में दक्षिणी ध्रुव के सबसे निकट था।

नक्षत्राणि च सर्वाणि मामकानि ध्रुवानि अथ॥२८॥

यावत् लोकाः धरिष्यन्ति तिष्ठन्तु एतानि सर्व्वशः।

मत्कृतानि --- ॥२९॥ (रामायण, १/६०)

अगस्त्य (१ नावः, α Argus)।

ऋग्वेद-अगस्त्य (अग = पर्वत या समुद्र पार करने वाला)

अन्य नाम हैं-मान (पतवार या लंगर), मान्दार्य (ध्रुव तारा)

सूर्य सिद्धान्त के अनुसार यह ८० अंश दक्षिण तथा ९० अंश पूर्व है। कोलब्रुक ने इसे कैनोपस कहा है। १२,००० ईपू में यह दक्षिण ध्रुव तारा था। पृथ्वी के ध्रुवों को मिलाने वाली रेखा आकाश के ध्रुव ताराओं से गुजरती है-

भूगोल मध्यगः मेरुः उभयत्र विनिर्गतः॥३४॥

मेरोः उभयतः मध्ये ध्रुवतारे नभः स्थिते॥४३॥

(सूर्य सिद्धान्त, १२)

कालिदास ने भी इसे ध्रुव आसन पर लिखा है-

अगस्त्यचिह्नाद् अयनात् समीपम्, दिक् उत्तरा भास्वति सन्निवृत्ते।

आनन्दशीताम् इव वाष्पवृष्टिम्, हिमश्रुतिम् हैमवतीम् ससर्ज्ज॥ (रघुवंश, १६/४४)

अगस्त्य तारा की चमक तेजी से घटती बढ़ती है अतः इनकी पत्नी लोपामुद्रा अर्थात् चन्द्रमा हैं जिसकी कला घटती बढ़ती है। (ऋक्, १/१७९/१-६)

अगस्त्य को मान, मान्य या मान्दार्य भी कहा है (मान = अक्ष, माप)-

एष वः स्तोमः मरुतः इयम् गोः मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः। (ऋक्, १/१६५/१५)
सत्रे ह जात विषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषेचतुः समानम्।
ततो ह मान उदियाय मध्यात् ततो जातम् ऋषिम् आहुः वसिष्ठम्। (ऋक्, ७/३३/१३)

अगस्त्य दक्षिण समुद्र के पार हैं, इसलिए कहते हैं कि अगस्त्य ने समुद्र पी लिया। या, अगस्त्य के उदय के समय वर्षा समाप्त होने लगती है। सूर्य सिद्धान्त के समय अगस्त्य तारा ८० अंश दक्षिण था, वहां लिखा है कि अगस्त्य का स्थान बदलता रहता है और इसका निर्धारण अपने समय के अनुसार करना चाहिए।

अशीति भागैर्यास्यायामगस्त्यो मिथुनान्तगः॥१०॥ गोलं बध्वोपरिक्षेत्रं विक्षेप ध्रुवकान् स्फुटान्॥१२॥
(सूर्य सिद्धान्त, अध्याय ८)

यह स्थिति प्रायः ११,००० वर्ष पूर्व थी। उस समय अगस्त्य की अध्यक्षता में प्रथम तमिल संगम हुआ था (११,००० से ६,६०० ईपू)

द्वितीय अगस्त्य के तमिल संगम काल में (६६००-२९०० ईपू) अगस्त्य तारा विन्ध्य के उत्तर भी दीखने लगा था।
उदित अगस्त्य पन्थ जल सोखा (रामचरितमानस, ४/१५/३)
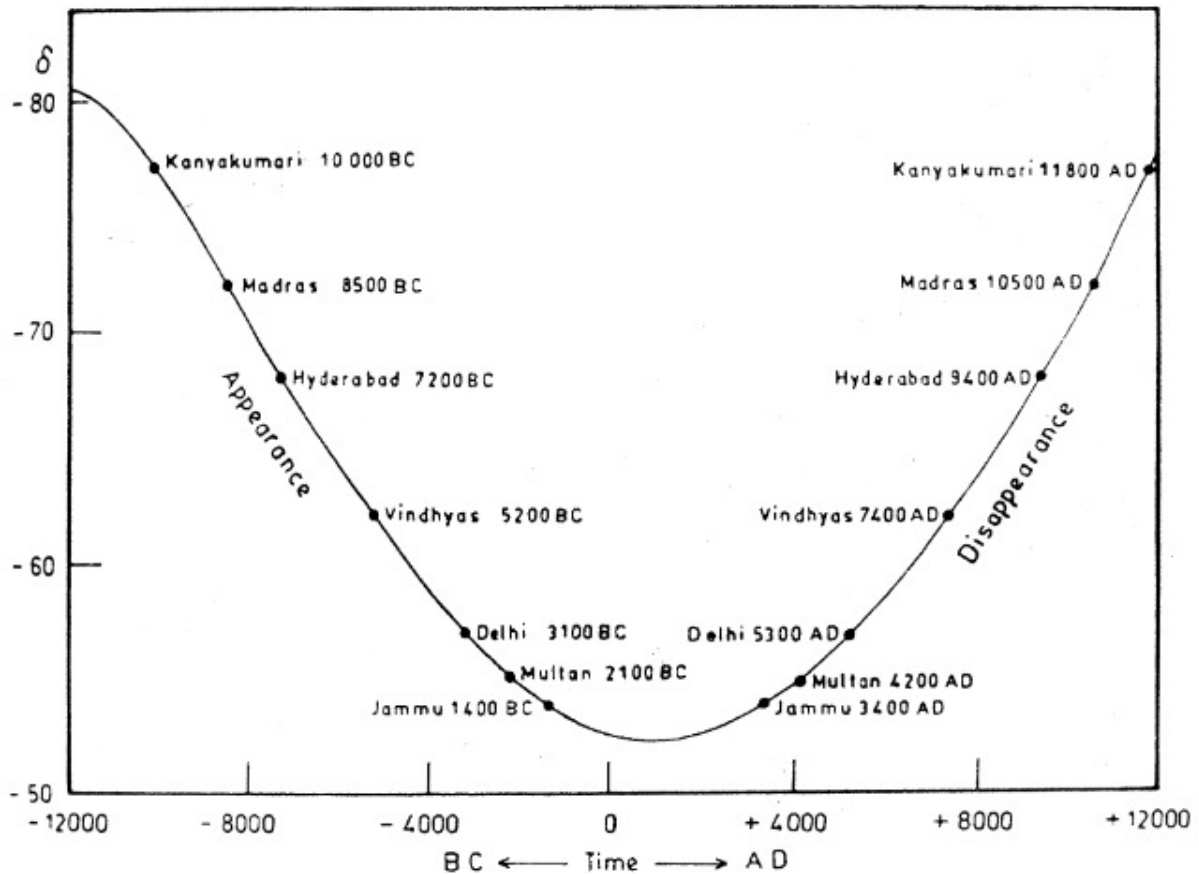
Figure 1. Visibility of Agastya (Canopus).

समुद्र का अर्थ १० घात १४ है, अर्थात् १ पर १४ शून्य। समुद्र जल में प्रायः जल की इतनी ही बून्द होती हैं। १०० बून्द = प्रायः ३ घन सेंमी। या ब्रह्माण्ड के अप् समुद्र का आकार पृथ्वी से १० घात १४ गुणा है। विष्णु पुराण (२/७/३-४) के अनुसार मनुष्य से पृथ्वी, सौर मण्डल, ब्रह्माण्ड, पूर्ण विश्व क्रमशः १-१ कोटि गुणा बड़े हैं। अर्थात्, पृथ्वी x (१ कोटि x १ कोटि = १० घात १४) = ब्रह्माण्ड। पृथ्वी से अगस्त्य तारा की दूरी प्रायः ६०० प्रकाश वर्ष है जो वैदिक योजन मान से १ समुद्र = १० घात १४ है। ऋग्वेद में योजन का उल्लेख उषा प्रसंग में है कि यह सूर्य से ३० धाम पश्चिम वरुण दिशा में है। भारत में १५ अंश उषा काल मानते हैं, अर्थात् १ धाम = १५/३० = १/२ अंश। विषुव पर धाम योजन = १/२ अंश = विषुव परिधि ४०,००० किमी /७२० = ५५.५ किमी. = ६०० प्रकाश वर्ष।

कपिल तारा (२ नावः, η Argus)। इसकी चमक ६७ वर्ष के चक्र में १.० से ७.० तक बदलती है। यह आकाश गंगा के दक्षिण छोर पर है। अतः इसे आकाश में दीप ज्योति की तरह कहा है, जो बीच बीच में जलती है-
सम्भेद्य मण्डलम् पुण्यं सवितुः शशिनः तथा।
दीपज्योतिः स्वरूपेण परमात्मनि युक्तवान्॥ (पद्म पुराण, ६/१८/८२)
मूल कपिल सूर्य है, क्योंकि यह वसन्त में कपिल रंग का दीखता है-
दशानाम् एकम् कपिलम् (ऋक्, १०/२७/१६)
वसन्ते कपिलः सूर्यः (कूर्म पुराण, ४३/२६)
सूर्य रूपी विष्णु दक्षिण में कपिल तारा है-
ददृशुः कपिलम् तत्र वासुदेवम् सनातनम्। (रामायण, १/४०/२५)
कपिल के बाद आकाशगंगा की पश्चिम शाखा कपिल-धारा आरम्भ होती है।
७. चित्रपटु मण्डल-ला कैले ने १७५२ ई. में इसका लैटिन नाम पिर्टर दिया, जिसका अनुवाद किया गया है।
८. अभ्र मण्डल-रोयर ने १६७९ में इसका लैटिन नाम नेबेकुला मेजर रखा था जिसका अनुवाद अभ्र किया है।
९. चत्वाल मण्डल-फ्लेमस्टीड ने १७२५ में इसका लैटिन नाम मेन्सा रखा जिसका अनुवाद चत्वाल है।

२०. कर्कट वीथि

इसमें ७ नक्षत्र हैं-
१. वन-मार्जार मण्डल- हेवेलियस ने १६९० में इसका लैटिन नाम लिंक्स (Lynx) रखा था जिसका अनुवाद किया गया है।
२. कर्कट राशि-यह ९० से १२० अंश तक चतुर्थ राशि है। इसमें ३ मण्डलों के अंश हैं-मिथुन, कर्कट, ह्रद-सर्प। इसमें पुनर्वसु नक्षत्र का अन्तिम पाद तथा पुष्य-आश्लेषा नक्षत्र हैं।
कर्कट मण्डल-
अक्कादिअन-नगर असुर (Nagar Asura), ग्रीक-कर्किनोस (Karknos), सेमिटिक-नाम गारु (Nam Garu), लैटिन-कैंसर (Cancer), अंग्रेजी-क्रैब (The Crab)। ज्योतिष-कुलीर।
यह क्रान्ति वृत्त का सबसे छोटा मण्डल है। इसमें १३ दृश्य तारा हैं, जिनमे तिष्य के तारा हैं-२, ३, ४ कर्कटस्य (α, δ, γ, Cancri) इन ताराओं के अतिरिक्त एक गोल नीहारिका (Nebula) M44 है। इसे मधु चक्र कह सकते हैं। यह क्रैब का शरीर है तथा २ अगले पैर हैं ३, ४ कर्कटस्य (δ, γ, Cancri)। यह पूर्व दिशा में देख रहा है। अर्ध निर्मित ताराओं में एक ५ कर्कटस्य है जिसे कैकेयी कहते हैं। इसमें ३ तारा हैं, जिनमें २ युग्म हैं। (रामायण में तिष्य या पुष्य को कैकेयी का रूप कहा है।) तिष्य का अर्थ कलियुग भी है। तिष्य नक्षत्र में कैकेयी पुत्र भरत का जन्म हुआ था।
तिष्य नक्षत्र
संस्कृत-पुष्य, यूफ्रेटस-कक्कब गु-सिर-केस-दा (आवरण के जुआ जैसा)
अक्कादियन-मस्तब्बा तुर्-तुर (जुड़वां बच्चे)
देवता-बृहस्पति
इसमें बाण आकार के ३ तारा हैं-२, ३, ४ कर्कट (α, δ, γ, Cancri)।
सूर्य सिद्धान्त के अनुसार इसके योगतारा का स्थान शून्य अक्षांश, १०६ अंश पूर्व, जो बाण के बीच में है। वेद में इसके मध्य तारा का ही उल्लेख है-
बृहस्पतये स्वाहा तिष्याय स्वाहा (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/३)
४ कर्कटस्य (γ, Cancri) या Ascellus Borealis बाण की नोक है तथा योगतारा के उत्तर पश्चिम में है। २ कर्कटस्य (α, Cancri) योगतारा के दक्षिण पश्चिम है।
लोपाश तारा
अक्कादियन-लुल्ला (लोमड़ी)
यह सिंह के सामने है-

लोपाशः सिंहम् प्रत्यञ्चम् आत्माः (ऋक्, १०/२८/४)

रासभौ युग्म तारा

लैटिन-जुड़वां गधे (Twin Asses)

ग्रीक-ओनोइ, लैटिन-ऐस्सेल्स

ऋक्-रासभौ। लैटिन में ३, ४ कर्कटस्य (δ, γ, Cancri) को दक्षिणी तथा उत्तरी गर्दभ (Asellus Australis, Asellus Borealis) कहते हैं। ये तारा अश्विनौ (Dioskoouroi) के १, २ मिथुनस्य (β, α, Geminorum) के बहुत निकट हैं, जिनको रथ खींचने के कारण रासभौ कहा गया है।

अश्विनौ पुनर्वसु (१, २, मिथुनस्य-विष्णु, सोम), रासभौ हैं। (मस्तब्बा तुर तुर = ओनोइ = असेलि = ३, ४, कर्कटस्य = δ, γ Cancri), रथ, मधु चक्र, Praesepe-ये रथ हैं।

युञ्जायाम् रासभम् रथे (ऋक्, ८/७४/७)

निरुक्त में इनको द्विवचन में कहा है-रासभौ अश्विवाहौ (निरुक्त, १/१५/४)

मातृका मधुचक्र (मधुमक्खी का छत्ता)

अंग्रेजी, बी हाइव (Bee hive), लैटिन-Praesepe (Bee hive), वेद-रथ।

धनुषाकार पुनर्वसु नक्षत्र के पूर्व में तारा-स्तवक या मधु-चक्र है। यह पूर्णिमा के चन्द्र जैसा गोलाकार है। यह धुन्धला नीहारिका जैसा दीखता है जिसमें पहली बार गैलीलिओ ने ३० तारा देखे थे। यह १ मिथुनस्य (β, Geminorum) के दक्षिण पूर्व तथा दक्षिण भारत में इसे पुष्य नक्षत्र मानते हैं।

वेद में कहा है कि अश्विनौ के रथ या मधुचक्र को २ रासभ खींचते हैं-

आ गोमता नासत्या रथेन अश्ववता पुरुश्चन्द्रेन यातम्। (ऋक्, ७/७२/१)

इस नक्षत्र में सूर्य जाने पर श्रावण मास में वर्षा का आरम्भ होता है। वेद में कहा है कि यह शरद् मेघ जैसा है जिससे मधु चूता है-

प्र वाम् शरद्वान् वृषभः न निष्षाट् पूर्व्वईः इषः चरति मध्वः इष्णन्। (ऋक्, १/१८१/६)

नीहारिका M44 (Stelar Crab) का लाल रंग होने के कारण चतुर्थ कर्क राशि को पाटल कहा गया है-

अरुण सित हरित पाटल पाण्ड विचित्राः। (ज्योतिष तत्त्व)

३. शुनी मण्डल-

लैटिन-कैनिस माइनर (Canis Minor), अंग्रेजी-The Little Dog = छोटा कुत्ता

हिप्पार्कस-टालेमी की तारा सूची में Procyon (α, Canis Minoris) को स्वतन्त्र नक्षत्र माना गया जिसमें २ तारा (α, β Canis Minoris) हैं। हमने Canis Minor को शुनी तथा Procyon को सरमा माना है।

सरमा तारा- यूफ्रेटिस-Palura, Pallika-पलूरा या पल्लिका (जल मार्ग का कुक्कुर)

ग्रीक-प्रोक्योन (Prokyon, जिसका उदय क्योन, Kyon के पूर्व होता है), मैरा (Maira, चमकदार)

लैटिन-मेरा (Mera, इकारियस का कुक्कुर), प्रोक्योन (Procyon)

अंग्रेजी-The Little Dog (छोटा कुक्कुर)।

यह प्रथम ज्योति (Magnitude) का पीले रंग का तारा है। सरमा (Procyon) तथा प्रत्यूष- Gomeisa (β, Canis Minoris) को ३ प्रकार से युग्म (जोड़ा) कहते हं-२ वसु, अश्विनौ, प्रत्यूष-प्रभास (दिन-रात)।

अप्सु ते जन्म दिवि ये सधस्थं सौद्र अन्त महिमा ते पृथिव्याम्।

शुनो दिव्यस्य यत् महः तेन ते हविषा विधेम। (अथर्व, ६/८०/३)

यत् अर्ज्जुन सारमेय दत्तः पिशङ्ग यच्छसे।

विऽइव भ्राजन्ते ऋष्टयः उपस्रक्केषु वपसतो नि सुखय॥ (ऋक्, ७/५५/२)

प्रजापतिः पशून् असृजत। ते नक्षत्रं नक्षत्रं उपातिष्ठत्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/४)

सरमा नाम या माता शूनां देवी जनाधिप॥३३॥

इमे तु अष्टादशा अन्ये वै ग्रहाः मांसमधुप्रियाः॥३६॥
(महाभारत, वन पर्व, अध्याय २२९)

प्राचीन बाहू नक्षत्र (२ बाहु)

देवता-रुद्र, यूफ्रेटस-कक्कब पल-उर-आ

रुद्र के २ बाहु मूल ४, २ मृगस्य को बाहू नक्षत्र कहते थे। जब इसके निकट उत्तर अयनान्त आया तो इसका नाम आर्द्रा हुआ और ४ मृगस्य तारा इससे अलग हो गया।
अग्नेः कृत्तिका। प्रजापतेः रोहिणी। सोमस्य इन्वकाः विततानि। रुद्रस्य बाहू। अदित्यै पुनर्व्वसू। -- रुद्राय स्वाहा। आर्द्रायै स्वाहा। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१)

४. एकशृङ्गि मण्डल-१६९० में हेवेलियस ने इसका लैटिन नाम मोनोसेरोस (Monoceros) रखा था जिसके नाम का अनुवाद है।

५. कृकलास मण्डल-बेयर ने १६०४ में इसका लैटिन नाम कमेलियन (Chameleon) रखा था जिसका अनुवाद है।

६. पतत्रि मीन मण्डल-बेयर ने १६०४ में लैटिन नाम पिसिस वोलन्स (Piscis Volans) रखा जिसका अनुवाद यह नाम है।

२१. वीथि ५-सिंह

इसमें निम्नलिखित नक्षत्र हैं-

१. सिंह शावक मण्डल

लैटिन-लिओ माइनर, अंग्रेजी-ळेस्सेर्ळिओन्
इसका नाम हीव्लियस ने १६९० एं रखा था।

२. सिंह राशि

देवता-सूर्य।
यह कर्क के पूर्व १२०-१५० अंश पूर्व तक है। इसमें सिंह, षष्ठांश तथा अन्या मण्डल हैं। इस राशि में मघा, पूर्वा फाल्गुनी तथा उत्तरा फाल्गुनी का प्रथम पाद हैं।

सिंह मण्डल-

अक्कादियन-उर्गुला (Urgula, बड़ा कुक्कुर), ग्रीक-लिओन (Leon)

लैटिन-लिओ (Leo), सेमिटिक-आरु (Aru), हिब्रू-आर्येयी (Aryei), अंग्रेजी-लायन (Lion),
ज्योतिष-लेय (क्रियतावुरि जितुम कुलीरलेय यूक कौर्प्याख्याः - वराहमिहिर)। वेद में कहा है कि लोपाश सिंह के सामने आया-
लोपाशः सिंहं प्रत्यञ्चम् अत्साः (ऋक्, १०/२८/४)
इस नक्षत्र के अधिकांश तारा पाण्डु रंग (श्वेत के साथ पीला या नीला) के हैं। सिंह का सूर्य भी वर्षा ऋतु में पाण्डु रंग का होता है-
अरुणसित हरित पाटल पाण्डु विचित्राः। (ज्योतिष तत्त्व)
पाण्डुरः शरदि प्रभुः (कूर्म पुराण, ४३/२६)

इस राशि में ३ नक्षत्र हैं-मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी। किन्तु प्रथम २ के तारा ही इसमें हैं, उत्तरा फाल्गुनी के तारा कन्या राशि में हैं। मघा नक्षत्र सिंह का मुख है, पूर्वा फाल्गुनी मध्य भाग तथा उत्तरा फाल्गुनी का योगतारा २ सिंहस्य (β, Leonis) इसकी पूंछ है।

इस नक्षत्र का स्त्री रूप सिंहिका को राहु की माता कहा है, राहु सैंहिकेय अर्थात् सिंहनी का पुत्र है। राहु सर्प जैसा है तथा यह ह्रद-सर्प (हाइड्रा Hydra) हो सकता है जो सिंहिका के दक्षिण है।

इस नक्षत्र के ५ मुख्य तारा १, २, ३, ४, ६ सिंहस्य (α, β, γ, δ, θ Leonis) पाण्डु रंग के सिंह का शरीर बनाते हैं। यह महाभारत के राजा पाण्डु के ५ पुत्रों की तरह हैं।

मघा नक्षत्र (वेद-अघा)

बेबीलोन-कक्कब गिस बर (प्रकाश का काष्ठ),कक्कब गुब-बर- मेस-सु- तु-ए-कुर (भूमि आधार मन्दिर में अग्निशिखा देवता)

अरबी-अल गुबा,अंग्रेजी-सिकल (Sickle, हंसिया)

इस नक्षत्र में १, ३, ५, ८, १२ सिंहस्य (α, γ, η, ε, δ, Leonis) तारा पर हल की आकृति बनाते हैं जिसकी नोंक १ सिंहस्य क्रान्तिवृत्त पर है।

लाङ्गलाकृतिनि पञ्चतारके (कालिदास, रात्रि लग्न निरूपणम्, १/४०)

तारा १ सिंहस्य (α, Leonis, Regulus) मघा का योगतारा है जिसका स्थान शून्य अक्षांश तथा १२९ अंश पूर्व है (सूर्य सिद्धान्त)

नक्षत्रों में सूर्य की स्थिति के अनुसार कृषि कार्य होता है-यह ऋतु वर्ष के अनुसार ही सम्भव है-

सूर्याया वहतुः प्रागात् सवितायमवासृजत्। अघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्युह्यते। (ऋक्, १०/८५/१३)

अथर्व में अघा को मघा तथा अर्जुनी को फल्गुनी लिखा है-

सूर्याया वहतुः प्रागात् सवितायमवासृजत्। मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते॥ (अथर्व सं. १४/१/१३)

= गावः का अर्थ किरण है। सूर्य मघा नक्षत्र में रहने पर ये कम होती हैं, अर्थात् शीत होता है (भारत के लिए उत्तर गोल में)। उसके बाद फल्गुनी नक्षत्र से तेज बढ़ना आरम्भ होता है। सूर्या का अर्थ सूर्य से उत्पन्न ऊर्जा क्षेत्र है, वह मघा से पहले आता है। सूर्य किरण से वर्षा मिलती है जो मघा से पहले हुआ।

यहां अघासु या मघासु (बहुवचन) का अर्थ है कि इसमें कई तारा हैं।

इसका देवता पितर हैं।

यमराज पुत्र तारा

सेमिटिक-सर रु (राजा), ग्रीक-बैसिलिस्कस (छोटा राजा), लैटिन-रेक्स या रेगुलस (छोटा राजा)

अंग्रेजी-रेगुलस।

यह दक्षिणी ध्रुव के निकट स्थित यम तारा से उत्तर क्रान्तिवृत्त के निकट १ सिंहस्य् तारा यमराज या धर्मराज पुत्र युधिष्ठिर है।

पूर्वा फाल्गुनी

देवता-भग, अन्ध सूर्य। ऋग्वेद-अर्जुनि। अर्य्यम्नः पूर्व्वे फल्गुनी (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/१/४/२)

अक्कादियन-कक्कब इलि कु आ (मरुदुख नक्षत्र, भविष्य द्रष्टा देवता)। अरबी-अल् जुब्रा।

इसमें ४, ६ सिंहस्य (δ, θ Leonis) तारा उत्तर-दक्षिण रेखा पर हैं।

दक्षिणोत्तर गते द्वितारके (कालिदास)। ज्योतिष ग्रन्थों में दोनों फाल्गुनी तथा दोनों भाद्रपद नक्षत्रों का आकार खट्वा जैसा लिखा है किन्तु यह खण्ट (खूंट, स्तम्भ) होना चाहिए। २ फाल्गुनी नक्षत्र २ अर्जुन वृक्षों (Terminalia Arjuna) जैसे स्तम्भ हैं। अघासु हन्यन्ते अर्जुन्योः परि उह्यते (ऋक्, १०/८५/१३)

उत्तरा फल्गुनि नक्षत्र

देवता-अर्य्यमन्। यजुर्वेद-अर्जुनी।

यूफ्रेटस-कक्कब लमस सु (ज्वाला नक्षत्र)

अरबी-अल सेर्फा (सिंह पुच्छ)

इसमें २ तारा हैं-२ सिंहस्य (β, Leonis) और १२ कन्यायाः (v, Virginis) जो उत्तर दक्षिण रेखा पर हैं-

दक्षिण-उत्तर मिलित तारका द्वयम् (कालिदास)।

यह १३ अंश उत्तर तथा १५५ अंश पूर्व है (सूर्य सिद्धान्त)।

महाभारत में विराट पुत्र उत्तर का सिंह ध्वज था-

ध्वजं च सैंहम् युयुजे रथे पुनः (महाभारत, ४/६६/१३)

तारा १२ कन्यकायाः को द्रुपद भी कहते हैं।

२सिंहस्य को पश्चिम में डोनाबेला (सिंह लाङ्गूल) कहते हैं।

फाल्गुन मास की पूर्णिमा ने चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है।

३. ह्रद सर्प मण्डल

अक्कादिया-शिर-गल (बृहत् सर्प)
ग्रीक-हाइड्रा (जल सर्प)
अंग्रेजी-वाटर स्नेक (जल सर्प)
यह नक्षत्र मिथुन से वृश्चिक तक है।
ग्रीक कथा के अनुसार हाइड्रा सर्प लर्न के दलदल में था। इसके ७ सिर थे, फिर ९ और अन्त में १०० सिर हुए। तब उसे हरकुलस ने मार दिया। श्रीकृष्ण ने भी यनुबा के ह्रद (दह) में कलिय नाग को मारा था। उसके सिर पर श्रीकृष्ण का चक्र चिह्न होने से उस पर गरुड़ ने आक्रमण नहीं किया। (ब्रह्मवैवर्त्त पुराण, अध्याय ४/१९, भागवत पुराण, अध्याय १०/१६)
इस नक्षत्र का उत्तर खण्ड देवभाग तथा निम्न खण्ड असुर भाग में है।
राहु ने देव वेष बना कर देवों के साथ सोम पान किया। तब विष्णु ने चक्र से उसका सिर काट दिया। सिर राहु ऊपर स्वर्ग चला गया। पूंछ केतु नीचे गिरा जिससे धूमकेतु तथा उल्का पिण्ड बने। (भागवत पुराण, ८/९/२४-२६)।
चन्द्र कक्षा जिन २ विन्दुओं पर क्रान्ति वृत्त को काटती है, वे चन्द्र-पात हैं। जिस पात से चन्द्र उत्तर जाता है, वह राहु और अन्य केतु है।
दक्षिणोत्तरतः अपि एवं पातः राहुः स्वरंहसा।
निक्षिपति एषः विक्षेपम् चन्द्रादीनाम् अपक्रमात्।
(सूर्य सिद्धान्त, २/६)
सिंहिका का पुत्र होने से राहु को सैंहिकेय कहते हैं। राहु (या केतु) स्थान पर चन्द्र होने से वह सूर्य की रेखा में होता है, अतः इसे स्वर्भानु कहते हैं और अमावास्या दिन इससे सूर्य ग्रहण होता है।
यत् त्वा सूर्य्य स्वर्भानुः तमसा अबिध्यत् आसुरः।
अक्षेत्रवित् यथा मुग्धः भुवनानि अदीधयुः। (ऋक्, ५/४०/५)

अश्लेषा नक्षत्र

यूफ्रेटस-कक्सिर-निनक (सर्प मुख)
लैटिन-कापुट हाइड्रि (Caput Hydrae, हाइड्रा का सिर)
रागु के शरीर से सिर का अलग होना अ-श्लेषा है, अर्थात् शरीर से सम्बन्ध कटना। हाइड्रा के सिर पर ५ या ६ तारा का चक्र अश्लेषा नक्षत्र है- २, ६, १०, ११, १३ ह्रद-सर्पस्य (ζ , ε, η, δ, σ, Hydrae)। इसकी पूंछ अश्लेषा से मिल कर अश्लेषा-भव (अश्लेषा पुत्र) है। कालिदास ने इसमें तारा ५, १ को मिला कर ७ तारा को कुत्ते की पूंछ आकृति का कहा है-
मौलिगे भुजगभे श्वपुच्छके भङ्गुराकृतिनि सप्ततारके (ज्योतिर्विदाभरण)
इस मण्डल का पूर्वी तारा अश्लेषा का योगतारा है जिसका स्थान ७ अंश दक्षिण, १०९ अंश पूर्व है। (सूर्य सिद्धान्त)
अनन्त या शेष अवतार लक्ष्मण का जन्म अश्लेषा नक्षत्र में हुआ था।

कालिय तारा

यूफ्रेटिस-अल्ला (सर्प), सेमिटिक-अल फ़र्द (एकाकी)
अंग्रेजी-अल्फर्ड। यह लाल रंग का द्वितीय मान का तारा है।

४. षष्ठांश मण्डल

लैटिन-सेक्स्टन्स।
हेवेलियस ने इसका नाम १६९० में दिया था जिसका अनुवाद किया गया है।

५. वायु यन्त्र मण्डल

लैटिन-ऐण्टिला न्यूमेटिच
ला कैले ने १७५२में इसका नाम दिया था जिसका अनुवाद किया है।

२२. वीथि ६-कन्या

इसमें ८ मण्डल हैं-

१. सप्तर्षि मण्डल-

ऋग्वेद-पितरः, जेन्द अवेस्ता-अमेशा स्पेण्टस, असीरिया-बिलु जक्की मति (प्रेतराज)

ऋग्वेद-सप्तर्षि, जेन्द अवेस्ता-हप्तोइरिंग (सप्त यात्री), लैटिन-सेप्टेन ट्रिओनिस (Septen triones, ७ हल जोतने वाले बैल)
ऋग्वेद-सप्त मयूर्य्यः (७ मयूरी)
ऋग्वेद-ऋक्ष (भालू), रामायण-जाम्बवान् (भालू राजकुमार), फारसी-डुब-कबीर (बड़ा भालू), ग्रीक-आर्क्टोस मेगाले (Arctos Megale, बड़ा भालू), लैटिन-उर्सा मेजर (Ursa Major, बड़ा भालू)
ऋग्वेद-बृहत् रथ (बड़ा रथ), अक्काद-मार्गिद्दा (लमा रथ), लैटिन-प्लास्ट्रम मेजर (बड़ी गाड़ी), चीनी-ति-चेह (सर्वोच्च का रथ)
पौराणिक-शकट (गाड़ी)। अंग्रेजी-Churl's (Charle's) Wain, The Great Wain, The Waggon, The Plough, The Butcher's cleaver.
पौराणिक-सुरुचि (सुन्दर), ग्रीक-कैलिस्टो (Kallisto, The beautiful, सुन्दर), हेलिके (Helike, The Twister, पेंचदार)
इसके तारा हैं-
१. अंगिरा, अरबी-अलिओथ (जोर)
२. क्रतु-अरबी-दुभे (भालू)
३. मरीचि, अरबी-बेनेतनाश (शोक यात्री), या अल कैद।
४. वसिष्ठ, अरबी-मिजर (परीक्षक)
५. पुलह, अरबी-मिरक (सिंह)
६. पुलस्त्य, अरबी-फेक्दा (जंघा)
७. अत्रि, अरबी-मगरेज (पूंछ का मूल)
तारा २०-अरुन्धती (सायं), अरबी-अल्कोर (पक्षी), सैदाक (विश्वस्त)। जेन्द अवेस्ता-आशी।
सूर्य की ७ किरण ७ ऋषि हैं-
सप्त ऋषयः सप्त आदित्य रश्मयः इति वदन्ति नैरुक्ताः (निरुक्त, १/१/५)
ये मरीचीः आदयः सप्त स्वर्गे ते पितरः स्मृताः (वराह पुराण, पितृ सर्ग)
देवाः आदित्या ये सप्त (ऋक्, ९/११४/३)
८ पुत्रों में मार्त्तण्ड को छोड़ दिया और अन्य ७ को आकाश में स्थापित किया।
अष्टौ पुत्रासो अदितेः ये जाताः तन्वः परि।
देवान् उप-प्र ऐत् सप्तभिः परा मार्त्ताण्डम् आस्यत्॥ (ऋक्, १०/७२/८)
(टिप्पणी-इसका अन्य अर्थ है। सौर मण्डल में ६ वषट्कार हैं, उनकी सीमाओं पर ७ आदित्य हैं-३, ६, ९, १५, २१, २७, ३३ अहर्गण पर। यहां तक सूर्य का तेज ब्रह्माण्ड से अधिक है (ऋक्, १०/१८९/३)। उसके बाद ३४वें अहर्गण पर सूर्य का तेज मृत अण्ड जैसा है, अतः उसे मार्त्तण्ड कहते हैं। यह सौर मण्डल की सीमा (३+३० अहर्गण) के बाहर है, अर्थात् अदिति ने इसे छोड़ दिया है।)
सहस्र रश्मियों वाले ऋषि पिता समान अपने तपोबल से सूर्य की रक्षा करते हैं।
सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम्।
ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात्॥ (ऋक्, १०/१५४/५)
सूर्य भी उनके उदय पर अपना ध्वज झुका कर प्रणाम करते हैं-
अधः प्रस्थापिताश्वेन समावर्ज्जितकेतुना।
सहस्र रश्मिना साक्षात् सप्रणामम् उदीक्षिताः॥
(कुमार सम्भव, ६/७)
सप्तर्षि का केन्द्र ध्रुव सूर्य का आधार कहा गया है-
आधारभूतः सवितुर्ध्रुवो मुनिवरोत्तम।

ध्रुवस्य शिशुमारोऽसौ सोऽपि नारायणात्मकः॥
(विष्णु पुराण, २/९/२४)
चित्र शिखण्डि-एकत द्वित त्रिताः च उचुः चित्रशिखण्डिनः।
वयम् हि ब्रह्मणः पुत्राः मानसाः परिकीर्त्तिताः॥ (महाभारत, १२/३३६)
सप्तर्षियों के साथ केवल एक की पत्नी अरुन्धती है-
ऋषीणाम् अरुन्धती (तैत्तिरीय आरण्यक, ३/९)
इनको स्फुलिंग भी कहा है-
त्रिः सप्त विस्फुलिङ्गकाः (ऋक्, १/१९१/१२)
अन्यत्र मयूरी कहा है-
त्रिः सप्त मयूर्य्यः (ऋक्, १/१९१/१४)
सप्तर्षयः मरीचि-अत्रि मुखाः चित्रशिखण्डिनः। (अमरकोष, १/३/२७)
इनको ऋक्ष भी कहा है जिसका अर्थ भालू (रीछ) तथा तारा हैं-
अमी ये ऋक्षाः निहितासः उच्चा (ऋक्, १/२४/१०)
सायण भाष्य-तथा च वाजसनेयिनः आमनन्ति ऋक्षाः। इति ह स्म वै पुरा सप्त ऋषीन् आचक्षत। (शतपथ ब्राह्मण, २/१/१/४ भी)
ऋक्षाः स्तृभिः इति नक्षत्राणाम् (निरुक्त, ३/२९)
यह मण्डल इन्द्र का बड़ा रथ है-
यत्र रथस्य बृहतः निधानम् (ऋक्, ३/५३/६)
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तरायसुक्रतुः। (ऋक्, ८/४६/२७)
यह स्वर्णिम रथ है-रथः हिरण्ययः (ऋक्, ८/३३/१७)
इसका जुआ उठा हुआ है-
एव इत् धूः वृष्णः उत्तरा (ऋक्, ८/३३/१८)
यह वर्णन महाकवि माघ ने भी किया है-
स्फुटतर उपरिष्टात् अल्पमूर्त्तेः ध्रुवस्य।
स्फुरति सुरमुनीनाम् मण्डलं न्यस्तमेतत्॥
शकटम् इव महीयः शैशवे शाङ्र्गपाणेः।
चपल चरणक-अब्ज-प्रेरण-उत्-तुर्ङ्गित-अग्रम्॥
(शिशुपाल वध, ११/३)
बृहस्पति को चित्रशिखण्डि अर्थात् मयूर का पुत्र कहा है-
जीवः आङ्गिरसः वाचस्पतिः चित्रशिखण्डिजः (अमरकोष, १/३/२४)
श्रुतर्वान् (वेदज्ञ) बृहस्पति को ऋक्ष का पुत्र आर्क्ष भी कहा है-
आ अगन्म वृत्रहन् तमम् ज्येष्ठम् अग्निम् आनवम्।
यस्य श्रुतर्वा बृहन् आर्क्षः अनीके एधते॥ (ऋक्, ८/६३/४)
सप्तर्षि के ११, ६, ५, २ तारा (δ, γ, β, α, Ursae Majoris) मन्द प्रकाश के थे। ५, २ सप्तर्षि की रेखा ध्रुव दिशा में है।
इस मण्डल के अन्य तारा-
(क) १०, १४, ९, १९, १५, १२ सप्तर्षि (ι, κ, θ, ν, 23, ο, Ursa Majoris) नीचे गिरते हुए सर्प आकृति में है-
ततः तस्मात् विमानाग्रात् प्रच्युतः च्युतलक्षणः।
प्रपतन् बुबुधे आत्मानम् व्यालीभूतम् अधोमुखम्॥
(महाभारत, ३/१८१/३८)
तारा १० सर्प का मुख है जो ३० नवम्बर की उल्का वर्षा में मुख्य प्रकाश विन्दु है।

(ख) १७ सप्तर्षि (ξ, Ursa Majoris) फल्गुनि या अर्जुनि नक्षत्र के युग्म तारा है जो ६० वर्ष में परस्पर परिक्रमा करते हैं। यह चक्र की आंख है जिसे बाण मारना है-अर्जुन ने द्रौपदी स्वयंवर में उसमें बाण मारा था।
(ग) २० सप्तर्षि (फ्लेमस्टीड सूची का ८०) बहुत छोटा तारा है, जिसे अरुन्धती (लाल सन्ध्या) कहते हैं। यह वसिष्ठ के साथ युग्म नक्षत्र है तथा हिन्दू विवाह में इसका दर्शन शुभ मानते हैं-
हुवा उपत्थाय उपनिष्क्रम्य ध्रुवम् दर्शयति। अरुन्धतीम् च। (गोभिल गृह्य सूत्र, २/३/३-९)
सदावसिष्ठ के साथ रहने के कारण इसे अरबी में अल्कर (Alcar, सेवक) कहते हैं।
पहले अभिजित् ध्रुव तारा था अतः ब्रह्मा को उसका देवता कहा गया।
अवेस्ता के आशी यशत में अरुन्धती को इन ७ तारा की बहन(आशी वागुही) कहा है।

२. सारमेय युगल मण्डल

लैटिन-कैनिस वेनाटिसि (Canes Venatici)
अंग्रेजी-The Grey hounds (शिकारी कुत्ते)
हेवेलियस ने १६९० में इसका नाम दिया था।
वेद में इनको कुक्कुर युग्म या २ कालकञ्ज कहा है।
तारा १ = ज्येष्ठ कालकञ्ज
तारा २ = कनिष्ठ कालकञ्ज।
कालकञ्जा वै नामा असुरा आसन्। ते सुवर्गाय लोकाय अग्निं अचिन्वन्त। -- स इन्द्रो ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टकामुपाधत्त। एषा मे चित्रा नामेति। --- द्वौ उदपततां तौ दिव्यौ श्वानौ अभवताम्। (मैत्रायणी सं, १/६/९)
कालकाञ्जा वै नामा असुरा आसंस्त इष्टका अचिन्वत तदिन्द्र इष्टकाम् अपि उपाधत्त तेषां मिथुनौ दिवम् आक्रमेतां ततः ताम् आबृहत् ते अवाकीर्यन्त ता एतौ दिव्यौ श्वानौ। (कठ सं, ८/१)
तारा १ (α, Canum Venaticorum) को Cor-Caroli या Charle's Heart कहते हैं क्योंकि सर स्कारबोरो के अनुसार यह चार्ल्स-२ के लन्दन आने के पहले रात्रि में बहुत चमक रहा था।

३. करिमुण्ड मण्डल (हाथी का सिर)

ऋग्वेद-ऊर्ण नाभि मण्डल (मकड़ी जाल जैसे नक्षत्र में)
ग्रीक-प्लोकामस (Plokamos = The Tress), लैटिन-कोमा बेरेनिसेस (Coma Berenices = The Tress of Berenice)
अंग्रेजी- ट्रेस (The Tress) = जूड़ा
कालकञ्ज नामक युग्म कुक्कुर के नीचे बहुत छोटे ताराओं का समूह है। पहले मकड़ी (ऊर्णनाभि) समूह था जिसमें हाथी का सिर आ गया (प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भगदत्त का हाथी)। इस नक्षर का नाम गण-देवाः रहा होगा जिसके देवता गणेश हैं। पूर्व में गणेश का उदय होने पर परशु मण्डल के परशुराम का पश्चिम में अस्त होता है (ब्रह्म वैवर्त्त पुराण, ३/४३)।
अलेक्जेण्ड्रिया के ज्योतिषी सामोस ने २४३ ईपू में इसका नाम टोलेमायस की रानी बेरेनिके का जूड़ा रखा था।

कन्या राशि

देवता-बुध
यह सिंह मण्डल के पूर्व भाग से कन्या मण्डल के पश्चिम भाग तक है (१५० से १८० अंश पूर्व तक)। इसमें उत्तरा फल्गुनि के अन्तिम ३ पाद, स्वाती नक्षत्र तथा चित्रा का प्रथम अर्ध भाग है।

कन्या मण्डल

ऋग्वेद-आपः, पुराण-कुमारी। सुमेरिया-अब्नम (Abnam, वर्षा कारक) या इश्तर (Istar, दिव्य कन्या)। सेमिटिक-अश्तोरेथ (Ashtoreth)। ग्रीक-अस्तार्ते (Astarte)।
शतपथ ब्राह्मण-सुकन्या
महाभारत-सावित्री (सूर्य पत्नी)
रामायण-शबरी।, ग्रीक -आर्टेमिस (Artemis, शिकारी स्त्री)

महाभारत-पृथा (महती स्त्री), ग्रीक-पार्थेनोस (Parthenos, कन्या), लैटिन-वर्गो (Virgo, कन्या), अंग्रेजी-वर्जिन (The Virgin)
पुराण-सती, सेमिटिक-अरियाद्री (Ariadne, सती)
पुराण-सुकेशी, ग्रीक-काली-प्लोकामस (Kalli-plokamos, सुन्दर केश वाली)
पुराण-मोहिनी, फारसी-इरेक-हायिम (Erek-hayem, कन्या)।
ज्योतिष-पाथेय
तारा १ (α, Virginis) जिसका नाम तारा है, नील-श्वेत है, ३, ५ तारा (ε, β, Virginis) पीले हैं, तथा तारा ६ (δ, Virginis) लाल रंग का है। अतः इस मण्डल को विचित्र कहा गया है-
अरुण सित हरित पाटल पाण्डु विचित्राः। (ज्योतिष तत्त्व)
तारा १ ललाट पर है, तारा २ नाभितारा है जो युग्म तारा है और १७० वर्ष में परस्पर अरिक्रमा करते हैं। तारा ६, ३ वाम पाद है, तारा ५, ९ दक्षिण पाद है।
कन्या के ठीक नीचे कांस्य (सोम पात्र) तथा सुपर्ण (गरुड़) नक्षत्र हैं।
कन्या राशि देवी माता रूप में है। शिवा ने देवों को कुमारी कन्या रूप में दर्शन दिया था-
कन्या रूपेण देवानाम् अग्रतः दर्शनं ददौ। (विष्णु धर्मोत्तर पुराण, १/१९/६२)
कन्या राशि के मूर्त्ति रूप में उसके वाम हस्त में सूर्य-चन्द्र,शुक्र हैं, दक्षिण हस्त में अपां-नपात् का पुत्र अपां-वत्स (अग्नि रूप ओरियन) है। वह नौका पर है।
जले नौकास्थ-शस्याग्निधारिणी स्त्री (मनोहर)
मध्ये दिवः तरणिं भ्राजमानम् (अथर्व सं, १३/२/३६)
तारा ६ कन्यकायाः का नाम आपः है। तारा ३ कन्यकायाः का नाम शवरी है। बेबीलोन में इस राशि को अबनम = नहर कहते थे। भारत में भी कन्या के अन्त की संक्रान्ति को जल-विषुच संक्रान्ति कहते हैं।
शवरी की कथा रामायण में है। उसके गुरु मतंग थे जिसका अर्थ हाथी है। राम-लक्ष्मण का स्वागत करने के लिए चख कर फल दिए। उसके बाद वह आत्मदाह कर स्वर्ग चली गयी, जहां वह सप्तर्षि के निकट आकाश को प्रकाशित कर रही है-
अनुज्ञाता तु रामेण हुत्वा आत्मानम् हुताशने॥३२॥
ज्वलत् पावक संकाशा स्वर्गम् एव जगाम ह॥३३॥
विराजयन्ति तम् देशम् विद्युत् सौदामिनी यथा॥३४॥
यत्र ते सुकृतात्मानः विहरन्ति महर्षयः॥ ३५॥ (रामायण, ३/७४/३२-३५)
कन्या राशि की तरह शवरी भी हाथ मे फल और अग्नि धारण की थी।
जले नौकास्य शस्याग्निधारिणी (इति दीपिका)
महाभारत में कन्या रूप पृथा और द्रौपदी हैं। पृथा का अर्थ महती स्त्री (ग्रीक पार्थेनस) है। वह पाण्डु की पत्नी थी, जैसा कन्या राशि के विषय में कहा है-
अरुण सित हरित पाटल पाण्डु विचित्राःः। (ज्योतिष तत्त्व)
कन्या के रूप हैं-
उमापृथिवी (निरुक्त, १२/४/९)
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा (देवी माहात्म्यम्)
बाद में द्रौपदी का वर्णन भी है कि वह शूलपाणि शिव की पुत्री श्री रूप में आकाश से अवतरित हुई।
तथा ददर्श पाञ्चालीम् कमलोत्पलमालिनीम्।
वपुषा स्वर्गम् आक्रम्य तिष्ठन्तीम् अर्कवर्च्चसम्॥१-॥
श्रीः एषा द्रौपदीरूपा त्वदर्थे मानुषम् गताः॥१२॥
रति-अर्थम् भवताम् हि एषा निर्म्मिता शूलपाणिना॥१३॥
(महाभारत, १८/४/१०-१३)

अतः ५ कन्यकायाः (β, Virginis) को द्रुपद अर्थात् विश्व वृक्ष की पुत्री द्रौपदी कहा गया।

सुकन्या रूप में वह च्यवन की पत्नी बनी जो शनि ग्रह का रूप है। (शतपथ ब्राह्मण, ४/१/५/१-११६)

सावित्री रूप मं् वह सत्यवान् (अथर्व सं, १०/८/४२) या ऋतवान् (ऋक्, २/२७/४) की पत्नी थी जिसने यम के हाथ से अपने पति का उद्धार किया।

सुकेशी रूप में रुद्र रूपी सूर्य की पत्नी और मंगल की माता थी। (विष्णु पुराण, १/८/६-१०)।

मोहिनी रूप में उसने असुरों को धोखा दे कर अमृत कलश से केवल देवों को पिलाया, पर राहु (हाइड्रा) ने देव रूप धर कर अमृत पी लिया।

चित्रा नक्षत्र

देवता त्वष्टा (बढ़ई, विश्व निर्माता)

अक्कादियन-कक्कब साख, इलु दो-मु (धन का नक्षत्र, आकाश वीथि का देव)

सूर्य सिद्धान्त के अनुसार इसमें कई तारा हैं, किन्तु पुराण अनुसार इसमें एक ही तारा १ कन्यकायाः (α, Virginis) या 'तारा' है, जिसका स्थान १ अंश ३०' दक्षिण, १८० अंश पूर्व है (सूर्य सिद्धान्त)। इसे कोलब्रुक ने स्पिका (Spica) माना है। अतः क्रान्तिवृत्त के शून्य विन्दु के निर्धारण के लिए कई ज्योतिषी चित्रा का स्थान उसके विपरीत १८० अंश मानते हैं।

वेद में भी इसमें एक ही तारा माना है-

इन्द्रस्य चित्रा (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/४/७/४)

त्वाष्ट्रै स्वाहा, चित्रायै स्वाहा (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/४)

चैत्र मास पूर्णिमा को चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है।

'तारा' तारा

अक्कादियन-सूपा (चमकदार), ग्रीक-स्टैकिस (Stachys), लटिन-स्पिका (Spica), अंग्रेजी- Ear of corn (मक्का के बाल)

अन्य नाम-सेमिटिक-अल सीमक (सहारे की लाठी), ग्रीक-माइक्रोस कण्टाटारस (Mikros-Kantatoros, छोटा भाला वाला)

इसके कई रूप हुए-सती, कन्याकुमारी, तारा, सती नक्षत्र, चित्रा ('तारा' सहित अन्य तारा), पूर्ण कन्या रूप में।

प्राचीन स्वाती नक्षत्र-

अक्कादियन-उज (अज = बकरा), सेमिटिक-एन्जू (अज), बेबीलोन-कक्कब लुलिम (अज नक्षत्र)।

ब्राउन के अनुसार इसमें १०, १३, १४ कन्यायाः (ι, κ, λ, Virginis) तारा हैं तथा फारस, भारत में इसका अर्थ है आगे चलने वाला अज।

शवरी तारा

तारा ३, कन्यायाः (ε, Virginis)। ग्रीक-प्रोट्राइजिटर (Protrygiter)। लैटिन-विण्डेमियाट्रिक्स (Vindemiatrix)। अंग्रेजी-Fruit plucking herald (फल तोड़ने का डण्टा)

आप तारा (जल)

६ कन्यायाः = (δ, Virginis)

यह कन्या का बांया घुटना है। यह ९ अंश उत्तर तथा १८० अंश पूर्व है (सूर्य सिद्धान्त)।

अपांवत्स तारा

यह अपां-नपात् (आप् का पुत्र) कीप्रतिमा है। यह ३ अंश उत्तर तथा १८० अंश पूर्व है (सूर्य सिद्धान्त)।

५. सुपर्ण मण्डल

देवता-सविता

अक्कादियन-इम दुगुद-खु (बड़ा तूफानी पक्षी)

सेमिटिक-रामानु-इकब्बिद (भीषण वायु)

फीनिशियन-ओरैब (Ouraib, कौआ)

ग्रीक-कोरैक्स (Korax, कौआ)

लैटिन-कोर्वस (Corvus, कौआ) अंग्रेजी-क्रो (Crow)

यह क्रान्ति वृत्त के ठीक नीचे है तथा आश्विन मास में सूर्य इसके ऊपर आता है। सूर्य रूपी विष्णु सुपर्ण गरुड़ पर सवार होते हैं, और सूर्य इसका देवता है। सुपर्ण को एतश या सूर्य का अश्व कहा है-

सुपर्णो अङ्ग सवितुः गरुत्मान् पूर्वो जातः स उ अस्या नु धर्म। (ऋक्, १०/१४९/३)

यत् ईम् आशुः वहति देव एतशः विश्वस्मै चक्षसे अरम्। (ऋक्, ७/६६/१४)

सुपर्ण का चित्र गरुड़ का है जिसका सिर अश्व का है।

सुपर्ण की माता विनता अर्थात् झुकी हुई है। यह झुकी हुई हाइड्रा है जो अपने बच्चे सुपर्ण को दूध पिला रही है।

इसे यूफ्रेटस में तैमात तथा अथर्व वेद (५/१३/६, ५/१८/४) में भी तैमात कहा है।

हस्त नक्षत्र

देवता-सविता (सूर्य)

यूफ्रेटिस-कक्कब अंशु कुर्रा (पूर्वी पशु का नक्षत्र), इलु इमदुगुद खु (महा वात पक्षी)

तारा १, २, ३, ४, ५ सुपर्णस्य (β, γ, δ, ε, α, Corvi) इस नक्षत्र में हैं। यह मनुष्य के हाथ (हस्त) की तरह है। तारा १ कलाई है, ३, २, ४, ५ इसकी ४ अंगुलियां हैं। मध्य अंगुली नहीं है। इसका योगतारा ३ सुपर्णस्य (δ, Corvi) है जिसका स्थान ११ अंश दक्षिण तथा २०० अंश पूर्व है। ६ सुपर्णस्य (ζ, Corvi) तारा मन्द प्रकाश का युग्म तारा है (प्रकाश माप १, ४)।

६. कांस्य मण्डल (चषक, प्याला)

अक्कादियन-लुत सिर ना (सर्प का प्याला), ग्रीक-क्रेटर (Kreter, प्याला), लैटिन- क्रेटर (Crater, प्याला), फिनिशियन-असोर (Asour, प्याला), सेमिटिक-कर्पत्-सिरि (सर्प का प्याला), अंग्रेजी-कप (The Cup)

यह ग्रीक नाम का अनुवाद है। किन्तु यह राहु की कथा से सम्बद्ध है, जिसने देवता का वेष धर कर मोहिनी से अमृत का पान कर लिया।

प्याला का आधार २ कांसस्य (α, Crateris) तथा उसका बर्तन ५, ४, १ कांसस्य (ζ, γ, δ, θ, Crateris) हैं।

७. त्रिशङ्कु मण्डल

लैटिन-क्रक्स (Crux), अंग्रेजी-साउदर्न क्रास (Southern Cross)

रोयर ने इसका नाम १६७९ में दिया था।

त्रिशङ्कु सूर्य वंश के राजा थे जिनको विश्वामित्र यज्ञ द्वारा सशरीर स्वर्ग पहुंचाना चाहते थे। इन्द्र ने उनको रोका तब वे नीचे गिरने लगे। विश्वामित्र ने उनको गिरने नहीं दिया और अन्तरिक्ष (कम दूरी पर) स्थित हो गये (महाभारत, आदि पर्व, ७१/३४, रामायण, १/५७-६० अध्याय)। विश्वामित्र ने निकटवर्त्ती ताराओं की दूरी मापी होगी जैसा आधुनिक काल में पृथ्वी कक्षा के विपरीत छोर से कोणीय अन्तर माप कर दूरी की माप करते हैं। यह निकट के प्रायः १०० ताराओं के लिये ही किया जा सकता है। त्रिशङ्कु का अर्थ है ३ x १० घात १३ (शङ्कु = १ पर १३ शून्य)। वेद में १ योजन = विषुव वृत्त का ७२० भाग = ५५.५ किलोमीटर। अतः त्रिशंकु तारा(१ त्रिशंकोः - α, Crucis) की दूरी ३ x १० घात १३ x ५५.५ कि.मी. = १७६ प्रकाश वर्ष।

तारा १ त्रिशंकोः (α, Crucis) ब्रह्मर्षि वसिष्ठ हैं तथा २, ३, ४ त्रिशंकोः (β, γ, δ, Crucis) ३ मुख वाले यम का कुक्कुर है। (ऋक्, ८/५५ पर सायण भाष्य)।

८. मक्षिका मण्डल

इसका बेयर ने १८०३ ई. में जो नाम दिया था उसका अनुवाद है।

२३. वीथि ७-तुला

इसके ७ मण्डल हैं-

१. शिशुमार मण्डल

सबसे ऊपर शिशुमार मण्डल या ध्रुव मत्स्य (Ursa Minor) है-
तारामयः भगवतः शिशुमाराकृति प्रभोः।
दिवि रूपं हरेर्यत्तु तस्य पुच्छे स्थितः ध्रुवः॥ (विष्णु पुराण, २/९/१)
इसमें ७ तारा हैं। धर्मतारा या १ शिशुमारस्य इसका सिर तथा २ शिशुमारस्य (α, Ursa Minoris) इसका पुच्छ है। धर्मतारा ध्रुव से ८ अंगुल नीचे है तथा इन्द्रतारा (३ शिशुमारस्य) उससे २ अंगुल दूर शिशुमार के मुख में है।
२. **भूतेश मण्डल** (Bootes)-
यह कन्या नक्षत्र के उत्तर सूर्य की तरह पीले रंग के ताराओं का मण्डल है। चित्र शिखण्डि की वक्र पूंछ को 'तारा' तारा की तरफ बढ़ाया जाय, तो चमकदार तारा निष्ठ्य (Arcturus, α, Bootes) वक्र रेखा के मध्य में दीखेगा। यह पुलह-क्रतु ताराओं की रेखा पर भी है। द्रौपदी-शवरी तारा की रेखा को बढ़ाने पर भी यह दीखेगा। इससे ४ अंगुल दूरी पर 'हिरण्य-चक्र' तारा है।
स्वाति नक्षत्र-
यह चान्द्र कक्षा का १५वां नक्षत्र है। इसमें एक ही कुङ्कुम वर्णका तारा है-निष्ठ्य (Arcturus, α, Bootes)।
कुङ्कुमारुणतरैक तारकः (कालिदास)
चित्रा नक्षत्र के उत्तर में स्वाति है। अहिक प्रकाशित होने के कारण इसे स्वाइ या खर्ग कहते हैं (अन्धकार मिटाने वाला)।
३. तुला मण्डल
अंग्रेजी (लिब्रा, Libra), देवता-शुक्र ग्रह (planet Venus)
यह सौर क्रान्ति वृत्त की सप्तम राशि है। इसमें ५ तारा हैं- १ तुलस्य (सौम्य कीलक, β, Libra) 'तारा' तारा सेउत्तर है। निष्ठ्य, तारा तथा सौम्य कीलक समकोण त्रिभुज बनाते हैं जिसके शीर्ष पर निष्ठ्य तारा है। ३ तुलस्य (तड़ित्) सौम्य कीलक के दक्षिण है और दोनों तुला दण्ड के छोर हैं।२ तुलस्य (याम्य कीलक) तुलादण्ड के मध्य से थोड़ा पश्चिम है। तुला के भार (पलड़ा) २ तारा हैं-६ शार्दूलस्य तड़ित् तारा के दक्षिण-पूर्व है। ३ सर्पस्य सौम्य कीलक के उत्तर-पूर्व है। विशाखा नक्षत्र भी तुला मण्डल में है।
विशाखा या राधा नक्षत्र
देवता-इन्द्राग्नि
विशाखा या राधा चान्द्र कक्षा का १६वां नक्षत्र है।
राधा विशाखा पुष्ये तु सिध्यतिष्यौ (अमरकोष, १/३/२२)
इसका योगतारा है १ तुलस्य (सौम्य कीलक) और अन्य तारा है २ तुलस्य। आधुनिक ज्योतिषी इसमें तोरण आकार में ५ तारा मानते हैं।
तोरणाकृति पञ्चतारके (कालिदास)
जिस मास की पूर्णिमा को चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है, उस मास को भी वैशाख या राध कहते हैं।
४. शार्दूल मण्डल (Lupus)
तुला मण्डल के दक्षिण में शार्दूल मण्डल है। शार्दूल का शरीर हैं-१, २, ३, ४ शार्दूलस्य तथा इसकी पूंछ हैं-५, ६, ७, ८ शार्दूलस्य। इसमें प्राचीन व्याघ्र नक्षत्र है।
प्राचीन व्याघ्र नक्षत्र (वृक)
सम्भवतः इसमें १, २, ३, ४ शार्दूलस्य तारा थे। वेद के अनुसार व्याघ्र नक्षत्र में जन्म लेने वाला वीर सैनिक होता है किन्तु माता पिता कि अत्या करता है।
व्याघ्रेह्न्यजनिष्ट वीरो नक्षत्रजा जायमानः सुवीरः।
स मा वधीत् पितरं वर्धमानो मा मातरं प्र मिनीञ्जनित्रीम्॥
(अथर्व सं, ६/११०/३)
५. महिषासुर मण्डल
अंग्रेजी-सेण्टारस (Centaurus)

इसके २ तारा हैं-१ महिषासुरस्य (α, Centauri) तृतीय प्रकाशमान तारा है। २ महिषासुरस्य (β, Centauri) भगोल का दशम प्रकाशमान तारा है। १ महिषासुरस्य (α, Centauri) पृथ्वी का निकटतम तारा है (३.८ प्रकाश वर्ष दूर)।

६. वृत्त मण्डल (Circinus)

७. धूम्राट् मण्डल (Apus)

२४. वीथि ८-वृश्चिक

इसमें ६ मण्डल हैं-

१. हरिकुलेश मण्डल (Hercules)

नीलमणि तारा के पश्चिम भाग और भूतेश मण्डल के पूर्व में हरिकुलेश मण्डल है। इसमें ३ पद्म (कमल) हैं। भीतरी भाग में ८, १, २, ७, १५ हरिकुलेशस्य, मध्य में १२, ५, ९ हरिकुलेशस्य, तथा बाह्य भाग में ४, १६, ३, १२ हरिकुलेशस्य तारा हैं। सौर मण्डल ग्रहों के साथ १२ हरिकुलेशस्य की तरफ बढ़ रहा है (प्रति विपल ०.४ सेकण्ड १० किलोमीटर)। २ हरिकुलेशस्य के युग्म तारा ३५ वर्ष में परस्पर परिक्रमा करते हैं।

२. उत्तर किरीट मण्डल (Corona-Borealis)

उत्तर किरीट मण्डल हरिकुलेश तथा भूतेश मण्डलों के बीच है। यह कण्ठहार आकार में निष्ठ्य तारा के उत्तर-पूर्व में है।

३. सर्प मण्डल (Serpens)

उत्तर किरीट मण्डल के दक्षिण में महासर्प है तथा उसका फण है।

४. वृश्चिक मण्डल (Scorpius)

यह क्रान्ति वृत्त की अष्टम राशि है तथा वृश्चिक (बिच्छू) आकार में है। इसमें ३ नक्षत्र हैं-अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल।

अनुराधा नक्षत्र

देवता-मित्र
यह चान्द्र कक्षा का १७वां नक्षत्र है। सर्प आकार में इसके ४ तारा हैं।
सर्पाकृति सप्ततारामयं (कालिदास) बलिनिमतारा चतुष्टयात्मकं (दीपिका टीका)
यह विशाखा नक्षत्र से ७ अंगुल दक्षिण-पूर्व है। विशाखा के पूर्व ८, ५, ११, १८ वृश्चिकस्य वृश्चिक के मुख पर हैं। सर्प आकृति के ४ तारा अनुराधा नक्षत्र हैं, जो राधा (विशाखा) के बाद आता है। ५ वृश्चिकस्य (δ, Scorpii) सबसे चमकदार और योगतारा है।

ज्येष्ठा नक्षत्र

देवता-इन्द्र या ज्येष्ठ
ज्येष्ठा चान्द्र कक्षा का १८वां नक्षत्र है। वराह (सूअर) के दांत आकृति में इसके ३ तारा हैं-
शूकरदन्ताकृतितारकत्रितयात्मिका (कालिदास)
वलयाकृति (दीपिका टीका)
यह अनुराधा के दक्षिण पूर्व है। ज्येष्ठा के ३ तारा पक्षी आकृति में वृश्चिक की गर्दन पर हैं-१, ९, १० वृश्चिकस्य। इसमें बीच का तारा प्रथम माप का है तथा तेज प्रकाश में १७वां है। इसका योगतारा १वृश्चिकस्य या रोहिणी (Antares, α, Scorpii) है। ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा को चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है। इसमें जन्म लेने वाला अपने ज्येष्ठ भाई का नाश करता है-
ज्येष्ठघ्न्यां जातो विचृतोर्यमस्य (अथर्व सं, ६/११०/२)

मूल नक्षत्र

देवता-निर्ऋति (यम या राक्षसेश्वर)
मूल चान्द्र कक्षा का १९वां नक्षत्र है। ब्रह्माण्ड या आकाशगंगा का केन्द्र इस दिशामें है जिससे सर्पाकार भुजायें निकली हैं, अतः इसे मूल बर्हणि (बढ़नी = झाड़ू) कहते हैं। या इसमें जन्म लेने वाला अपने मूल या परिवार को नष्ट कर देता है (मूल को झाड़ू की तरह साफ करता है। इसे विचृति भी कहा गया है-
विचृतोर्यमस्य मूलबर्हणात् परि पाह्येनम्।
अत्येनं नेषद् दुरितानि विश्वा दीरायुत्वाय शतशारदाय।
(अथर्व सं, ६/११०/२)

निर्ऋत्यै मूलबर्हणी। प्रतिभञ्जन्तः परस्तात्। प्रतिशृणन्तो ऽवस्तात्। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/१७)

इसमें शंख आकृति के ५ तारा हैं-२, ७, ३, १४, ९ वृश्चिकस्य। विचृत नक्षत्र के २ तारा थे, जो शंख के मुख पर थे-२, ७ वृश्चिकस्य। इनको श्याम और शबल तारा कहा गया है जो यम के २ दूत हैं तथा यमपथ या छायापथ पर हैं। श्याम तारा मूल नक्षत्र का योग तारा है।
अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा।
अथा पितॄन् सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति॥१०॥
यौ ते श्वानौ यमरक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन् स्वस्ति चास्मा अनमीवञ्च धेहि॥११॥
(ऋक्, १०/१४/१०-११, अथर्व, १८/२/११-१२)

हे प्रेत पितर! आप ४ आंखों वाले, श्वाव-शबल (चितकबरे) सारमेय नाम से प्रसिद्ध दोनों कुत्तों से बच कर जाइये। तुम्हें उत्तम पितृलोक मिले जहां के पितर यम के साथ आनन्दित होते हैं।

५. दक्षिण त्रिकोण मण्डल (Triangulum Australis)

६. मानदण्ड मण्डल (Norma)

२५. वीथि ९-धनु राशि

इसमें ७ मण्डल हैं-

१. तक्षक मण्डल (Draco)

यह शिशुमार तथा सप्तर्षि मण्डल के मध्य है तथा शिशुमार को घेरे हुए है। १ तक्षकस्य (स्पर्शमणि तारा = γ, Draconis) नीलमणि तारा के उत्तर पश्चिम १० अंगुल पर है। १२ तक्षकस्य इसकी पूंछ में ध्रुव तारा के निकट है। कलियुग आरम्भ (३१०२ ईपू) में ७ तक्षकस्य ध्रुवतारा था जो इन २ तारा के बीच है-३ शिशुमारस्य (इन्द्र) तथा ४ सप्तर्षिह् (वसिष्ठ)। ध्रुव तथा १ तक्षकस्य के बीच का कदम्ब विन्दु तक्षक की कुण्डली में है।

२. वीणा मण्डल (Lyra)

यह हरिकुलेश मण्डल के पूर्व तथा छायापथ के पश्चिम है। १ वीणायाः (नीलमणि तारा या Vega = α, Lyrae) इसका मुख्य तारा है तथा आकाश में चतुर्थ सबसे प्रकाशित ताआ है। २, ३, ५, ६ वीणायाः से समान्तर चतुर्भुज बनता है। प्राचीन अभिजित् नक्षत्र वीणा मण्डल में था-

तारकात्रयात्मकष्टङ्गाटकाकृति (ज्योतिषम्)

प्राचीन अभिजित् नक्षत्र

इसमें ३ तारा हैं-१, ४, ५ वीणायाः जो शृङाटक (सिंघाड़ा) आकार में है। इसका योगतारा नीलमणि है। यह चन्द्र कक्षा से बहुत उत्तर है तथा ब्रह्मा के काल में यह ध्रुवतारा था, अतः इसका देवता ब्रह्मा हैं।

३. सर्पधारी मण्डल (Ophiuchus)

यह हरिकुलेश मण्डल के दक्षिण है।

४. धनुः मण्डल (Sagittarius)

देवता-बृहस्पति ग्रह

पूर्वार्ध मनुष्याकार शेषार्धश्चाकार धनुर्धारी पुरुषः (जातक चन्द्रिका)

धनुस्तु रङ्गजघनो दीप्यमानो धनुर्धरः। वाजिशूरास्त्रविद्वीरः स्थायी गजरथादिषु॥५६॥

मृगास्यो मकरो ब्रह्मन् वृषस्कन्धेक्षणाङ्गजः। मकरोऽसौ नदीचारी वसते च महोदधौ॥५७।

रिक्तकुम्भश्च पुरुषः स्कन्धधारी जलाप्लुतः। द्यूतशालाचरः कुम्भः स्थायी शौण्डिकसद्मसु॥५८॥

वामन पुराण, ५/५६-५८)

धनु क्रान्ति वृत्त की नवम राशि है। यह छाया पथ के पश्चिमी भाग में मूल नक्षत्र से उत्तर-पूर्व है। इसमें प्रथम या द्वितीय मान का कोई तारा नहीं है। इसके २ नक्षत्र चन्द्र कक्षा में हैं-पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़।

पूर्वाषाढ़ नक्षत्र-

देवता-आपः

पूर्वाषाढ़ चन्द्र कक्षा का २०वां नक्षत्र है। इसमें खाट (मञ्च) या सूप आकार के ४ तारा हैं।

सूर्पाकृति चतुस्तारकात्मिका (ज्योतिषम्)

गजदन्ताकृति द्वितारकात्मिका (ज्योतिषम्)

सूर्पमर्त्तिनि शिरोगते चतुस्तारके करिकरोरुणारिमे (कालिदास)

मूल नक्षत्र से १० अंगुल पूर्व में आकाशगंगा के पूर्व तट पर पूर्वाषाढ़ है। इसके तारा हैं-१, ६, ४, ३ धनुषः जो आयताकार हैं। उत्तर के २ तारा छायापथ में हैं। सबसे उत्तर का तारा ३ धनुषः इसका योगतारा है जिसे तुलसी भी कहते हैं। आषाढ़ पूर्णिमा को चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है। इस मास में वर्षा आरम्भ होने से बाहर यात्रा नहीं होती है और घर के भीतर व्यायाम होता है। अतः चौकोर व्यायाम स्थान को आषाढ़ा (अखाड़ा) कहते हैं।

उत्तराषाढ़ नक्षत्र

देवता-विश्वदेवाः

उत्तराषाढ़ चन्द्र कक्षा का २१वां नक्षत्र है। यह पूर्वाषाढ़ से १० अंगुल उत्तर-पूर्व में है। इसके ४ तारा सूप आकृति में हैं-११, ४, ९, २ धनुषः।

सूर्पाकृति तारा चतुष्टयात्मकं (कालिदास)

गजदन्तवत् अष्टतारामयं (दीपिका टीका)

अन्य मत से ४, २, ८ धनुषः सूअर दांत की तरह हैं। २ धनुषः इसका योगतारा है। इसे लंका भी कह सकते हैं।

५. दक्षिण किरीट मण्डल (Corona Australis)

६. दूरवीक्षण मण्डल (Telescopium)

७. वेदी मण्डल (Ara)

२६. वीथि १०-मकर राशि

इसमें १० मण्डल हैं-

१. हंस मण्डल (Cygnus)

वीणा मण्डल के पूर्व में तारा हंस हैं। हंस आकाश में दक्षिण-पूर्व दिशा में उड़ रहा है। तारा हंस के पुच्छ में १ हंसस्य (α, Cygni) तारा है। ३, २, ५ हंसस्य हंस के २ पक्ष हैं। ४ हंसस्य हंस का मुख है (हंसमुख तारा)। हंस-मुख तारा नीलमणि तथा २ वीणायाः को मिलाने वाली रेखा पर है यदि इसे दक्षिण पूर्व दिशा में बढ़ायें। इसका पुच्छ तारा पुलह-धर्मतारा रेखा को बढ़ाने पर है। महाभारत (६/१२०/९६-९७) के अनुसार सप्तर्षि हंस रूप धारण कर उड़ गये थे।

२. शृगाल मण्डल (Vulpecula)

हंस मण्डल के दक्षिण में शृगाल मण्डल है। महाभारत (१२/३) में शार्दूलराज के मन्त्री शृगाल के स्वर्ग जाने के विषय में लिखा है, पर उसका स्थान नहीं दिया है।

३. बाण मण्डल (Sagitta)

शृगाल मण्डल के दक्षिण सोमधारा में बाण मण्डल है।

४. गरुड़ मण्डल (Aquila) यह सोमधारा में बाण मण्डल से दक्षिण है। गरुड़ ने अपनी माता विनता को मुक्त कराने के लिए अमृत कलश चुराया था (महाभारत, १/३३/१०) कृशानु देव ने उस समय गरुड़ को एक बाण मारा था-

अव यत् श्येनो अस्वनीदध द्योर्वि यद्यदि वात ऊहुः पुरन्धिम्।

सृजत् यत् अस्मा अव ह क्षिपज्यां कृशानुरस्ता मनसा भुरण्यन्॥३॥ (ऋक्, ४/२७/३)

याभिः कृशानुमसने दुवस्यथो जवे याभिर्यूनो अर्वन्तमावतम्।

मधु प्रियं भरथो यत् सरड्‌ग्यस्ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम्॥ (ऋक्, १/११२/२१)

बाण आकार का श्रवण नक्षत्र गरुड़ मण्डल में है।

श्रवण नक्षत्र

देवता-गरुड़वाहन विष्णु

श्रवण चन्द्र कक्षा का २२वां नक्षत्र है। यह उत्तराषाढ़ नक्षत्र से २० अंगुल पूर्व-उत्तर है। इसमें ८, १, २ गरुडस्य तारा बाण आकृति के हैं।

तारकात्रयमिते शराकृतौ (कालिदास)

यह तारा-शर सोमधारा के पूर्व नीलमणि के सम्मुख है। तारा १ गरुडस्य (Altair-α, Aquilae) आकाश में ११वां सबसे प्रकाशमान पीले रंग का तारा है। यह श्रवण का योगतारा है। इसे वासुदेव भी कहते हैं। यह चन्द्र कक्षा के बहुत उत्तर स्थित है। श्रावण पूर्णिमा के दिन चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है।

५. श्रविष्ठा मण्डल (Delphinus)

यह यह गरुड मण्डल के पूर्व तथा छायापथ के पूर्व भाग में है। इसमें धनिष्ठा नक्षत्र है।

धनिष्ठा नक्षत्र

देवत-वसु

यह चन्द्र कक्षा का २३वां नक्षत्र है। इसमें मृदङ्ग आकृति के ५ तारा हैं-१, २, ३, ५, ६ श्रविष्ठस्य।

मस्तकोपरि समागते मण्डलाकृति पञ्चतारके (कालिदास)

यह श्रवण नक्षत्र से प्रायः ७ अंगुल पूर्व है। मृदङ्ग ध्वनि के कारण इसका नाम धनिष्ठा हुआ। इसका योगतारा १ श्रविष्ठस्य (β, Delphini) है जो चन्द्र कक्षा से बहुत उत्तर है।

६. मकर मण्डल- (Caprocornus)

मकर क्रान्ति वृत्त की दशम राशि है। मकर का मुख हरिण का तथा पीछे का भाग मत्स्य है। यह पश्चिम की तरफ मुंह किये है। इसमें प्रथम या द्वितीय मान का कोई तारा नहीं है, अतः इसे भी रात्रि नक्षत्र कहते हैं। नीलमणि और वासुदेव तारा रेखा को उत्तर-पूर्व में बढ़ाने पर यह मकर मण्डल को काटेगी। उत्तराषाढ़ नक्षत्र के पूर्व ३ छोटे तारा समकोण त्रिभुज आकृति में हैं-७, ८, ९ मकरस्य। इस त्रिभुज का शीर्ष दक्षिण में है। चतुर्थ श्रेणी का पीला युग्म तारा त्रिभुज के उत्तर तथा अन्य युग्म तारा उसके उत्तर है। दोनों युग्म तारा मकर का शृङ्ग (सींग) बनाते हैं। मकर पुच्छ में त्रिभुज आकृति में कई तारा हैं जो मकर सिर के उत्तर हैं।
इस मण्डल के तारा बहुत छोटे हैं अतः इनकी नक्षत्र में गणना नहीं है।
मकर मण्डल में २ नक्षत्र हैं-श्रवण, धनिष्ठा। मकरासुर ब्रह्मा से वेद छीन कर समुद्र में छिप गया था। विष्णु ने मत्स्य रूप धारण कर वेदों का उद्धार किया। (पद्म पुराण, ५/९२)

७. अणुवीक्षण मण्डल (Microscopium)

अणुवीक्षण मण्डल मकर मण्डल के दक्षिण है।

८. सिन्धु मण्डल (Indus)

सिन्धु मण्डल अणुवीक्षण मण्डल के दक्षिण है।

९. मयूर मण्डल (Pavo)

मयूर मण्डल सिन्धु मण्डल के दक्षिण है। विश्वामित्र ने दक्षिण गोल में भी एक सप्तर्षि मण्डल बनाया था (रामायण, १/६०/२१)। मयूर मण्डल में देवभाग के चित्रशिखण्डि जैसे सप्तर्षि थे।

१०. अष्टांश मण्डल (Octans)

अष्टांश मण्डल में षष्ठ मान के कुछ नक्षत्र हैं। तारा २ अष्टांशस्य याम्य ध्रुव के बहुत निकट है तथा अभी दक्षिण ध्रुव मानते हैं।

२७-वीथि ११-कुम्भ राशि

इसमें ८ मण्डल हैं-

१. शेफालि मण्डल (Cepheus)

इसमें प्रथम या द्वितीय मान का कोई तारा नहीं है। शेफालि मण्डल हंस के उत्तर पूर्व है तथा हंस से शिशुमार मण्डल तक फैला है। इसके प्रथम २ ताराओं को मिलाने वाली रेखा उत्तर ध्रुव को छूती है। उत्तर दिशा में फैलाने पर शेफालि मण्डल छायापथ का अंश होगा।

२. गोधा मण्डल (Lacerta)

गोधा मण्डल शेफालि मण्डल के दक्षिण है।

३. पक्षिराज मण्डल (Pegasus)

श्रविष्ठा मण्डल के पूर्व वर्ग आकृति में ४ तारा हैं, जो पक्षिराज के ४ पंजे हैं। इस वर्ग के दक्षिण पश्चिम एक चमकदार तारा २ पक्षिराजस्य (Markab, α, Pegasi) है। प्रायः १० अंगुल पश्चिम पश्चिम-दक्षिण अन्य चमकदार तारा १ पक्षिराजस्य है जो पक्षी के सिर स्थान पर है।
पक्षिराज मण्डल में २ नक्षत्र हैं-पूर्वभाद्रपद और उत्तर भाद्रपद।

पूर्वभाद्रपद नक्षत्र या प्रौष्ठपद
देवता-अज एकपाद्
पूर्व भाद्रपद चन्द्र कक्षा का २५वां नक्षत्र है। यह धनिष्ठा के पूर्व में है। इसमें घण्टा आकृति में २ तारा हैं।
भारमूर्तिमृतिकोपरिस्थिते पूर्व्वभाद्रपदभे द्वितारके (कालिदास)
उत्तर भाग में ३ पक्षिराजस्य (β, Pegasi) इसका योगतारा है। भाद्र पूर्णिमा के दिन चन्द्र इस नक्षत्र में रहता है।

उत्तरभाद्रपद नक्षत्र
देवता-अहिर्बुध्न
उत्तर भाद्रपद चन्द्र कक्षा का २६वां नक्षत्र है। इसमें भी घण्टा आकृति में २ तारा हैं, जो पूर्वभाद्रपद से ८ अंगुल पूर्व हैं। यह पक्षिराज मण्डल के चतुर्भुज के पूर्व है। उत्तर में १ ध्रुवमातुः (γ, Pegasi) इसका योगतारा है। दक्षिणी तारा ४ पक्षिराजस्य है।

४. अश्वतर मण्डल (Equuleus)

यह पक्षिराज मण्डल के दक्षिण पश्चिम है।

५. कुम्भ मण्डल (Aquarius)

देवता-गृध्र वाहन शनि

कुम्भ क्रान्ति मण्डल की ११वीं राशि है। यह पक्षिराज मण्डल के दक्षिण है। इस मण्डल में १, २ या ३ मान का कोई तारा नहीं है अतः इसे रात्रि सूचक मानते हैं। इसमें शततारका (शतभिषक्) नक्षत्र स्थित है।

शततारक या शतभिषा नक्षत्र

देवता-इन्द्र

शततारक चन्द्र कक्षा का २४वां नक्षत्र है। इसमें वृत्त आकार में १०० बहुत छोटे तारा हैं। यह पूर्वभाद्रपद से बहुत दक्षिण है। १०० ताराओं के केन्द्र में ७ कुम्भस्य (λ, Aquarii) इसका योगतारा है। इस तारा में चन्द्र रहने पर कोई बीमार हो तो उसे १०० वैद्य भी ठीक नहीं कर सकते हैं। अतः इसका नाम शतभिषक् पड़ा। (भिषक् = वैद्य)।

६. दक्षिण मीन मण्डल (Pisces Australis)

या महामीन मण्डल

महामीन मण्डल कुम्भ राशि के दक्षिण और मकर राशि के दक्षिण पूर्व है। इसका मुख्य तारा १ दक्षिणमीनस्य या मत्स्यमुख (Fomal-haut, α, Piscis Austrini) है जो महामीन के मुख स्थान पर है। यह द्वितीय मान के ताराओं में चमकदार है। पूर्वभाद्रपद के २ तारा को मिलाने वाली रेखा को दक्षिण बढ़ाने पर इस तारा की दिशा में होगा। पूर्व दिशा में मुंह किये चन्द्र मस्य के मुख स्थान पर मत्स्यमुख है।

७. सारस मण्डल (Grus)

सारस मण्डल दक्षिण मीन मण्डल के दक्षिण है।

८. चञ्चुभृत् मण्डल (Toucan)

चञ्चुभृत् मण्डल सारस मण्डल के दक्षिण है।

२८. वीथि १२-मीन राशि

इसमें ७ मण्डल हैं।

१. काश्यपीय मण्डल-यह मण्डल १२वीं वीठि के ऊपरी भाग में है तथा आकाश गंगा की धाराओं में है।

मनुर्विवस्वतः पुत्रः श्राद्धदेव इतिश्रुतः।
सप्तमो वर्तमानो यस्तदपत्यानि मे शृणु॥१॥
कश्यपोऽत्रिर्वसिष्ठश्च विश्वामित्रोऽथ गौतमः।
जमदग्निर्भरद्वाज इति सप्तर्षयः स्मृताः॥५॥

(भागवत पुराण, ८/१३/, ५) सप्तर्षियों की जटा आकाशगंगा में तैर रही है-

ततः सप्तर्षयो यस्याः प्राणायामपरायणाः।
तिष्ठन्ति वीचिमालाभिरुह्यमान जटा जले॥

(विष्णु पुराण, २/८/११२)

स्वायम्भुव मन्वन्तर के मरीचि आदि सप्तर्षि आकाशगंगा से दूर हैं, किन्तु वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षि इस मण्डल में हैं। अतः इसे काश्यपीय मण्डल नाम दिया है।

यह नक्षत्र ध्रुवतारा के निकट है। ध्रुव की माता सुनीति इस मण्डल में है-

स च स्वर्लोकमारोक्ष्यन् सुनीतिं जननीं ध्रुवः।
अन्वस्मरदगं हित्वा दीनं यास्ये त्रिविष्टपम्॥३२॥
इति व्यवसितं तस्य व्यवसाय सुरोत्तमौ।
दर्शयामासतुर्देवीं पुरो यानेन गच्छतीम्॥३३॥

(भागवत पुराण, ४/१२/३२-३३)

इसके ५ मुख्य तारा अंग्रेजी के अक्षर W की आकृति में हैं। अतः इसे त्रिशङ्कु का रथ कहा गया है-

तं त्रिपृष्ठे त्रिवन्धुरे रथे युञ्जन्ति यातवे। ऋषीणां सप्त धीतिभिः॥ (ऋक्, ९/६२/१७)

१७७२ ई में इस मण्डल में एक नये तारा का उदय हुआ था जो दिन में भी दीखता था। टाइको ब्राहे ने इसका वर्णन किया था।

२. ध्रुवमाता मण्डल (Andromeda)

यह काश्यपीय मण्डल के दक्षिण में है जिसका नाम शास्त्रों में नहीं है, पर भागवत कथा के अनुसार इसका नाम ध्रुवमाता रख दिया है। इसके कुछ अंश पक्षिराज और मीन मण्डलों में हो सकते हैं। इसका मुख्य तारा १ ध्रुवमातुः (प्रतिष्ठा तारा) पक्षिराज मण्डल में है। यह उत्तरभाद्रपद नक्षत्र का योगतारा है। २ ध्रुवमातुः मीन मण्डल में है तथा रेवती नक्षत्र के पुच्छ में है।

३. मीन मण्डल (Pisces)

देवता-बृहस्पति ग्रह।

मीन क्रान्तिवृत्त की १२वीं राशि है। इसमें १, २, ३ मान का ओई तारा नहीं है। इसके रेवती नक्षत्र की मत्स्य आकृति के कारण मीन नाम हुआ है। इसके शीर्ष पर नीहारिका M32 है।

रेवती नक्षत्र

देवता-पूषा

रेवती चन्द्र कक्षा का २७वां नक्षत्र है। इसमें मत्स्य आकृति के ३२ तारा हैं। यह उत्तर भाद्रपद से ४ अंगुल पूर्व है। मत्स्य कामुंह पश्चिम दिशा में है तथा यह उत्तर गोल में है। मत्स्य पुच्छ में ६, ४, ५ मीनस्य तारा धनुष आकृति में हैं। सबसे पूर्व में ६ मीनस्य (मूल-कीलक तारा) है। मत्स्य का शिर ३ तारा से बना है-७, ५, १४ ध्रुवमातुः। रेवती पृष्ठ पर २ ध्रुवमातुः और ८ मीनस्य तारा हैं। रेवती के पेट में ९, ४, १०, १२ मीनस्य तारा हैं। ६ मीनस्य (ζ, Piscicum) इसका योगतारा है जो रेवती की पूंछ में है।

४. भास्कर मण्डल (Sculptor)

यह मीन मण्डल के दक्षिण में है।

५. सम्पाति मण्डल (Phoenix)

सम्पाति मण्डल भास्कर मण्डल के दक्षिण में है।

६. ह्रद मण्डल (Hydrus)

ह्रद मण्डल सम्पाति मण्डल के दक्षिण में है।

७. ग्राव मण्डल (Nebecula Minor)

ग्राव मण्डल ह्रद मण्डल के दक्षिण में है।